ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यूड अर्धवार्षिक शोध पत्रिका

वर्ष-12, अंक-01 जनवरी-जून-2020

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकण्टक (म.प्र.)

कुलगीत

तपोभूमि यह ऋषि मुनियों की अति पावन अभिराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम।।

यहाँ नर्मदा की लहरों में संस्कृति का अनुप्रास।
यह भारत की अमर संपदा का पूरा इतिहास।।
यह स्कंदपुराण निरूपित अद्भुत रेवाखण्ड।
युग युग से महिमामंडित यह वंदित और अखंड।।
जनजातीय समाज यहाँ पर कर्मशील निष्काम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यहाँ नर्मदा, सोन, जोहिला और अरण्डि प्रवाहित।
विद्या की देवी की पावन वीणा यहाँ स्वरासित।।
आदि शंकराचार्य, कपिल ने यहीं किया था ध्यान।
साधक, संत, कबीर पा रहे प्रज्ञा का वरदान।।
यहीं विश्व की मानवता को मिल पाता विश्राम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यहाँ सुलभ है जनजीवन की परिपाटी का ज्ञान।
भारत की भाषा परिभाषा का अद्भुत अनुमान।।
यहाँ सूक्ष्म स्थूल दीखता, कण-कण ऊर्जावान।
मेघदूत सर्वदा निहारे साल, चीड़, वट, आम।।
सदा अमरकण्टक में गुंजित दिव्य सदाशिव नाम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

इस अंचल से जुड़ी हुई हैं जन-जीवन की आशा।
पूर्ण करेगा विद्यासागर जन-जन की अभिलाषा।।
वन औषधि की प्रचुर संपदा का यह सुंदर कोष।
संस्कृति और जीवन मूल्यों का यह करता उद्घोष।।
यहाँ सिद्धि की सतत् चेतना बहती है अविराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

यह धर्म भूमि, यह कर्म भूमि, जीवन दर्शन की मर्म भूमि।
यह ज्ञान भूमि, यह ध्यान भूमि, यह सतत् लक्ष्य संधान भूमि।।
यह बोध भूमि, यह शोध भूमि, यह ''चरैवेति'' अनुरोध भूमि।
यह तत्व भूमि, यह सत्व भूमि, यह मेधा की अमरत्व भूमि।।
गुप्त नर्मदा से अभिसिंचित विश्व विदित गुरुधाम.....

तपोभूमि यह ऋषि मुनियों की अति पावन अभिराम।
विद्या के आलोक पुंज को शत शत बार प्रणाम....।।

वैशाख शुक्ल पक्ष पूर्णिमा (बुद्ध पूर्णिमा)

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
कुलपति
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकण्टक (म.प्र.)

ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यूड अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
वर्ष-12, अंक-01 जनवरी-जून-2020

संरक्षक
प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
कुलपति

प्रधान सम्पादक
प्रोफेसर राकेश सिंह

कार्यकारी सम्पादक
डॉ. ज्ञानेंद्र कुमार राउत
डॉ. राघवेन्द्र मिश्रा

सम्पादक मण्डल
डॉ. गौरी शंकर महापात्र
डॉ. प्रशान्त कुमार सिंह
डॉ. उदय सिंह राजपूत
डॉ. ललित कुमार मिश्र
डॉ. देवेन्द्र कुमार सिंह
डॉ. जयन्त कुमार बेहेरा
डॉ. एन. सुरजीत सिंह
डॉ. ऋचा चतुर्वेदी
शिवाजी चौधरी

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकण्टक, मध्य प्रदेश

© इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकण्टक, मध्य प्रदेश- 484887

सहयोग राशि: 300.00

प्रकाशक :
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय,
अमरकण्टक, मध्य प्रदेश- 484887
http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx

मुद्रक:

डिज़ाईन :
विनोद वर्मा
सहायक प्राध्यापक
व्यावसायिक शिक्षा विभाग, इं.गां.रा.ज.वि.वि.

ध्यानार्थ:

मेकल मीमांसा राष्ट्रभाषा हिंदी में गुणवत्तापरक एवं मौलिक शोधपत्रों के प्रकाशन के माध्यम से ज्ञान के प्रदीपन और विस्तार हेतु संकल्पित है | मेकल मीमांसा डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यू पद्धति का अनुसरण करती है | पत्रिका लेखकीय गरिमा का सम्मान करती है | पत्रिका में प्रकाशित विचार और विश्लेषण लेखकों द्वारा प्रस्तुत हैं जो विषयवस्तु की मौलिकता एवं प्रमाणिकता हेतु उत्तरदाई है |

कुलपति की कलम से

राष्ट्रीय शिक्षा नीति जिसका स्वरूप वैश्विक है और आत्मा भारतीय है, आने के साथ ही शिक्षा प्रक्रिया और ज्ञान के सृजन, संवर्धन, परिमार्जन और विसरण के मानदंडों में निरंतर सकारात्मक परिवर्तन हो रहे हैं | विद्यमान सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का समाधान शिक्षा के माध्यम से ही संभव है | वैश्विक आपदा के निराकरण और बदलते अंतर्राष्ट्रीय समीकरण के सापेक्ष समर्थ होकर व्यवहार करने की दिशा में बढ़ने के लिए शिक्षा ही सहायक है | शिक्षा से ही सामयिक अपेक्षाओं की पूर्ति संभव हैं। जीवन मूल्यों का संरक्षण, प्रसार और समावेशन के लिए नई शिक्षा नीति में विधान है | आधुनिक प्रौद्योगिकी ने ज्ञान के लिए स्रोत, सुगमता और चुनौती सभी की परिस्थितियां उत्पन्न की है | ज्ञान की पारम्परिक सीमाओं का विलयन हो रहा है और अंतर्विषयक चिंतन एवं सृजन के नए मानक स्थापित हो रहे हैं | ज्ञान की मौलिकता, नवोन्मेष, उपादेयता एवं नई वैज्ञानिक तकनीक के साथ समन्वय के माध्यम से जनकल्याण सुनिश्चित करने के सूत्र नई शिक्षा नीति में निहित है | शिक्षा की गुणवत्ता और हितधारिता के स्तर को बनाए रखने में मौलिक शोध अनिवार्य है तथा इस अर्जित ज्ञान के विसरण एवं सार्वजनिक प्रकाशन के लिए शोध पत्रिकाओं का विशेष महत्त्व है |

भारतीय मनीषा में निहित ज्ञान परंपरा और मेधा के सृजन की फलश्रुति हिन्दी में होने से यह देश की संप्रभुता, अस्मिता और आत्म-गौरव संवर्धन का भी हेतु सिद्ध होता है। ज्ञान-विज्ञान के जन सामान्य तक प्रसरण के लिए हिन्दी में प्रकाशन आवश्यक और उपादेय है । हिन्दी में शोधपरक प्रकाशनों की उपलब्धता की दिशा में 'मेकल-मीमांसा' शोध पत्रिका का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण कदम है | इससे ज्ञान का वह अतुलनीय भंडार सभी के लिए उपलब्ध हो सकेगा जो हिंदी में ही विकसित एवं

अभिव्यक्त हो पाता है | मेकल मीमांसा शोध पत्रिका का प्रकाशन इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक की ओर से इस अंतर को पाटने का एक प्रयास है | यह शोध पत्रिका मौलिक शोध को प्रकाश में लाने का ऐसा मंच है जहाँ गुणवत्ता के अतिरिक्त अन्य कोई आग्रह स्वीकार्य नहीं है |

यह शोध पत्रिका राष्ट्रभाषा हिंदी में बहुविषयक एवं अंतर्विषयक शोध को बढ़ावा देती है एवं मौलिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, मानविकी, कला, दर्शन, कृषि, चिकित्सा आदि सभी विषयों से शोध पत्रों को स्वीकार करती है | पत्रिका में प्रकाशन हेतु पीयर रिव्यू पद्धति का अनुसरण होता है | शोधपत्रों के चयन एवं प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा निर्धारित मानकों के अनुरूप है | प्रस्तुत अंक में अनेक विषयों से लेख आए हैं, प्रकाशित शोध पत्र ज्ञान के क्षेत्र में रचनात्मक एवं उपयोगी योगदान देने में सक्षम होंगे, ऐसा दृढ़ विश्वास है | कोविड-19 महामारी की विषम परिस्थिति में भी 'मेकल मीमांसा' के प्रकाशन के लिए सम्पादकीय समिति के सदस्यगण बधाई एवं प्रशंसा के पत्र हैं | इस शोध पत्रिका की निरंतरता हेतु तथा इसे मौलिकता एवं गुणवत्ता के सर्वोच्च मानकों के अनुरूप प्रतिष्ठित रहने की मंगलकामनाएं|

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी
कुलपति

सम्पादकीय

मेकल मीमांसा एक नए कलेवर और नए नेतृत्व की छत्रछाया में, अपने प्रकाशन के बारहवें वर्ष में सन 2020 के पहले अंक के साथ आपके समक्ष प्रस्तुत है | यह अंक आपके सम्मुख है एवं आप इस सम्पादकीय को पढ़ रहे हैं तो इसके पीछे शोध पत्रिका के संरक्षक एवं हमारे माननीय कुलपति प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी जी की बौद्धिक अभिरुचि और समर्थन बहुत बड़ा कारक है| मेकल मीमांसा एक अंतर-अनुशासनात्मक प्रकाशन है तथा वर्तमान अंक ने पत्रिका के इस स्वरुप को बनाए रखा है | हिंदी में शोध पत्रिका को डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यू पद्धति के साथ प्रकाशित करना निश्चित तौर पर एक श्रमसाध्य कार्य है जिसे पत्रिका की सम्पादकीय टीम ने पूरा किया है | पत्रिका की एक और उपलब्धि इसमें हमारे कुलपति माननीय प्रोफेसर श्रीप्रकाश त्रिपाठी जी का अत्यंत सामयिक विषय कोविड-19 और विश्व राजनीति पर विचारोत्तेजक लेख है | इसके साथ ही विश्वविद्यालय के संस्थापक कुलपति प्रोफेसर सी.डी. सिंह जी का विद्वत्तापूर्ण लेख भी पत्रिका के इस अंक को संग्रहणीय बनाने का काम करता है |

मेकल मीमांसा की विशेषता इसका बहु-विषयक होना भी है | आज का समय अंतर-अनुशासनात्मक है | हमारी नई शिक्षा नीति भी ज्ञान के सृजन में अंतर-विषयक दृष्टि को महत्वपूर्ण मानती है | पारम्परिक रूप से भी हमारा समाज बौद्धिक विमर्श में बहु-विषयक रहा है | हमारा उद्देश्य की विविध शाखाओं के मौलिक शोधपरक कार्य को एक प्रभावी मंच प्रदान करना है | मेकल मीमांसा के इस अंक में राजनीति विज्ञान, इतिहास, मनोविज्ञान, पत्रकारिता, भूगोल, समाज शास्त्र, जनजातीय अध्ययन, इतिहास, विज्ञान आदि विषयों का समावेश है | पत्रिका में कुल तेरह लेख संग्रहित हैं जिनमें से पांच जनजातीय समाज से जुड़ी समस्याओं का विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं एवं इस प्रकार जनजातीय विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को भी पूर्ण करते हैं |

मेकल मीमांसा राष्ट्रभाषा हिंदी में मौलिक एवं गुणवत्तायुक्त शोध को सामने लाने के महती उत्तरदायित्व की पूर्ति के लिए भी संकल्पित है एवं हमारा यह प्रयास है कि अपनी राष्ट्रभाषा में लिखने वाले, शोध परक निष्कर्षों को प्रस्तुत करने वाले एवं ज्ञान को समाज और बौद्धिक समुदाय में विस्तारित करने के इच्छुक लोगों के लिए यह एक सुलभ, प्राथमिकता वाला एवं उपयुक्त मंच हो | पत्रिका इस तरह से ज्ञान समाज के

विकास में अपना योगदान कर रही है|

इसके साथ ही पत्रिका एक और अत्यंत महत्वपूर्ण उद्देश्य के लिए विशेष रूप से समर्पित है और वह है आदिवासी समाज से जुड़े शोध निष्कर्षों का प्रकाशन | यह हमारे माननीय कुलपति जी का आग्रह भी है कि जनजातीय समुदाय से जुड़े शोध को प्रकाशित करने का विशेष ध्यान रखा जाय | पत्रिका के सम्पादक मण्डल का भी विशेष ध्यान इस बिंदु की ओर रहता है एवं इस तरह जनजातीय समाज से जुड़े विमर्श हमारी विशेष अभिरुचि का क्षेत्र माने जा सकते हैं | मध्य भारत का एक बड़ा भूभाग आदिवासी संस्कृति का क्षेत्र रहा है एवं आदिवासी समाज की विरासत, संस्कृति, सामाजिक परिवर्तन, ज्ञान-विज्ञान एवं कला आदि के विविध पक्षों का उद्घाटन इस पत्रिका के माध्यम से किया जाता रहेगा | आदिवासी समस्यायों के तार्किक एवं विवेकपूर्ण विवेचन भी पत्रिका के केंद्रीय विषय हैं|

मेकल मीमांसा किसी बौद्धिक एवं वैचारिक प्रतिबद्धता की अनुगामी नहीं है एवं बिना किसी पूर्वाग्रह के, बिना किसी संकोच के तर्कपूर्ण, शोधपूर्ण, प्रमाणिक सत्यान्वेषण का स्वागत करती है | पत्रिका इस बात की विशेष रूप से आग्रही है कि लोकभाषा को ज्ञान की भाषा भी होना चाहिए | इस तरह से मेकल मीमांसा सभी पाठकों, सुधीजनों एवं शोधार्थियों तथा पाठकों को आश्वस्त भी करना चाहती है कि पत्रिका अपने तेवर, कलेवर एवं निरंतरता के साथ हमेशा मौलिक चिंतन एवं शोध को प्रकाशित और संप्रेषित करने का कार्य सुचारू रूप से करती रहेगी|

प्रोफेसर राकेश सिंह
मुख्य सम्पादक

इस अंक में

क्रम संख्या	लेख का शीर्षक	योगदानकर्ता	पृष्ठ संख्या
1.	कोविड-19 जनित आपदा का विश्व राजनीति पर प्रभाव	प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी	1-15
2.	बघेल राजवंश: राजधानियों का वैभव	प्रोफेसर सी.डी. सिंह	16-30
3.	वैश्वीकरण एवं मीडिया मूल्य	नंदिनी हर्षदराय द्विवेदी, प्रोफेसर विनोद पाण्डेय	31-50
4.	जनजातीय कृषि: भूमि की उर्वरता बढ़ाने में नील-हरित शैवाल का उपयोग	प्रोफेसर नवीन कुमार शर्मा	51-58
5.	डिजिटल सोसाइटी और सरकारी जनसंपर्क (भारत सरकार के जनसंपर्क का एक अध्ययन)	डॉ. मनोज कुमार लोढ़ा, रतन सिंह शेखावत	59-67
6.	जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू नियंत्रण और मीडिया: एक विश्लेषण	डॉ. राघवेन्द्र मिश्रा	68-83
7.	प्राचीन दक्षिण कोसल की कर व्यवस्था: एक अध्ययन	डॉ. देवेन्द्र कुमार सिंह	84-92
8.	क्षमाशीलता, संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार एवं कल्याण: साहित्य समीक्षा	रेशू मिश्रा, डॉ. ललित कुमार मिश्र	93-114
9.	थारू जनजाति में आर्थिक विकास स्तर का निर्धारण: जनपद बलरामपुर के परिप्रेक्ष्य में	श्याम दीप मिश्रा, डॉ. ऋचा चतुर्वेदी	115-125
10.	भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के जनजातीय-प्रस्तर-शिल्पकारों की आर्थिक एवं स्वास्थ्य समस्याएँ	डॉ. कुमकुम कस्तूरी	126-137
11.	न्यूज़ चैनलों का प्राइम टाइम और खबरों के विषयों का चयन	हेमंत वशिष्ट	138-153

12.	जनसहभागिता, विकास एवं तृणमूल अभियान: मध्य प्रदेश के गांवों का एक अध्ययन	डॉ. माधव प्रसाद गुप्ता	154-171
13.	बैगा महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तन: पूर्वी मध्य प्रदेश का अध्ययन	डॉ. भावना ज्योतिषी	172-190

इस अंक के योगदानकर्ता

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी-

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी वर्तमान में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय के कुलपति हैं| अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के राजनीतिक विज्ञानी प्रोफेसर त्रिपाठी भारतीय मनीषा की जीती-जागती मूर्ति हैं| दो दर्जन से ज्यादा पुस्तकों के लेखक और सम्पादक प्रोफेसर त्रिपाठी के शताधिक लेख विविध शोधपत्रिकाओं में प्रकाशित हैं | चार दशक से भी ज्यादा के शैक्षणिक अनुभव के साथ आपने पंडित दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय में अनेक प्रशासनिक पदों को सुशोभित किया है और विश्वविद्यालय के विकास में अपना अवदान किया है | आपके शैक्षणिक योगदान की व्यापक मान्यता है और विविध प्रतिष्ठित संस्थाओं तथा सरकार द्वारा भी इन्हें पुरस्कृत और सम्मानित किया जा चुका है|

प्रोफेसर सी.डी. सिंह-

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय के संस्थापक कुलपति प्रोफेसर सी.डी. सिंह वर्तमान में अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा में पदस्थ हैं | प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रतिष्ठित विद्वान प्रोफेसर सिंह के पास शैक्षणिक प्रशासन का विशाल अनुभव है | आपके निर्देशन में दो दर्जन से ज्यादा शोधार्थी शोध उपाधि प्राप्त कर चुके हैं |

प्रोफेसर विनोद पाण्डेय-

प्रोफेसर विनोद पाण्डेय पत्रकारिता शिक्षा में स्थापित नाम हैं | आप गुजरात विद्यापीठ में प्रोफेसर हैं और अनेक पुस्तकों के लेखक हैं | उनके निर्देशन में अनेक विद्यार्थियों ने शोध उपाधि प्राप्त की है तथा उनके शताधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं | प्रो. पाण्डेय शिक्षण में आने से पूर्व पत्रकारिता में भी सक्रिय रहे हैं और दो दशक से भी ज्यादा समय तक हिंदी दैनिक आज में वरिष्ठ सम्पादकीय पदों को सुशोभित कर चुके हैं|

प्रोफेसर नवीन कुमार शर्मा-

प्रोफेसर नवीन कुमार शर्मा वनस्पति विज्ञानी हैं और इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय में वनस्पति शास्त्र विभाग में पदस्थ हैं | एक गंभीर शोधकर्ता के रूप में

जाने जाने वाले प्रोफेसर शर्मा ने आइयूएसएसटीऍफ़ फेलो के रूप में टेक्सास विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका में यूटिलाइजेशन ऑफ़ साइनोबैक्टीरिया फॉर बायोफ्यूल प्रोडक्शन पर भी उल्लेखनीय शोध कार्य किया है | प्रोफेसर शर्मा की शोध और शैक्षणिक अभिरुचि का क्षेत्र साइनोबैक्टीरियल एवं प्लांट इकोलॉजी है |

डॉ. मनोज कुमार लोढ़ा-

डॉ. मनोज कुमार लोढ़ा हरदेव जोशी पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय, जयपुर में उपाचार्य के रूप मे पदस्थ हैं | लगभग दो दशक से शिक्षण में सक्रिय डॉ. लोढ़ा सक्रिय पत्रकारिता का भी अनुभव रखते हैं | उनकी रूचि के विषय जनसंपर्क और प्रिंट मीडिया हैं | आपने आठ पुस्तकें लिखी और सम्पादित की हैं |

डॉ. राघवेन्द्र मिश्रा-

डॉ. राघवेन्द्र मिश्रा पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकण्टक (म.प्र.) में उपाचार्य के रूप में कार्यरत हैं | डॉ. मिश्रा ने अब तक पाँच पुस्तकें लिखीं और सम्पादित की हैं जो परम्परागत जनमाध्यमों से लेकर न्यू मीडिया जैसे विषयों को हमारे सामने रखती हैं | डॉ. मिश्रा के तीस से ज्यादा शोधपत्र विविध मान्य शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं और विविध सम्पादित खंडों में दो दर्जन से ज्यादा आलेख प्रकाशित हैं | समसामयिक लेखन के अतिरिक्त डॉ. मिश्रा आइसीएसएसआर इम्प्रेस योजना के तहत एक शोध परियोजना पर भी मुख्य शोधकर्ता के रूप में कार्य कर रहे हैं | उनके निर्देशन में एक दर्जन से ज्यादा शोधकर्ताओं को पी-एच.डी. तथा आधा दर्जन से ज्यादा विद्यार्थियों को एम्.फिल की उपाधि मिल चुकी है |

डॉ. देवेन्द्र कुमार सिंह-

डॉ. देवेन्द्र कुमार सिंह इतिहास विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं | आपके अध्ययन के विषय प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्व हैं। आप दो पुस्तकों के लेखक हैं। विभिन्न राष्ट्रीय तथा अन्तराष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में डॉ. सिंह के 40 शोध पत्र प्रकाशित हैं तथा राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठियों में 45 शोध पत्रों का वाचन और

सहभागिता की है। वतर्मान में आप भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रायोजित शोध परियोजना शीर्षक "सर्वे एण्ड डॉक्यूमेंटेसन ऑफ अरपा वैली, छत्तीसगढ़" का निर्देशन भी कर रहे हैं।

डॉ. ललित कुमार मिश्र-

डॉ. मिश्र इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकण्टक के मनोविज्ञान विभाग में सहायक प्राध्यापक के रूप में कार्यरत हैं। डॉ. मिश्र ने 10 से अधिक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध जर्नल में अपना मूल शोध पत्र प्रकाशित कराया है तथा 30 से अधिक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया है, साथ ही 10 से अधिक कार्यशाला में रिसोर्स पर्सन के रूप में अपना व्याख्यान प्रस्तुत किया है।

डॉ. ऋचा चतुर्वेदी-

डॉ. ऋचा चतुर्वेदी सम्प्रति भूगोल विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकण्टक में सहायक प्राध्यापक के रूप में पदस्थापित हैं | आपकी रूचि के विषय रिमोट सेंसिंग एवं जीआईएस हैं | आपके अनेक लेख प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं|

डॉ. कुमकुम कस्तूरी-

डॉ. कुमकुम कस्तूरी जनजातीय अध्ययन विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकण्टक में सहायक प्राध्यापक के रूप में कार्यरत हैं | डॉ. कस्तूरी की विशेष अभिरुचि जनजातीय अध्ययन में हैं | उनकी एक पुस्तक और लगभग दो दर्जन शोधपत्र विविध ख्यातिलब्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं|

हेमंत वशिष्ट-

हेमंत वशिष्ट टीवी पत्रकारिता में एक दशक से भी ज्यादा समय से सक्रिय हैं और सम्प्रति राज्यसभा टीवी में कार्यरत हैं | वह एक गंभीर अध्येता हैं और सामाजिक-राजनीतिक मुद्दों पर उनकी लेखनी चलती रहती है | मीडिया शोध में वह गहरी रूचि रखते हैं|

डॉ. माधव प्रसाद गुप्ता-

डॉ. माधव प्रसाद गुप्ता ने आईसीएसएसआर पोस्ट डॉक्टोरल फेलो के रूप में पंचायती राज और जनजातीय विकास पर कार्य किया है | सम्प्रति आप इंटरमीडिएट कॉलेज में प्रवक्ता नागरिकशास्त्र के रूप में कार्यरत हैं | आपकी एक पुस्तक और अनेक लेख प्रकाशित हो चुके हैं|

डॉ. भावना ज्योतिषी-

डॉ. भावना ज्योतिषी ने भारतीय सामाजिक अनुसन्धान परिषद के पोस्ट डॉक्टोरल फेलो के रूप में कार्य किया है | जनजातीय विकास, राजनीतिक भूगोल और पर्यावरण अध्ययन आपकी विशेषज्ञता के क्षेत्र हैं | सम्प्रति आप केन्द्रीय विद्यालय में सामाजिक विज्ञान प्रवक्ता पद पर कार्यरत हैं|

डॉ. श्याम दीप मिश्रा-

डॉ. श्याम दीप मिश्रा भूगोल में शोध उपाधि प्राप्त स्वतंत्र शोधकर्ता हैं और जनसँख्या भूगोल एवं नगरीय भूगोल में गहरी रूचि रखते हैं|

नंदिनी हर्षदराय द्विवेदी-

नंदिनी हर्षदराय द्विवेदी पत्रकारिता एवं जनसंचार में गुजरात विद्यापीठ में शोधरत हैं एवं मूल्यपरक पत्रकारिता पर काम कर रही हैं|

रतन सिंह शेखावत-

रतन सिंह शेखावत हरदेव जोशी पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं और जनसंपर्क में विशेष रूचि रखते हैं|

रेशू मिश्रा-

सुश्री रेशू मिश्रा मनोविज्ञान विभाग, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय में शोधरत हैं|

कोविड-19 जनित आपदा का विश्व राजनीति पर प्रभाव

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी

आज विश्व व्यवस्था कोविड-19 नामक अदृश्य विषाणु से ग्रस्त है। मानव सभ्यता के ज्ञात इतिहास में ऐसा संकट कभी नहीं आया था जिसके सामने पूरी विश्व व्यवस्था अपने को लचर पा रही है। जहाँ मानव समाज के सामर्थ्य पर प्रश्नचिन्ह खड़ा हो गया है, जहाँ ज्ञान विज्ञान की उपलब्धियाँ नितांत सीमित दिखने लगी हों, ऐसा कोई दौर नहीं रहा। यह एक अदृश्य शत्रु का प्रकोप है। विश्व के सम्मुख उत्पन्न इस संकट का समाधान करना, निराकरण करना, निवारण करना और निर्मूलन करना आज हम सभी का ध्येय है। एक ऐसी स्थिति जिसे विश्व स्वास्थ्य संगठन ने महामारी का नाम दे रखा है। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब विश्व मानवता कराहने लगे, कष्ट निवारण एवं विविध प्रकार के सहयोग में, सेवा में लगे लोग हाँफने लगें, और समस्या का समाधान करने में सफल न हो पाने के कारण विश्व व्यवस्था काँपने लगे तो यह स्थिति वैश्विक महामारी की होती है। जब विज्ञान समस्या की तह तक न जा सके, समस्या के समाधान के लिये उसके विषय में पूर्णतः न जान सके तो यह उसकी विवशता का दौर माना जाता है। जब प्रमाण संशय के दायरे में आ जाये, कारणों पर विश्वास न हो सके और संदेह की स्थिति बन जाये तो इसे उस अवस्था का प्रतिमान मानते हैं जहाँ जाकर हम असहाय से दृष्टिगत होते हैं। जब अधुनातन विज्ञान एक वैश्विक शत्रु के सामने कुंद हो जाये, उद्यमिता निष्क्रिय हो जाये तो यह लाचारी की स्थिति होती है। जब वैभव पराक्रम का आधार न रह जाये तो यह मजबूरी की स्थिति होती है। जब विश्व के सभी राष्ट्र मिलकर भी इस चिंता के निवारण के लिए एक साथ खड़े होने के बाद भी कुछ कर ना पायें तो यह कमजोरी की स्थिति होती है। पुरुष प्रकृति के सामने बौना दिखने लगे तो यह मनुष्य की लाचारी की स्थिति होती है। हम उस दौर में पहुँच गये हैं जहाँ कोरोना नामक एक वायरस ने दुनिया को हिला कर रख दिया है। इसका उद्भव कैसे हुआ और कहाँ से कहाँ पहुँच गया विचारणीय है।

अनुमान और विज्ञान दोनों सत्य तक पहुंचते हैं फिर भी आज कोरोना के

विषय में प्रामाणिक रूप से कहने की स्थितियां नहीं हैं और यह एक राजनीतिक कारण है। कभी ऐसा सोचा नहीं गया था कि एक ऐसा संकट दुनिया के सामने उत्पन्न हो जायेगा जिसमें दुनिया की गति ही रुक जायेगी। संकट से मुक्त होने के लिये हम अपनी जीवनचर्या पर विराम लगा देंगे। आवागमन के सारे साधन बंद हो गये हैं। व्यापार, वाणिज्य के सारे संसाधन बंद हो गये हैं। हमारे पास जो कुछ भी संचित है, धैर्य है, अन्न है उसके आधार पर पारस्परिक सहयोग के माध्यम से आगे की यात्रा की जाये तो इस स्थिति का समाधान कर सकते हैं। ऐसा कभी नहीं सोचा गया था, परिवार के साथ बैठकर भी सोशल डिस्टेंसिंग मेंटेन करना पड़ेगा, फिज़िकल डिस्टेंसिंग मेंटेन करना पड़ेगा। अर्थात हम आज उस दौर पर पहुंच गये हैं कि साथ-साथ नहीं बैठ सकते। कभी किसी ने सोचा नहीं था कि इस प्रकार का वायरस भी आ सकता है जिसका स्थान हमारा मुख और नासिका होगी, हमारा श्वसन तंत्र होगा, हमारे मुख और नासिका से निकली वायु होगी और हमारी छींक के माध्यम से, खांसने के माध्यम से वह सामने पहुँच जायेगा। इसका कभी अनुमान भी नहीं किया, लेकिन ऐसी स्थिति आ गई है जिसे हम वैश्विक महामारी कहते हैं। इसको लेकर इतनी भ्रांतियां फैल गई हैं जिसे इन्फोडेमिक भी कहा जा रहा है। सूचना के प्रचार-प्रसार के कारण क्या हो जायेगा, कैसे हो जायेगा, कहां तक फैलेगा, इसका अनुमान लगाना बहुत कठिन हो गया है। ऐसे दौर में जब दुनिया भर में स्वास्थ्य तंत्र को लेकर चर्चाएँ हो रही हैं, कैसे आजीविका चले, इसको लेकर चर्चाएँ होने लगी हैं, विश्व व्यवस्था कैसे संचालित हो इसको लेकर चर्चाएँ होने लगी हैं तो स्वाभाविक है विश्व राजनीति, विश्व व्यवस्था, विश्व समुदाय पर इसके प्रभाव का आंकलन करना बहुत ज्यादा आवश्यक हो जाता है।

विश्व में निरंतर प्रतिस्पर्धा चलती रहती है। विश्व राजनीति, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति या वैश्विक राजनीति सत्ता के इर्द-गिर्द, सत्ता के लिये निरंतर संचालित होती हैं। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के प्रमुख कारक राष्ट्र ही होते हैं। उनके पारस्परिक संबंध ही अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को, अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को, अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को निरंतर संचालित करते हैं, नियंत्रित करते हैं, परिचालित करते हैं, नियोजित करते हैं और नियमित करते हैं। हमेशा से राष्ट्रों का महत्व रहा है। आने वाले दिनों में भी रहेगा। राष्ट्र राज्य हमेशा महत्वपूर्ण बने रहेंगे। 1989-90 के बाद जब दुनिया में वैश्वीकरण की गति बहुत तेज हो गई तो लगने लगा कि राष्ट्र की सीमाएँ पहले की तरह जटिल,

अनुल्लंघनीय और महत्वपूर्ण नहीं रह गयी हैं। संचार के माध्यम से, व्यापार के माध्यम से, सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से, सेवा के माध्यम से, निवेश के माध्यम से बहुत कुछ आदान-प्रदान सहज हो गया है। इसलिये ऐसा लगने लगा था कि यही नई वैश्विक व्यवस्था विश्व को संचालित करेगी और उसी के अधीन और आवरण में सभी लोग उन्नति की ओर बढ़ेंगे। हम वैयक्तिक उन्नति, मानवीय उन्नति, राष्ट्रीय उन्नति के दौर में यह भूलते गये कि अंततः प्रकृति का भी कोई अर्थ होता है। यह ध्यान नहीं रखा गया कि प्रस्फुटन, प्रगति और प्रलय यह सब प्रकृति के उपादान हैं। उत्पादन, उपभोग और विनाश यह मनुष्य का प्रपंच है। हम मान लेते हैं कि हमारा जो पुरुषार्थ है, हमारा जो ज्ञान है, विज्ञान है यह उन ऊँचाईयों तक ले जायेगा जहाँ खड़े होकर हम प्रकृति को चुनौती देंगे। यह वायरस प्रकृति जनित है अथवा मनुष्य कृत है इस पर बहुत कुछ कहा जा रहा है, कहा जायेगा। आने वाले दिनों में इस पर चर्चा होगी, अनुसंधान होंगे और हम किसी निश्चित निर्णय पर पहुँचेंगे लेकिन इतना सत्य है कि अगर यह प्रकृति प्रदत्त है तो इसका रूपांतरण करने का प्रयास किया जायेगा और यदि यह मानवकृत है तो प्रकृति ने इसे स्वीकार कर लिया है और जब प्रकृति किसी चीज़ को अंगीकृत कर लेती है और उसे विस्फोटक स्वरूप प्रदान कर देती है तो पूरी दुनिया स्तब्ध रह जाती है।

वस्तुतः हम आज एक ऐसे दौर में हैं जिसे स्तब्धता का दौर कहते हैं, विद्रूपता का दौर कहते हैं, विफलता का दौर कहते हैं, ऐसे में अगर आश्रय कहीं मिलता है तो हमारे धैर्य के साथ, हमारे संबल के साथ और हमारे सोचने की शक्ति के साथ और जो मानव की जिजीविषा है उसके साथ हमें बहुत कुछ मिलता है। विश्व व्यवस्था निरंतर बदलती रहती है। संसार के विषय में मान्यता है "संसरति इति संसारः" अर्थात् जिसका प्रति पल क्षरण होता है उसे संसार कहते हैं। विश्व व्यवस्था में भी कुछ स्थाई नहीं है, उसमें "संसार का" भी परिवर्तन होता रहता है। एक दौर आया द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जब कहा जाने लगा कि दुनिया वैचारिक धरातल पर और शस्त्र प्रतिस्पर्धा के आधार पर दो ध्रुवीय हो गई है। एक पूंजीवादी विचारधारा की पोषक शक्तियों का ध्रुव है और एक साम्यवादी विचारधारा की पोषक शक्तियों का ध्रुव। जब भूमण्डलीकरण का दौर आया और सोवियत संघ का विघटन हो गया तो फिर दुनिया को कहा जाने लगा कि एक राष्ट्र (संयुक्त राज्य अमेरिका) बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया और अब यह दुनिया एक ध्रुवीय हो गई। जब उसके समानांतर और राष्ट्र उभरने लगे आर्थिक कारणों से,

सामरिक कारणों से तो कहा जाने लगा कि यह प्रतिस्पर्धी दुनिया है, तो अब यह एकध्रुवीय दुनिया नहीं है, अब यह बहुध्रुवीय दुनिया हो गई है। कभी भी राजनीतिक दृष्टि से दुनिया एकध्रुवीय या बहुध्रवीय हो ही नहीं सकती। ध्रुव तो दो ही होंगे तो बहुध्रुवीय के स्थान पर उचित शब्द है कि बहुस्तंभी दुनिया, जिसका प्रमुख स्तंभ संयुक्त राज्य अमेरिका है और शेष अन्य शक्तियाँ ब्रिटेन, फ्रांस, रूस, चीन अन्य स्तंभ के रूप में हैं। भारत, जापान, जर्मनी, ब्राजील, इज़राईल जैसे देश भी इसमें उभरे और महत्वपूर्ण स्तंभ बन गये हैं।

सुरक्षा परिषद के जो पाँच स्थाई सदस्य (पी-5 नेशंस) हैं उनकी महत्ता यथावत रही लेकिन उनके साथ ही भारत जैसे देश भी अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर क्रमशः महत्वपूर्ण होते चले गये। इस महत्ता के मूल में दो प्रमुख कारण थे जिन पर विचार होता रहा, एक तो सामरिक शक्ति किसके पास ज्यादा है दूसरा वैभव किसके पास ज्यादा है। सामरिक संदर्भों में भी उन राष्ट्रों को महत्वपूर्ण माना गया जिनके पास नाभिकीय हथियार थे। नाभिकीय हथियार के साथ ही दुनिया में एक नए प्रकार के भय का सृजन हुआ जिसे "म्यूचुअलि एश्योर्ड डिस्ट्रक्शन (एम.ए.जी)" कहा जाता है, विनाश की पारस्परिक आश्वस्ति। सभी शक्तियाँ समझने लगीं कि यदि नाभिकीय आयुध का प्रयोग किया जायेगा तो उसका प्रतिप्रहार भी होगा और सभी प्रतिस्पर्धी राष्ट्रों का विध्वंस होने लगेगा। ऐसे में जब नाभिकीय शस्त्रों की प्रतिस्पर्धा बढ़ी तो इनके लिये भी एक नाम रख दिया गया कि यह दौर वेपन्स ऑफ मास डिस्ट्रक्शन (डब्ल्यू.एम.डी.) अर्थात् व्यापक संहार के शस्त्रों का है। लेकिन कभी यह नहीं सोचा गया था कि जो वेपन्स ऑफ मास डिस्ट्रक्शन (डब्ल्यू.एम.डी.) हैं उनके पास उसका जवाब नहीं है जिसे "डिस्ट्रक्शन कॉज्ड बाइ वायरस" अर्थात् विषाणु जनित विनाश कहते हैं। आज के दौर में जो विध्वंस, विनाश, वायरस के माध्यम से हो रहा है उस प्रकार की बात तो सोची ही नहीं गई। दो विश्वयुद्धों में भी इतना नुकसान नहीं हुआ जितना इस वायरस युद्ध के चलते हो गया। एक ऐसा युद्ध जिसमें सारी दुनिया, दुनिया के प्रमुख राष्ट्र एक साथ खड़े हैं और एक ऐसा शत्रु जो अदृश्य है जिसे हम प्रयोगशालाओं में शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी के साथ जो विज्ञान के अवयव हैं, उपकरण है, उनसे हम देख सकते हैं। यह प्रत्यक्ष आँखों से दिखलाई भी नहीं देता। ऐसे अदृश्य शत्रु के सामने हमारी सामरिक शक्ति कोई भी काम नहीं कर सकती। एक मान्यता बन गई थी कि भौतिकता के दौर में सुविधायें ही राष्ट्र की

शक्ति का आधार हैं, लेकिन आज जितने भी सुविधा संपन्न राष्ट्र हैं वह बहुत ज्यादा निर्बल नजर आते हैं। उनके यहां संक्रमण ज्यादा हुआ है बनिस्बत उन राष्ट्रों के जिनके पास पर्याप्त मात्रा में आधुनिक सुविधाएँ नहीं हैं।

ध्यातव्य है कि जहाँ प्रकृति के साथ व्यक्ति का समायोजन है, वहाँ संक्रमण कम है लेकिन जहाँ प्रकृति को चुनौती देकर सुविधाओं का सृजन और उपभोग किया जा रहा है, वहाँ संक्रमण तेजी से बढ़ा है। ऐसे संपन्न राष्ट्र जो अपने को महान राष्ट्र मानते हैं, बहुत सारे राष्ट्र उनकी महानता पर विश्वास करते हैं, जो वर्चस्व के सिद्धांत को लेकर चलते हैं, जो शक्ति की राजनीति के महानायक कहे जाते हैं आज न उनकी महानता है और न उनका वर्चस्व है। आज सभी असहाय नजर आ रहे हैं। ऐसा प्रभाव है इस कोरोना का जो अदृश्य वायरस है। कहाँ से आया जीवधारियों के माध्यम से मनुष्य में पहुँच गया अथवा मनुष्य के माध्यम से मनुष्य में पहुँचने लगा यह अभी भी शोध ! अनुसंधान का विषय है। निश्चित रूप से इतना तो सत्य है कि इस वायरस के लिये एक वाहक चाहिये और जब मनुष्य किसी वायरस का वाहक बन जाता है तो उसकी भयावहता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है, एक तरह से अनियंत्रित हो जाती है।
आज हम उस दौर में पहुँच गये हैं कि महाशक्तियों की शक्ति का कोई अर्थ नहीं रह गया है। संपन्न राष्ट्रों की संपन्नता का कोई अर्थ नहीं रह गया है। बचाव का एक ही उपाय है कि हम घरों में स्वतः निरुद्ध हो जायें और इस विषाणु की जो कड़ी (चेन) बन रही है उसे खण्डित करें। संपर्क, संबंध और संवाद जनसंचार (मास मीडिया) के साधनों से ही करें, प्रत्यक्ष रूप से न करें।

आधुनिकता की दौड़ ने, वर्चस्व स्थापित करने की अभिलाषा ने, राष्ट्रों की महत्वाकांक्षा ने अब एक नई विश्व व्यवस्था को जन्म दे दिया है। जो विद्यमान विश्व व्यवस्था है निश्चित रूप से कोरोना इतर काल (पोस्ट कोरोना फेज़) में यह विश्व व्यवस्था नहीं रहेगी। महाशक्ति सिद्धांत (सुपरपॉवर थ्योरी) अब बहुत ज्यादा नहीं चलने वाला। अब महाशक्ति (सुपरपॉवर) किसे कहें, सुपरपॉवर तो वह होगा जो किसी भी प्रकार के खतरे से अपने को बचा सके। लेकिन आज के जो हालात हैं इसमें ऐसा कोई सुपरपॉवर नहीं है जो विद्यमान खतरे से अपने को सुरक्षित रख सके। हम संरक्षणवाद, उपभोक्तावाद की बात करते रहे लेकिन ये सारे वाद अब व्यर्थ सिद्ध हो गये हैं। अब

सभी देश मिलकर एक ही वाद की दुहाई दे रहे हैं, वह है मानवतावाद और मनुष्य का अस्तित्ववाद। हमारा अस्तित्व सुरक्षित होना चाहिये, हमें बने रहना चाहिये। विकास मनुष्य के लिये होता है, मनुष्य की भावी पीढ़ियों के लिये होता है जिसे आजकल सतत् विकास की परिभाषा में रखते हैं। विकास वह नहीं होता जिसमें विध्वंस के भाव बहुत ज्यादा छिपे होते हों।

प्रयोगशाला में वह पदार्थ निर्मित है जो बाहर आकर जमीन पर पहुंचता है जिससे जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ती है और फिर मनुष्य के लिये खुशहाली का दिन आता है। प्रयोगशालाएं इसके लिये नहीं होतीं कि हम विनाश के उपकरण तैयार करें और विनाश के कंपाउंड तैयार करें। प्रयोगशाला में विषाणु तैयार करना मानवता के विरुद्ध अभिशाप है, कलंक है और इसके विरुद्ध वैश्विक स्तर पर लड़ाई लड़ी जानी चाहिये। इसे (कोरोना के प्रकोप को) तीसरे विश्वयुद्ध का नाम भी दिया जाता है। विश्वयुद्ध राष्ट्रों के दो समूह के बीच होता है। यह एक विचित्र प्रकार का विश्वयुद्ध है जहाँ दुनिया के सभी राष्ट्र एक जैसा तो सोच रहे हैं लेकिन बैरी का मुकाबला नहीं कर पा रहे हैं। एक ही समय दुनिया के सारे राष्ट्र एक विषाणु (वायरस) से प्रभावित हो जायें ऐसा तो कभी हुआ नहीं। असीमित शक्ति जैसा कोई शब्द है ही नहीं। यह स्थिति है इस कोरोना के चलते वर्तमान विश्वव्यवस्था की, विश्वव्यवस्था शक्ति संचालित रही है, अंतर्राष्ट्रीय संस्था से संचालित रही है, वैचारिक उपक्रम से संचालित रही है। निश्चित रूप से आगे यह नहीं चलने वाली। साम्यवाद ने पूंजीवाद का कलेवर ग्रहण किया, पूंजीवाद ने कार्पोरेट जगत की रचना कर दी और सभी मिलकर विश्व में बाजारवाद की स्थापना में लग गये। प्रत्येक राष्ट्र अपने यहां विशेष प्रकार का उत्पादन करने लगा। वे राष्ट्र जिनके पास संसाधन थे, शस्त्राश्रय था उन्होंने अपने यहाँ पूंजी निवेश कर लिया और वह भी वैभवशाली बन गये। वैभव का उपयोग समूह के लिये होता है, समाज के लिये होता है निरर्थक संहार के लिये नहीं। जब भी हम लड़ाई लड़ते हैं चाहे सागरतल में लड़ें, आसमान पर लड़ें या भूतल पर लड़ें तो मानवता हारती है।

विकास, वैभव और शक्ति मानवता को पराजित करने के लिये नहीं है। यह सब राष्ट्र को उस मुकाम तक ले जाने के लिये होता है जहाँ एक क्षणिक सुख, आत्मशक्ति का बोध और आत्मगौरव की प्राप्ति हो सके लेकिन इसमें स्थायित्व नहीं

होता। संहार के जितने साधन हैं, वे स्थायित्व की ओर नहीं ले जाते। राष्ट्रीय सीमाओं को लंबी अवधि तक सुरक्षित रखते हैं लेकिन विश्व इतिहास इस बात का साक्षी है कि सीमायें भी समय-समय पर बदलती रहती हैं। ऐसा राजनीति में भी कहा जाता है, सिद्धांत में भी कहा जाता है और व्यवहार में भी देखा जाता है। इसलिये अब जो नई विश्वव्यवस्था होगी वह परिवर्तित विश्वव्यवस्था होगी। एक ऐसी विश्वव्यवस्था जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की संरचना पर नये सिरे से विचार होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ.) की बड़ी मर्यादा रही है दुनिया में लेकिन इस हालिया घटना ने उसकी मर्यादा को प्रश्नों के दायरे में लाकर खड़ा कर दिया है। एक वैश्विक आपदा को बहुत समय बाद वैश्विक आपदा घोषित किया जाये, तो यह मानवता के विरुद्ध अपराध है। भले ही इसके पीछे एक राष्ट्र का बहुत ज्यादा प्रभाव रहा हो इस संगठन पर या उसके जो मुखिया हैं वह संबंधित राष्ट्र से प्रभावित रहे हों लेकिन यह मानवता का पक्ष नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय संगठन में दुनिया में शांति, सुव्यवस्था और सुरक्षा स्थापित करने का विधान है और यह काम सुरक्षा परिषद के जिम्मे किया गया है। लेकिन आज के दौर में सुरक्षा परिषद इतने गंभीर मसले पर विचार न कर पाये तो यह उसकी निरीहता का द्योतक है। निश्चित रूप से जो पहला परिवर्तन होना है अंतर्राष्ट्रीय संस्था में, संगठनात्मक परिवर्तन है जहाँ ऐसे राष्ट्र बैठे होने चाहिये जो नैतिक को नैतिक कहें और अनैतिक को अनैतिक, जो मनुष्यता को मनुष्यता कहें और दानवता को दानवता। ऐसा कहने वाले राष्ट्रों का सुरक्षा परिषद में पहुँचना बहुत ज्यादा आवश्यक है। ऐसे राष्ट्रों का वहाँ पहुँचना आवश्यक है जो भौतिकता के साथ आध्यात्मिकता का सम्मिश्रण करते हों, जो मनुष्य का ध्येय जानते हों, जो राष्ट्र का ध्येय जानते हों और जो मानवता के लिये सर्वाधिक प्रिय है उसे जानते हों। शांति, सहयोग और साहस के लिये भारत जैसे राष्ट्र का वहाँ होना आवश्यक है। जापान, जर्मनी, ब्राजील का वहाँ होना आवश्यक है। यह राष्ट्र जब रहेंगे तो सुरक्षा परिषद भी सही विचार-विमर्श कर सकेगी। अंतर्राष्ट्रीय संगठन की उपादेयता सिद्ध होगी। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के माध्यम से, विश्व बैंक के माध्यम से विकासशील देशों को प्रभावित करने की परंपरा रुकेगी। जो दुनिया की निधि है, धरती सबके लिये है और हम सब धरती की संतान हैं, इसलिये जो धरा की निधि है, पूरी मानवता के उपयोग में आनी चाहिये। संरक्षणवाद पर विराम लगेगा। जो आक्रामक रणनीति, राजनीति रही है अब इस पर विराम लगेगा क्योंकि हमने जितने विनाश के हथियार बनाये वह सब आक्रामक एवं संहारक माने जाते हैं। अब जो हम

विज्ञान की प्रगति करेंगे उनका सुरक्षात्मक स्वरूप (प्रोटेक्टिव मेज़र) होगा कि मनुष्यता को कैसे बचायें, मनुष्य को कैसे बचायें और यह बचाव तब होगा जब पुरुष और प्रकृति संबंध स्वस्थ रूप से दिखेगा। पर्यावरण सुरक्षित रहेगा तब जाकर ऐसा होगा।

आश्चर्य है कि जैसे ही दुनिया में आवागमन के साधनों पर विराम लगा, उद्योगों की गति ठहर गई, पर्यावरण प्रदूषण का असर बहुत कम हो गया। नदियां स्वच्छ दिखाई देने लगीं, ऑक्सीजन के लिये आपाधापी नहीं रह गयी। यह अचरज का विषय है। क्या हम प्रगति इसलिये कर रहे हैं कि हम शुद्ध हवा न ले सकें, शुद्ध पानी न ले सकें, शुद्ध जमीन पर न चल सकें। क्या हम प्रगति इसलिये कर रहे हैं कि ब्राज़ील के जंगलों को काटकर जो दुनिया का फेफड़ा कहा जाता है हम श्वसन और सुरक्षित स्पंदन क्रिया पर विराम लगा दें। क्या हम प्रगति इसलिये कर रहे हैं कि इंडोनेशिया के जंगलों को काट दें और पूरा एशिया महाद्वीप हांफने लगे। अब उस पर विराम लगेगा। विकास के नये अर्थ खोजे जायेंगे और गढ़े जायेंगे। शक्ति के नये अर्थ खोजे जायेंगे और कहे जायेंगे। विश्व राजनीति में परिवर्तन होगा। यह परिवर्तन तात्कालिक संदर्भों में विद्यमान समस्या के समाधान के लिये एकजुटता का प्रतीक है। अब एक राष्ट्र उस स्थिति में नहीं होगा जो अदृश्य शत्रु का मुकाबला कर सके। कभी-कभी पढ़ने को मिलता है कि एक राष्ट्र, जहाँ से इस बीमारी का उद्भव माना जाता है, इस पर नियंत्रण करने में सफल है, ऐसा नहीं है। जहाँ की मीडिया पारदर्शी न हो, मुक्त न हो, स्वतंत्र न हो, जहाँ से सूचनायें बाहर न आ पाती हों वहाँ सरकारी तंत्र द्वारा घोषित सूचनायें कितनी प्रामाणिक होंगी यह कह पाना संभव नहीं है। इसलिये सच्चाई की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

हमें उस दौर में पहुँचना है जहाँ वैयक्तिक स्वतंत्रता का महत्व हो, मानव अधिकारों का महत्व हो और नये समीकरण बनें। हिन्द महासागर सहित सारे महासागर संचार, व्यवहार और व्यापार के लिये हैं। हथियारों की प्रतिस्पर्धा के लिये न हों। ऐसे जितने भी महासागर हैं पूरी मानवता के उपयोग के लिये हों। विश्व संगठन का स्वरूप वास्तव में वैश्विक हो। वह वर्चस्ववाद से मुक्त हो। महासभा में जो निर्णय हो लोकतांत्रिक प्रक्रिया से हो। वह प्रक्रिया सभी देशों को मान्य हो। इस समय मानवता के लिये सबसे बड़ा शत्रु तो कोरोना का संकट है। उससे पहले सभी देश आतंकवाद से लड़ाई करते रहे। अभी भी भारत की जो सीमा है वहाँ एक पड़ोसी राष्ट्र के चलते

आतंकी गतिविधियां संचालित होती रहती हैं। ऐसे सभी शत्रुओं पर जो मानवता के विरूद्ध प्रहार करते हैं हमें निर्णायक लड़ाई लड़नी है। यह ऐसी बीमारियां हैं जो एक समाज, एक समूह, एक राष्ट्र के लिये नहीं है वरन् यह पूरे विश्व के लिये हैं। इसलिये विश्व में नई शक्ति संरचना का उदय होगा। जहाँ समान सोच रखने वाले राष्ट्र एक साथ एकत्र और खड़े होंगे और यह भी तय है कि शक्ति प्रतिस्पर्धा कभी समाप्त नहीं होगी। आने वाले दिनों में भी यह शक्ति प्रतिस्पर्धा चलेगी। ऐसे राष्ट्रों को जो मानवता के लिए संकट उत्पन्न करते हैं, किनारे रखा जायेगा। ऐसे राष्ट्रों के साथ व्यापार बंद किया जायेगा जो इस प्रकार की अमानवीय गतिविधियों को संचालित करते हैं। जीवन शैली बदलेगी, खान-पान का स्वरूप बदलेगा। त्वरित आहार की प्रक्रिया रूकेगी। आहार के जो प्राकृतिक उपादान हैं उनके ऊपर निर्भरता बढ़ेगी। उनका उत्पादन बढ़ेगा। भौतिकता के साथ आध्यात्मिकता पर बल दिया जायेगा।

आज वह स्थिति आ गई है कि सभी राष्ट्रों को देवालय, जो सतत् वंदनीय हैं, के कपाट भी बंद करने पड़े। ऐसा नहीं है कि ईश्वर में आस्था कम हो गई है। यथार्थ यह है कि सारे देवालयों से देवी-देवता निकलकर औषधालयों में पहुंच गये और डॉक्टर के रूप में, नर्स के रूप में, वार्ड ब्वॉय के रूप में, सहयोगी स्टॉफ के रूप में निश्चिंत विचरण कर रहे हैं, हमारी चिंता का हरण करने के लिये। दुनिया में अब इस पर विचार होना चाहिये कि चिकित्सक की महत्ता क्या है, चिकित्सा शास्त्र की महत्ता क्या है और हम प्रगति को किस दिशा में ले जायें। हमें उन उपादानों की तलाश करना है जिससे हमारा जीवन सुरक्षित भी हो, संरक्षित भी हो। अब जो नया समीकरण बनेगा वह स्वास्थ्य सेवाओं के संदर्भ में विकास को लेकर बनेगा। कौन राष्ट्र इस प्रकार की सेवायें विकसित कर सकते हैं, दे सकते हैं जहाँ मनुष्य प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुये सुविधाओं का उपभोग कर सके। प्रकृति को चुनौती देकर सुविधाओं का उपभोग न करें। अब इसकी तलाश हमें करनी है और इसके लिये विश्व के प्रमुख राष्ट्र एक साथ आयेंगे। संहार के साधन बहुत बनाये जा चुके हैं, इतने ज्यादा बन चुके हैं कि दुनिया कई बार बने और यह साधन सुरक्षित रहें तो इस दुनिया को कई बार नष्ट किया जा सकता है। अब नष्ट करने का भाव छोड़ना पड़ेगा। ऐसे राष्ट्रों को एक मंच पर आना पड़ेगा जो संहार, विनाश के प्रतिकूल व्यवहार करते हों, विचार रखते हों और पूरी मानवता को त्राण दिलवाने के लिये संकल्पित हों। हम उस व्यवस्था की चिंता करें जहाँ पर जहाँ

शांति और सहअस्तित्व का विधान हो, जहाँ विकास और प्रगति के मायने संपूर्ण मानवता के लिये हों, जहाँ राष्ट्रों की सीमायें सुरक्षित हों। अब उस व्यवस्था की स्थिति आयेगी जिसमें केवल संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों की ही महत्ता नहीं होगी। अभी इसमें 193 सदस्य हैं। कई राष्ट्र ऐसे हैं जो इस विश्व संस्था के सदस्य नहीं हैं, लेकिन उनकी भी टिप्पणियां अर्थ रखती हैं। सबसे पहले एक छोटे से देश ताइवान ने इस घटना का उल्लेख किया और इसे वैश्विक महामारी घोषित करने का आह्वान किया। उन राष्ट्रों की भी सुनी जानी चाहिये जो कदाचित किन्हीं कारणों से अंतर्राष्ट्रीय संस्था के सदस्य नहीं हैं। अब उनका वहाँ प्रवेश हो। इससे शांति और कल्याण के आग्रही राष्ट्रों की संख्या बढ़ेगी।

शक्ति समीकरण नए दौर में पहुँचेगा। शक्ति प्रतिस्पर्धा कभी कम नहीं होगी। अब यह तय किया जायेगा कि वर्चस्व किस प्रकार का हो और राष्ट्रों की आक्रामकता किसके विरुद्ध हो। आक्रामकता हो भी या न हो इस पर विचार किया जाना चाहिये। दुनिया सुरक्षित रहेगी, प्रकृति संरक्षित रहेगी तभी मनुष्य के अस्तित्व का कोई अर्थ होगा। हमने जितनी भी उपलब्धियां हासिल की हैं अगर उसे एक धरातल पर रखें, एक पलड़े पर रखें और विनाश के जिन साधनों का हमने सृजन किया है उसे दूसरे धरातल पर रखें, दूसरे पलड़े पर रखें तो निश्चित रूप से जो विनाश के साधन हैं वो भारी पड़ जायेंगे। अब यह बदलेगा। यह समीकरण अब बदलना होगा। विनाशक वृत्ति की इमारत ध्वस्त हो जाने वाली है, बहुत कुछ नष्ट हो जाने वाला है। जो देश बचेगा उसे हमें खड़ा करना है, उसे हमें चलाना है और इसे हमें गति देना है और इसके लिये जिन राष्ट्रों के पास बौद्धिक सामर्थ्य है, जिन राष्ट्रों के पास आर्थिक समृद्धि है और जिन राष्ट्रों के पास सांस्कृतिक सामर्थ्य है, ऐसे राष्ट्रों को एक साथ आना पड़ेगा।

संस्कृति के टकराव की बात अब नहीं की जायेगी। अब सांस्कृतिक सद्भाव की बात की जायेगी। अब सभ्यताओं में सामंजस्य और समन्वय की बात होगी। शक्ति स्पर्धा जो घातक शस्त्रों के उत्पादन से संबंधित है उसको कुछ दिनों के लिये विराम दिया जायेगा। जो बीमार हैं उन्हें कैसे निरोग किया जाय, जो बच्चे हैं उन्हें कैसे बचाया जाय, इस पर विचार होगा। इस अंतर्राष्ट्रीय संगठन को भावी पीढ़ी को युद्ध की विभीषिका से बचाने के लिये बनाया गया। भावी पीढ़ी को पहले विषाणु से बचायें। पारंपरिक युद्ध

जिसे हथियारों से लड़ा जाता है उसे किनारे करें। अब हमें युद्ध करना है उस महामारी से जो हमें दिखलाई नहीं देती। हमें उस मानवताद्रोही से लड़ाई लड़नी है जिसका प्रभाव हम अनुमानित नहीं कर पा रहे हैं, जिसके प्रभाव का हम मूल्यांकन नहीं कर पा रहे हैं। यह कितने बड़े आश्चर्य और विस्मय का विषय है कि जो बीमारी, जो महामारी नवंबर 2019 में आरंभ हुई और अब अगस्त 2020 बीत चुका है और उसके बारे में कुछ सही-सही कहने और करने की स्थिति में हम नहीं हैं। कोई प्रयोगशाला उसके निवारण की औषधि नहीं बना पाई। जो बड़े-बड़े उद्योग हैं, जहाँ सुविधाओं के नये-नये यंत्र तैयार किये जाते थे आज वेंटिलेटर बना रहे हैं, पी.पी.ई.किट बना रहे हैं। यह दौर आ गया है। हम आज ही वेंटिलेटर क्यों बना रहे हैं। हमारे पास इतनी अच्छी व्यवस्था होनी चाहिये कि ऐसी आपदा आती है तो पूरी मनुष्यता को हम संबल दे सकें। इसलिये सुविधा और संहार के जो उद्योग हैं उन्हें मनुष्यता के बचाव के उपयोग में बदलना होगा।

तकनीकी ट्रांसफर अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का एक प्रमुख विषय रहा है। अब हमें उस तकनीकी का त्वरित गति से ट्रांसफर करना होगा जिसके चलते दुनिया भर में सस्ते और अच्छे विषाणुरहित और किटाणुरहित वेंटिलेटर बन सकें। पीपीई बन सकें, लोगों की सुविधा के वस्त्र बन सकें। इस व्यवस्था में त्वरित गति से उभरने वाले जो राष्ट्र हैं उसमें भारत एक प्रमुख राष्ट्र है। इस त्रासदी के समय में महामारी की भीषण मार के बाद भी यदि दृढ़ता से कोई देश लड़ रहा है और अपने नागरिकों को आपदा से बचा रहा है तो यह कोई और नहीं बल्कि दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आबादी बाला देश हिंदुस्तान है। यह कुशल नेतृत्व के कारण है, सतर्कता के कारण है, सजगता के कारण है, संयम के कारण है और एकजुटता के कारण है। धैर्य, संयम, एकजुटता और आंतरिक मनोबल यह किसी भी संकट के निवारण के सार्थक आधार और हथियार माने जाते हैं। यह पूरी दुनिया को भी समझना चाहिये और इसके आधार पर चलना चाहिये। हमें अपनी जीवनशैली बदलनी पड़ेगी। आज राष्ट्र जीवन का कोई भी ऐसा पहलू नहीं है जो इस आपदा से प्रभावित नहीं है। अब राष्ट्र जीवन के जो पहलू हैं उनके बारे में भी हमें विचार करना पड़ेगा। हमारी दिनचर्या बदलनी पड़ेगी। योग को पूरी दुनिया ने ध्यानपूर्वक समझा है और नियमित रूप से उसके उपादानों का प्रयोग किया जा रहा है। इसी तरह से जो भारतीय जीवनशैली है इसको भी क्रमशः दुनिया को स्वीकार करना पड़ेगा। अब हम दूर से प्रणाम कर लेते हैं और आज की इस विपदा से

बचाव का यह भी एक बड़ा उपाय है कि अब हम दूर से प्रणाम कर लें। अब सबको स्वीकार करना पड़ेगा कि भारतीय जीवनशैली पूर्णतः वैज्ञानिक है। इसके पीछे वैज्ञानिक आधार है। हमारे यहां की मान्यता है कि अपने समय ऋषि वैज्ञानिक थे। "ऋषयोःमंत्र दृष्टार:। अर्थात् ऋषिगण मन्त्रदृष्टा थे। उन्होंने मंत्रों को देखा था। मंत्रों को देखने से आशय यह है कि उन्होंने जो फार्मूला बनाया उसे प्रयोगशालाओं में सिद्ध किया, जमीन पर उतारा और मनुष्य के लिये एक कवच तैयार किया। एक ऐसा कवच जिसे कोई भी शस्त्र भेद न सके। अभेद्य कवच जिसे कहा जाता है। अब इसी शैली को आगे बढ़ाना पड़ेगा। दुनिया के सभी राष्ट्रों को मिलकर मनुष्य के लिये अभेद्य कवच बनाना पड़ेगा जहाँ कोई विषाणु (वायरस) उस कवच को नुकसान न पहुँचा सके, यहाँ तक कि उस कवच के पास न पहुँच सके। यह जो कोरोना है अंतिम वायरस नहीं है। प्रकृति के पास कई घातक उपाय है। कहा जाता है "नेचर कंट्रोल्स इटसेल्फ" प्रकृति स्वयं का नियंत्रण कर लेती है। नियंत्रण की स्थिति तब आती है जब मनुष्य अनियंत्रित हो जाता है, मनुष्यता के विरूद्ध आचरण करने वाली सत्तायें अनियंत्रित हो जाती हैं। इसलिये विश्व व्यवस्था को इस पर विचार करना पड़ेगा कि अमानुषिक वृत्ति की पोषक अनियंत्रित सत्ताओं के ऊपर कैसे नियंत्रण स्थापित किया जा सके। भोगवादी और विलासितापूर्ण जीवनशैली को कैसे अब संयमपूर्ण जीवनशैली में बदला जाये।

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के आधार, कारक और कारण केवल राष्ट्र और केवल राष्ट्र हैं। इसलिये राष्ट्रों का महत्व हमेशा रहेगा। राष्ट्रों की संप्रभुता का सम्मान सदैव, हमेशा होता रहेगा और होते रहना चाहिये, कारण कि जब भी राष्ट्र की संप्रभुता पर आघात होगा तो कोई न कोई राष्ट्र इस रूप में खड़ा होगा कि वह इस आघात के लिये प्रतिघात करे और प्रतिघात की दिशा बहुधा ध्वंसात्मक होती है। इसलिये ध्वंस से बचना चाहिये, निर्माण की ओर बढ़ना चाहिये, प्रलय से बचना चाहिये, पुनर्जागरण करना चाहिये। इस संदर्भ में आज दुनिया के जितने महत्वपूर्ण राष्ट्र हैं उन्हें सम्यक् विचार करना चाहिये। कई ऐसे महाद्वीप हैं जिनके राष्ट्रों की प्रगति उतनी नहीं हो सकी जिसे हम अपेक्षित प्रगति कहते हैं, उन्हें भी प्रगति के दायरे में लाया जाये। विभिन्न देशों में विज्ञान की जो उपलब्धियां हैं उसका लाभ पूरी दुनिया को मिले। जो प्राकृतिक संसाधन हैं उनका दोहन तो हो लेकिन अगली पीढ़ी के लिये उसे हम उतना ही छोड़कर जाएँ जिससे हमारे सतत् विकास का लक्ष्य पूरा हो। पर्यावरण के साथ ज्यादा छेड़छाड़

न हो। मानवाधिकारों की जो नई पीढ़ियाँ आई हैं उसमें पर्यावरण अधिकार को भी सम्मिलित किया गया है। यह विशेष विचार का विषय है। इसलिये अब जो पंचमहाशक्तियां हैं (सं.रा.अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन) उन्हें विद्यमान स्थिति पर विचार करना है क्योंकि आज की जो वस्तुस्थिति है, जो वैश्विक व्यवस्था है, वह कल नहीं रहने वाली है। वह राष्ट्र ज्यादा महत्वपूर्ण होकर उभरेंगे जिन्होंने इस कठिनाई, त्रासदी और आपदा का सफलतापूर्वक सामना किया है और जिनकी स्थिति वास्तविक रूप से दुनिया को विदित है। इसमें भारत अग्रणी राष्ट्र होगा।

कृषि व्यवस्था पर विषेश बल दिया जायेगा क्योंकि प्रयोगशालाओं में हम अन्न/आहार तैयार नहीं कर सकते। प्रकृति ने आहार का जो उपादान दिया है, जो अन्न दिया है उसका हम स्वरूप बदल सकते हैं। इसलिये कृषि क्षेत्र में अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। भारत के बारे में सभी जानते हैं कि आर्थिक मंदी का दौर आये या कुछ भी आये तो भारत बहुधा उससे अप्रभावित रहता है क्योंकि यहां कृषि कर्म को बहुत ही सम्मान से देखा जाता है और उसके लिये सत्ता व्यवस्था का भी अपेक्षित ध्यान होता है। पूरी दुनिया में अब इसके बारे में नये सिरे से सोचना होगा। सघन वनीकरण की प्रक्रिया फिर से आरंभ होगी और इस प्रकार से जो ऋषि परंपरा है उस पर भी हमें विचार करना होगा और सर्वोपरि जो ज्ञान की दुनिया है, ज्ञान की प्रतिस्पर्धा है इसमें हमें आगे बढ़ना है। आज की दुनिया में वही ज्यादा महत्वपूर्ण रहेगा जिस के पास ज्ञान की शक्ति (नॉलेज पॉवर) होगी। निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जो 'नॉलेज पॉवर' सकारात्मक है, ध्यानात्मक है, उस दिशा में भारत के बढ़ते कदम इसे दुनिया के शीर्ष पर आसीन करेंगे। लेकिन जहाँ 'नॉलेज पॉवर' का प्रयोग नकारात्मक रूप से किया जाता है ऐसे राष्ट्रों को प्राकृतिक बाधाओं को बार-बार झेलना पड़ेगा। प्रकृति के साथ समन्वय करने वाली नई विश्व व्यवस्था होगी। प्रकृति को चुनौती देने वाली नई विश्व व्यवस्था नहीं होगी।

मनुष्य प्रकृतितः बुरा नहीं होता। राष्ट्र भी इसी तरह प्रकृतितः बुरे नहीं हैं। लेकिन जब सत्ता नायकों की दृष्टि बदलती है तो राजनीति की दिशा भी बदलती है। राजनीति की दिशा बहुत सहज सरल नहीं होती है लेकिन यह निर्माणपरक होती है। हमेशा राजनीति को निर्माणपरक ही होना चाहिये और इसी रूप में इसका संचालन भी होना चाहिये। चाहे राष्ट्र की राजनीति हो या अंतर्राष्ट्रीय राजनीति हो। अब समय आ

गया है कि सभी महत्वपूर्ण राष्ट्र कोरोना संक्रमण पर विचार करें और वर्तमान वायरस जनित संकट का समाधान करें। विनाशक वृत्ति के राष्ट्र नाभिकीय हथियारों के बजाय अब जैविक हथियारों के बारे में सोचेगें । जैविक और रासायनिक हथियार मूलतः आत्मघाती हथियार होते हैं जैसा इस समय दिखलाई दे रहा है। इसलिये विषाणुओं के समापन की बात सोचनी चाहिये । उन्हें अपने वश में करके औरों के विरूद्ध प्रयोग करना बहुधा घातक होता है। हम प्रयास करें। मानव प्रयास अंततः सफल होता है। कोई समस्या ऐसी नहीं होती जिसका समाधान नहीं होता। किसी-किसी समस्या का समाधान त्वरित होता है। कुछ समस्याओं के समाधान लंबित होते हैं जो समय के साथ धीरे-धीरे मिलने लगते हैं और हम उस समाधान की तलाश करते हैं। आज ज़रूरत है स्वास्थ्य सेवाओं पर नये सिरे से विचार किया जाये। चिकित्सकों की संख्या बढ़ा दी जाय, मेडिकल स्टॉफ की संख्या बढ़ायी जाय और डब्ल्यू.एच.ओ. का गठन नये तरीके से किया जाय। दुनिया में कहीं भी कोई बीमारी उत्पन्न होती है तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उसका मानकीकरण किया जाये, उसका नाम रखा जाये और उसके समाधान के लिये आगे बढ़ा जाये क्योंकि एक देश की बीमारी दुनिया के सभी देशों को प्रभावित कर सकती है। हम दोष चाहे चमगादड़ को दें या चीनीखोर जानवर को दें लेकिन मनुष्य के संपर्क में इसके आने की स्थिति कैसे बनी, इस पर विचार करना चाहिये। सही स्थिति क्या है इसका आंकलन होता रहेगा । आने वाले दिनों में हमें क्या करना है इस पर विचार होता रहेगा लेकिन अभी तात्कालिक आवश्यकता है कि राष्ट्र इस पर मंथन करें ।

इस व्याधि ने, इस आपदा ने, इस त्रासदी ने एक काम किया है कि विश्व के राष्ट्रों को बहुत ज्यादा निकट ला दिया है। आज दुनिया के सारे राष्ट्र एक धरातल पर खड़े हैं। आज किसी में बड़ा या छोटा होने का भान नहीं है। सबके अंदर एक समान राष्ट्र होने का भान है। उनका राष्ट्रत्व बचा रहे, उनके राष्ट्रीय निवासी बचे रहें और उनका जो प्रयास है दुनिया के अन्य देशों के बचाव में लगे, यह प्रयास होना चाहिये। आइये हम सभी मिलें, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की बात करें। आपदा ने ही सही जो हम सभी को एक प्रकार का विवेक दे रखा है, कि हमें उस महामारी का समापन करना है जिसके चलते मनुष्य का अस्तित्व संकट में आ गया है, उसे बनाए रखें। यह एकजुटता बनी रहे, एकजुटता सहयोग के लिये, एक दूसरे को समर्थन देने के लिये, एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिये नहीं होनी चाहिये। जब यह विचार होगा तब नई विश्वव्यवस्था

उस रूप में आयेगी जिस रूप के लिए हमने संकल्प लिया था। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय संगठन का निर्माण करते समय संकल्प लिया गया था कि आने वाली पीढ़ियों को युद्ध की विभीषिका से बचाना है। अब हमें नया संकल्प लेना है कि वर्तमान पीढ़ी को और आने वाली पीढ़ी को घातक विषाणु (वायरस) के संक्रमण से बचाना है। हर किसी प्रकार के विषाणु से बचाना है और किसी भी प्रकार के अभाव से बचाना है। जो जीव संरक्षण की सुविधायें हैं, मनुष्य संरक्षण की सुविधायें हैं उसे सर्वत्र पहुँचाना है। अब यह ध्येय होना चाहिये अंतर्राष्ट्रीय संगठन का। जब यह ध्येय लेकर हम आगे बढ़ेंगे तभी भारत का जो संकल्प है "सर्वे भवन्तु सुखिनः" का वह सफल होगा। विश्व व्यवस्था के संदर्भ में भारत की मान्यता सबको अपना परिवार मानने की है जैसा महोपनिषद में अंकित इस सूत्र से स्पष्ट है-"अयं निजः परोवेती, गणना लघु चेतसाम। उदारचरितानाम तु वसुधैव कुटुंबकम"। आइये इतना उदार बनें कि पूरी धरा एक परिवार की तरह दिखाई दे।

बघेल राजवंश: राजधानियों का वैभव

प्रोफेसर सी.डी. सिंह

सारांश

इस आलेख में लेखक ने गुजरात के अन्हिलवाड़ा से प्रव्रजित सोलंकी जागीरदार का मध्यप्रदेश आगमन का कारण, यात्रा मार्ग तथा चित्रकूट आगमन का कारण, मरफा, कालिंजर गहौरा में स्थापित होकर आठ पीढ़ियों तक ठाकुर की उपाधि धारण करने, धीरे-धीरे साम्राज्य स्थापित करने तथा बान्धवगढ़ से राज्य संचालन, तदोपरान्त रीवा में स्थापित होकर महत्व, वैभव प्राप्त करने का उल्लेख किया है। लेखक ने रीवा नगर के नामकरण के साथ नर्मदा के बालस्वरूप की महत्ता तथा रीवा के राजाओं की कला, संगीत, साहित्य सृजन, धर्म, दान, उदारता का वर्णन करते हुए बघेलों की पांचों राजधानियों में होने वाले क्रमिक विकास को वर्णित किया है। जिस प्रकार मौर्यवंशी अशोक, कुषाणवंशी कनिष्क तथा पुष्यभूतिवंशी हर्ष ने अपने धार्मिक कृत्यों, दान तथा उदारता जैसे जनकल्याण के कार्यों से महत्व एवं वैभव प्राप्त किया था उसी भांति बघेल राजाओं ने अपने कार्यों से जनता के कल्याण तथा आन्तरिक संतुष्टि से वैभव बढ़ाया। यहाँ प्रत्येक राजधानी में राजाओं के वैभव की चर्चा की गयी है।

मुख्य शब्द- बघेल, रीवा, नर्मदा, व्याघ्रदेव, आनंद रघुनन्दन, आनंदाम्बुनिधि

चालुक्य- सोलंकी गुजरात के अग्निवंशी राजपूत हैं जिन्हें बघेल नाम से भी प्रसिद्धि मिली। इन्हीं में एक पराक्रमी, प्रतापी राजा सिद्धराज जयासिंह भी थे | वंश के पांचवें प्रतापी राजा भीमदेव के प्रपौत्र बान्धवरात को व्याध्रपल्ली की जागीर मिली (सिंह, भारत, 1951) | कुछ उल्लेखों में इसे बाघेला गांव भी कहा गया है (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003)। यह अन्हिलवाड़ा से 10 मील दूर है। बान्धवराव के कुछ अन्य नाम यथा बाघराव, बाघदेव, व्याघ्रदेव भी मिलते हैं। इनकी सन्तानों ने अपनी पहचान बनाये रखने के लिए नाम के साथ बाघेल उपाधि[1] का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया था। इन्हीं की सन्तानों ने विन्ध्य प्रदेश के एक भू-भाग में बघेलखण्ड स्थापित किया जो बघेल राजवंश द्वारा शासित रहा।

बघेल वंश के प्रथम पुरूष व्याघ्रदेव थे जो विविध तीर्थों की यात्रा एवं सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन करते हुए चित्रकूट पहुंचे। व्याघ्रपल्ली नामक जागीर छोड़ने तथा चित्रकूट पहुँचने के कारण क्या थे तथा वे किस मार्ग से चलकर चित्रकूट पहुंचे होंगे? व्याघ्रपल्ली छोड़ने के कारणों पर जब हम विचार करते हैं तो पाते हैं कि इसका मूल कारण अलाउद्दीन खिलजी का आक्रमण था। अलाउद्दीन खिलजी के सेनापतियों उलूग खां और नुसरत खां ने 1298 ई. में रायकरण बाघेला अर्थात् राजा कर्ण को परास्त कर अन्हिलवाड़ा को नष्ट कर दिया (सिंह, 1997) और गुजरात प्रदेश को अपने साम्राज्य में मिला लिया (विकिपीडिया, 2020)। इसीलिए व्याघ्रदेव ने ब्याघ्रपल्ली छोड़ा। अलाउद्दीन खिलजी के सेनापतियों, उलुग खां तथा नुसरत खां, ने 1301 ई. में रणथम्भौर के हम्मीरदेव चौहान नामक शासक को परास्त किया था जिससे अनुमान लगाया जाता है कि व्याघ्रदेव राजस्थान की ओर न जाकर मध्यप्रदेश की ओर आये। हम जानते हैं कि विन्ध्य पर्वत श्रृंखला गुजरात में छोटा उदयपुर तक जाती है। अतः विन्ध्य पर्वतमाला का सहारा लेकर ही प्रव्रजन हुआ होगा। यह प्रव्रजन 1298 ई. के बाद हुआ। यदि हम गुजरात का देश के अन्य प्रान्तों से सम्बन्ध तथा सम्पर्क पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि लोथल, रंगपुर, धौलावीरा, वडनगर आदि स्थल सिन्धु सभ्यता के समकालीन हैं। मध्य प्रदेश में उज्जैन के पास कायथा नामक संस्कृति के साथ ही आहाड़ संस्कृति के प्रमाण स्पष्ट करते हैं कि गुजरात और राजस्थान के सैन्धव सभ्यता के स्थलों से मध्य प्रदेश के विविध स्थलों का सम्बन्ध रहा है।

मौर्यकाल में गुजरात का गिरनार एक महत्वपूर्ण स्थल था, चौदह शिलालेखों में अशोक के 10 शिलालेख गिरनार से मिले हैं। जूनागढ़ से खारवेल तथा स्कन्दगुप्त के अभिलेख तथा गुजरात से बंगाल को जाने वाला प्राचीन व्यापारिक मार्ग एवं मार्ग पर पड़ने वाले व्यापारिक नगरों से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्याघ्रदेव और उनके अनुयायियों को वर्तमान मध्य प्रदेश में प्रवेश का मार्ग ज्ञात था। व्याघ्रदेव अपने समर्थकों के साथ किस मार्ग से आये होंगे? यह कौतूहल का विषय है। हमारा अनुमान है कि बड़ौदा के पास छोटा उदयपुर के मेघनगर से मध्य प्रदेश में प्रवेश कर झाबुआ, धार, उज्जैन, खादेगाँव, नसरूल्लागंज, भोपाल, विदिशा, साँची, छतरपुर, खजुराहो, अजयगढ़, पन्ना, झाली, मझगवाँ होते हुए चित्रकूट पहुँचे होंगे। यह भी संभव है कि पन्ना से मारकुंडी एवं मानिकपुर होते हुए चित्रकूट जाने के मार्ग का सहारा लिया होगा।

हम ऊपर कह चुके हैं कि व्याघ्रदेव अपने समर्थकों के साथ तीर्थ स्थलों एवं स्थितियों का सामाजिक अध्ययन करते हुए आगे बढ़ रहे थे। इसी को आधार बनाकर उपरोक्त मार्ग का अनुमान लगाया गया है। चित्रकूट आने के कारणों पर हम जब विचार करते हैं तो हमें प्राचीन परम्पराओं, जनश्रुतियों तथा विद्धानों के मतों का सहारा लेना होगा।

प्राचीन परम्परा है कि राजा, जागीरदार, इलाकेदार, पवाईदार, ठाकुर जब भी अपने स्थान से कहीं अन्यत्र यथा तीर्थयात्रा पर जाते हैं तो उसके साथ पद एवं सामर्थ्य के अनुसार समर्थक, अनुयायी, पुरोहित, सैनिक, वैद्य, ज्योतिषी तथा मार्ग जानने वाले एवं इतिहासकार भी साथ रहते थे और यह तो विस्थापन था। व्याघ्रदेव तो स्थापना की चाह में निकले थे।

विन्ध्य भूमि एवं चित्रकूट की महिमा अपरम्पार है। अपने वनवास काल में राम तथा लक्ष्मण देश निकाला का दण्ड पालन करने यहाँ शरण प्राप्त किये थे (सिंह, 2019)। सम्भव है कि पुरोहित, ज्योतिषी, विद्वानों एवं इतिहासकारों ने व्याघ्रदेव को इस तथ्य से अवगत कराया होगा, जिसके कारण व्याघ्रदेव अपने समर्थकों के साथ चित्रकूट पहुँचे। चित्रकूट का वनवासी क्षेत्र साधना करने वालों की तपोभूमि था जहाँ सेना तथा समर्थकों के साथ दीर्घकाल तक नहीं रहा जा सकता था। अतः सामयिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक स्थितियों का अध्ययन करने वालों ने चित्रकूट के पास किसी सुदृढ़ सत्ता के न होने की जानकारी दी होगी (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003)। व्याघ्रदेव के अनुयायियों को यह भी जानकारी प्राप्त हुई कि समीपवर्ती पहाड़ी पर चंदेलों का दुर्ग 'मरफा' तत्समय रिक्त है। व्याघ्रदेव ने उस पर आधीपत्य स्थापित किया जिसे बाघेल भवन तथा साथ आये हुए लोगों के लिए जिस उपनिवेश की स्थापना हुई, वह बाघेलबाड़ी कहा गया (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003)। 15 मील अर्थात 25 कि.मी. की दूरी पर एक नाला था जिसे बाघेल नाला कहा गया जो सीमा का निर्धारक था। विन्ध्य क्षेत्र में बघेलवंश की स्थापना का यह पहला चरण था। राज्य का संचालन एवं नियंत्रण बाघेल भवन से होने लगा। स्वभाविक रूप से सप्तांग[2] (प्रसाद एवं शर्मा, 1979) एवं मण्डल सिद्धांत (अल्तेकर, 2003) के अनुसार व्याघ्रदेव ने अपनी आंतरिक व्यवस्था को सुदृढ़ किया, शत्रु और मित्र का पता लगाया जिसके अनुसार बाघेल भवन, चित्रकूट के आसपास के शक्तियों में तरौंहा राज्य, कालिंजर के

भर, मण्डिहा के रघुवंशी तथा महोबा के लोधी महत्वपूर्ण थे।

व्याघ्रदेव ने भरों को परास्त कर कालिंजर पर अधिकार[3] कर लिया (सिंह,1997) तथा राज्य का संचालन कालिंजर से होने लगा। मण्डिहा का रघुवंशी राजा मण्डिहादेव कमजोर था। इसलिए उस पर आसानी से अधिकार हो गया, किंतु लोधियों के साम्राज्य पर अधिकार करने के लिए निपुण नीति का आश्रय लेना आवश्यक था। यह सर्वविदित है कि सरयू के उस पार अर्थात गोरखपुर, देवरिया के तिवारियों का आगमन विन्ध्य क्षेत्र में बघेलों से पहले हो गया था[4]। तिवारी लोग लोधियों के मंत्री थे, व्याघ्रदेव ने उनसे मित्रता की तथा तिवारियों के नियंत्रण में लोधियों की जो सेना थी उसी की सहायता से व्याघ्रदेव ने लोधियों पर उस समय आक्रमण कर दिया जब लोधी किसी महोत्सव में मदिरा से मस्त थे (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003, पृ० 03)| इस सफलता से बघेलों की प्रतिष्ठा एवं सम्मान में वृद्धि हुई। इतिहास साक्षी है कि अपनी शक्ति एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि के लिए लोग वैवाहिक सम्बन्धों का आश्रय लेते थे। कमजोर राजा शक्ति सम्पन्न शासक को कन्या देकर शक्ति अर्जित करते थे और शक्तिशाली राजा कमजोर शासक की कन्या से विवाह कर लेते थे। इसी नीति के अनुसार तरौंहा राज्य के शासक मुकुन्ददेव ने अपनी पुत्री सिन्दुरमती का विवाह व्याघ्रदेव के साथ कर दिया जो गहोरा के शासक थे। पुत्रहीन होने के कारण मुकुन्ददेव का साम्राज्य उत्तराधिकार में व्याघ्रदेव के अधीन हो गया। बढ़ती शक्ति के कारण व्याघ्रदेव ने तरिहार एवं परदमा (यमुना के किनारे के भाग) प्रांत जीत लिया, राजधानी के रूप में गहौरा की प्रतिष्ठा बढ़ गयी। बघेलवंश के 18वीं पीढ़ी में वीरसिंह देव तक राजधानी गहौरा ही रही। राज्य अनेक मंदिरों, साफ-सुथरे मार्गों, जलाशयों, ऊँचे-ऊँचे राज प्रासाद फुलवारियों से सुसज्जित थे (सिंह, 1951 पृ० 340 - 345)। यह बघेलों की तृतीय राजधानी का वैभव था।

13वीं शताब्दी के पूर्व विन्ध्य प्रदेश कल्चुरी राजवंश के अधीन था, जिसे डाहल के कल्चुरी कहा जाता था। कल्चुरियों की एक शाखा छत्तीसगढ़ के रतनपुर में थी, व्याघ्रदेव के जेष्ठ पुत्र कर्णदेव का विवाह रतनपुर के कल्चुरि राजा सोमदत्त की पुत्री पद्मकुंवरि[5] के साथ हुआ था (दीवान, 1919)। कर्णदेव के छोटे भाई कंधरदेव को कसौटा का इलाका हिस्से में मिला| वे महाराव साहब कसौटा तथा राजा साहब बरा के

नाम से प्रसिद्ध हुए (दीवान, 1919)।

कर्णदेव और पद्मकुंवरि के विवाह के अवसर पर राजा सोमदत्त ने बांधवगढ़ का दुर्ग बघेलों को दहेज में दे दिया था। कर्णदेव ने बांधवगढ़ को अपनी नई राजधानी बना लिया (दीवान, 1919) तथा राजा बांधवेश कहे गये (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003)। इस प्रकार बांधवगढ़ बघेलों की चौथी राजधानी बन गई।
दुर्ग की महत्ता के कारण बांधवगढ़ को आक्रमणों का सामना करना पड़ता था इसलिए बांधवगढ़ बघेलो के अधीन नहीं रह पाया। वीरसिंह देव ने बांधवगढ़ पर आक्रमण किया और कुर्रवंशी राजा नारायण कौरव[6] को हराकर बांधवगढ़ पर अधिकार किया तथा अपने सामंत सल्लह को दुर्गाध्यक्ष बना दिया (शास्त्री, 1992, पृ० 24)। कुछ दिनों के बाद बांधवगढ़ पुनः बघेलों की राजधानी बन गया (सिंह, 1951, पृ०346)। यह सत्य है कि वीरसिंह देव को अनेक आक्रमणों का सामना करना पड़ा पर बांधवगढ़ पर उनका अधिकार बना रहा (शास्त्री, 1992, पृ० 24) | इस प्रकार बांधवगढ़ बघेलों के ही अधीन रहा।

वीरसिंह देव के बाद वीरभानु नामक पराक्रमी राजा बांधवगढ़ में हुए जिन्होंने हुमायूँ की सहायता की (सिंह, 2019, पृ० 54)। बघेलवंश में महाराजा रामचन्द्र संगीत प्रेमी तथा संगीतकारों के आश्रय दाता थे जो अकबर के समकालीन थे। अकबर ने आसफ खां नामक अपने प्रतिनिधि को कड़ा-मानिकपुर भेजा जहाँ सूरी बादशाह द्वारा नियुक्त गाजीखां तन्नुरी था। जो आसफ खां के भय से महाराजा रामचन्द्र के शरण में बांधवगढ़ आया जिसे अकबर की इच्छा के विरूद्ध शरण मिली (सिंह, 1951, पृ० 350) | अब्दुर्रहीम खानखाना अकबर के नौ रत्नों में थे | किसी कारण अकबर से अप्रसन्न होकर चित्रकूट आये और बांधवेश महाराजा रामचन्द्र को पत्र लिखा-

''चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध नरेश।
जापर विपदा पड़त है सो आवत इही देश''। (सिंह, 1997)

महाराजा रामचन्द्र ने रहीम को उस समय एक लाख रू सहायतार्थ भेजा (सिंह, 1951, पृ०351)। तोमर राजा मानसिंह के दरबार में गवैया तानसेन थे जो सत्तावसान के बाद

ग्वालियर से बांधवगढ़ आ गये (बृजगोपाल एवं अखिलेश, 2003, पृ०7)[7]। तानसेन की ख्याति सुनकर अकबर ने उन्हें दिल्ली बुला लिया। महाराजा रामचन्द्र के नेतृत्व में विदाई का जुलूस निकाला गया। तानसेन की पालकी को राजा ने कंधा दिया[8], यह सम्मान की पराकाष्ठा थी। तब तानसेन ने भी कहा था महाराज मैंने सदैव आपको दाहिने हाथ से अभिवादन किया है अब इस हाथ से किसी अन्य का अभिवादन नहीं करूँगा (सिंह, 1997, पृ० 269)। 1592 में महाराजा रामचन्द्र के स्वर्गवास के बाद राजकुमार वीरभद्र का राजतिलक हुआ, दिल्ली से बांधवगढ़ आते समय बरौंधा के पास पालकी से गिर जाने के कारण उनकी मृत्यु हो गयी (सिंह, 1997 पृ० 269)।

वीरभद्र के दो पुत्र विक्रमादित्य एवं दुर्योधन थे। बाल्यावस्था में होने के कारण अकबर ने पित्रदास को सेना सहित बांधवगढ़ के प्रबन्धन के लिए भेजा क्योंकि बांधवगढ़ के सरदार अशांति फैला रहे थे (दीवान, 1919 , पृ० 60-61)। पाँच वर्षों तक परोक्ष रूप से बांधवगढ़ पर अकबर का अधिकार था। बाल्यावस्था के कारण इस्माइल कुली खां के साथ विक्रमादित्य दिल्ली चले गये। 1602 ई0 में विक्रमादित्य को भट्ट देश का अधिकार देकर बांधवगढ़ भेजा गया (सिंह, 1951, पृ० 352)।

1602 ई0 में दुर्योधन को बांधवगढ़ का राजा बनाया गया (सिंह, 1997, पृ० 269)। यह बघेलों की चौथी महत्वपूर्ण राजधानी का वैभव था। 1605 ई0 में अकबर की मृत्यु के बाद जहाँगीर ने विक्रमादित्य को राजा की मान्यता दी और 18 परगना लौटाया किन्तु बांधवगढ़ नहीं दिया। विक्रमादित्य समर्थकों के साथ बांधवगढ़ से चल दिये। बीहर एवं बिछिया के संगम पर रणबहादुरगंज (सिंह, 1997, पृ० 269) में जलाल खां के अधबने महल को पूर्ण कराकर किले का रूप दिया गया। इस स्थान को राजधानी बनाया गया और रीवा नाम रखा गया। पाँचवी राजधानी के रूप में यहाँ के राजाओं की प्रतिष्ठा विविध प्रकार की कलाओं, धर्म, दान, उदारता के रूप में हुई।

रेवा नर्मदा का एक नाम है। नर्मदा की पवित्रता सर्वमान्य है। गंगा कनखल में पवित्र है तो नर्मदा सर्वत्र पुण्य देने वाली है। यह भी मान्यता है कि गंगा में स्नान करने से जितना पुण्य होता है नर्मदा का दर्शन मात्र उतना ही पुण्यदायक होता है। नर्मदा का उद्गम स्थल अमरकण्टक है जो बघेल राजाओं के साम्राज्य के अन्तर्गत था इसलिए नर्मदा के

एक नाम रेवा पर विचार करना स्वाभाविक था। ''नर्मददाति इति नर्मदा'' अर्थात मनुष्य के अहंकार को नाश करने वाली नदी कहा गया है। नर्मदा के पर्यायवाची नाम के रूप में कुल 29 नाम विकीपीडिया में उपलब्ध हैं[9]। इन नामों में से रेवा को चुनने का कारण विशिष्ट है। रेवा को ''रेवते इति रेवं'' अर्थात उचक-उचक कर चलने वाली कहा गया है। मेरी मान्यता है कि नर्मदा अपने उद्गम स्थल से निकलकर पहाड़ों में उछलती-कूदती जब तक बहती है तब तक वह बाल स्वरूपा है। नर्मदा की दूरी अमरमण्टक से खम्भात की खाड़ी भरूच तक कुल 1312 कि मी0 है। पूर्ण आयु 100 वर्ष मानने पर 10 वर्ष की आयु में नर्मदा की दूरी 132 कि0 मी0 होनी चाहिए। नर्मदा अविवाहित नदी है | उसकी 10 वर्ष की उम्र बाल स्वरूपा कन्या है। हम 10 वर्ष की कन्या को नवरात्रि में खिलाते हैं, उस कन्या की पवित्रता, महत्ता सर्वविदित है। इसी प्रकार 132 कि0 मी0 की दूरी वाली नर्मदा बाल स्परूपा है उसी का नाम रेवा है[10]। इस प्रकार कुँआरी नर्मदा के बाल स्वरूप के रेवा के नाम पर रणबहादुरगंज का नाम रेवा रखा गया जो आगे चलकर रीवा, रीमा तथा अंग्रेजों द्वारा रेवान कहा गया | अंग्रेजी में हम रीवा के लिये Rewa लिखते हैं।

वर्तमान रीवा को राजधानी के रूप में स्थापित करने का श्रेय राजा विक्रमादित्य को है। विक्रमादित्य के बाद अमर सिंह, अनूप सिंह, भाव सिंह, अनिरूद्ध सिंह, अवधूत सिंह, अजीत सिंह, जय सिंह, विश्वनाथ सिंह, रघुराज सिंह, व्यंकट रमण सिंह, गुलाब सिंह, मार्तण्ड सिंह, पुष्पराज सिंह जो वर्तमान महाराजा हैं एवं युवराज दिव्यराज सिंह उत्तराधिकारी हैं।

वैभव सामर्थ्य एवं सम्मान का सूचक है; इसमें भव्यता, ठाट- बाट तथा शान भी सम्मिलित है। यह तभी सम्भव है जब साम्राज्य का विस्तार तथा आय अधिक हो। मौर्य राजा अशोक, कुषाण राजा कनिष्क तथा पुष्यभूति वंश के राजा हर्ष को अपने धार्मिक कार्यों, सहिष्णुता, उदारता तथा दानप्रियता के कारण महान कहा गया। बघेल वंश के राजाओं की जीवन शैली दोनों प्रणालियों, युद्ध विस्तार एवं धार्मिक प्रवृत्ति को वर्णित करती है।

गुजरात के अन्हिलवाड़ा से विस्थापित जागीरदार ने मड़फा, कालिंजर एवं

गहोरा को केन्द्र बनाकर राज्य आरंभ किया और आठ पीढ़ियों तक ठाकुर कहे गये। व्याघ्रदेव ने अपने प्रयास से तरिहार एवं परदना प्रान्त जीत लिया। वंश की अट्ठारवीं पीढ़ी में वीर सिंह देव (1500-1540) ने अरैल को अपने साम्राज्य में मिलाया, यद्यपि बांधवगढ़ कर्णदेव के विवाह के अवसर पर ही दहेज में मिल गया था, परन्तु उस पर बघेलों का अधिकार स्थायी नहीं रहा। वीरसिंह देव ने ही अपने पराक्रम से बांधवगढ़ को मुक्त कराया और वहां से राज्य का संचालन आरम्भ किया। प्रारम्भ में गहोरा तथा फिर बांधवगढ़ के इस राजा ने अपने पौरूष से नरों के परिहार, गढ़ा-मण्डला के राजा (रानी दुर्गावती के श्वसुर), बांधवगढ़ के नारायण कौरव को हराया, अरैल, सहजोर, छोटा नागपुर तथा रतनपुर के राजाओं को परास्त किया और साम्राज्य सई नदी (जौनपुर), पश्चिम में धसान (वेलन की सहायक) जो रायसेन से ललितपुर जिले तक बहती है। इसके राज्य की पूर्वी सीमा बिहार तक थी।

कहा गया-

उत्तर सरिता सई लौं, पश्चिम नदी धसान।
पूरब खास विहार लौं, दक्षिण बोध प्रमाण ।।

वीरसिंह देव के काल में ही कबीरदास तथा सन्त रैदास बांधवगढ़ आये थे और महाराजा वीरसिंह देव ने ही वाराणसी में कबीर चौरा का निर्माण कराया। युद्ध कौशल के साथ सन्त महात्माओं का आदर-सम्मान वीरसिंह देव की विशेषता थी। इनके पौरूष से 1500-1540 के बीच बघेल साम्राज्य का विस्तार सबसे अधिक हुआ तथा बघेल भारत के वैभवशाली राजाओं में प्रतिष्ठापित हो गए।

वीरसिंह देव के पुत्र वीरभानु नीति निपुण, कुशल प्रशासक और योद्धा थे। माधव मिश्र ने इनके सम्मान में वीरभानूदय काव्य की रचना की। चौसा के युद्ध में पराजित मुगल शासक हुमायूं की सहायता करना, उसकी पत्नी, बहन को दिल्ली तक पहुँचाना साथ ही शेहशाह सूरी से बैर लेना इनके पराक्रम को वर्णित करता है।

इनके पुत्र महाराजा रामचन्द्र संगीत, साहित्य एवं कला प्रेमी थे। प्रसिद्ध गवैया तानसेन को आश्रय देना, अब्दुर्रहीम खानखाना को चित्रकूट में एक लाख रूपयों की सहायता उनकी दानवीरता को स्थापित करता है। अकबर जैसे शक्ति सम्पन्न सम्राट

की इच्छा के विरूद्ध गाजी खां तन्नूरी को संरक्षण देना इनके साहस को वर्णित करता है। समसामयिक लेखक गोविन्द भट्ट ने "रामचन्द्र यश प्रबन्ध" नामक ग्रन्थ की रचना की थी।

महाराजा रामचन्द्र के पुत्र वीरभद्र भी साहित्य प्रेमी थे। संस्कृत के दो ग्रन्थों कथासरित तथा दशकुमार नामक ग्रन्थ की रचना का श्रेय इन्हें दिया जाता है। अपने पौरूष से समीपवर्ती राजाओं से युद्ध कर 100 हाथियों की व्यवस्था की जिसे इनकी माता ने दान में दिया। पालकी से गिरकर बरौधा के पास इनकी मृत्यु हो गयी। अकबर के हस्तक्षेप से बांधवगढ़ में स्थिरता आयी | दुर्योधन राजा घोषित हुए और कुछ दिनों बाद विक्रमादित्य बांधवगढ़ छोड़कर रीवा में स्थापित हुए तथा रीवा को अपनी राजधानी बनाया ।

बघेल वंश की राजधानी रीवा में विक्रमादित्य सहित महाराजा पुष्पराज सिंह (वर्तमान महाराजा) तक चौदह पीढ़ियों का राज्य है और युवराज दिव्यराज सिंह उत्तराधिकारी हैं। युवराज सहित इन पन्द्रह पीढ़ी के अधिकांश राजाओं का इतिहास गौरव से परिपूर्ण है। राजधानी रीवा के संस्थापक महाराजा विक्रमादित्य के गौरव की सदैव प्रशंसा की जाती रहेगी।

रीवा राजधानी से राज्य करने वाले प्रायः सभी राजा शांतिप्रिय, कला, धर्म, साहित्य के प्रेमी, प्रजारक्षक एवं उदार हृदय के रहे। युद्ध में इनकी रूचि नहीं थी किन्तु आत्मरक्षा, राज्य के संचालन तथा आन्तरिक कलह को शान्त करने के लिये इन राजाओं ने कुछ युद्ध भी किये।

बांदा के नवाब अली बहादुर ने रीवा पर आक्रमण कर दिया। महाराजा अजीतसिंह ने चन्देल रानी कुन्दन कुँवरि की कुशल प्रेरणा तथा कल्चुरियों की सहायता से यह युद्ध जीत लिया। कलन्दर सिंह कलचुरि ने नवाब अलीबहादुर के सेनापति यशवन्तराव नायक का सिर काट लिया जिससे महाराजा अजीत सिंह की महिमा में वृद्धि हुई और कलचुरि किले के विश्वास पात्र हो गये।

महाराजा अनिरूद्ध सिंह की हत्या नईगढ़ी के सेंगरों ने कर दिया | सेंगरों के आक्रमण को रोकने तथा राजधानी की रक्षा को ध्यान में रखकर रीवा से 16 कि0 मी0 दूरी पर बघेलों ने अपने सबसे विश्वासपात्र कलचुरियों को बसाया[11] । आज भी रायपुर कलचुरियान नामक ग्राम आबाद है।

रीवा ने महाराजा अवधूत सिंह के शासन के समय 1754 ई. में बुन्देलों का आक्रमण भी झेला । महाराजा विश्वनाथ सिंह ने राज्य की आन्तरिक अशान्ति को समाप्त करते हुए सामन्तों, इलाकेदारों, ठाकुरों को अधीन किया जिनमें रामनगर, सेमरिया, चंदियां, क्योंटी, जिरौहा, चुरहट के राव, नईगढ़ी के सेंगर प्रमुख थे । अपनी सेना में हारौल तथा चन्द्रौल की व्यवस्था की । न्यायप्रिय होने के कारण मिताक्षरा प्रणाली पर कचहरी स्थापित की । महाराजा विश्वनाथ सिंह राम के भक्त थे । उन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी में रचनाएं कीं (सिंह, 1997, पृ० 280 -283) तथा सगुण परम्परा के पोषक होने के कारण कुछ टीका भी लिखा । इन्होने 12 टीकाएं, 5 काव्य, दो लक्षण ग्रन्थ तथा 28 ग्रन्थ हिन्दी में लिखे । हिन्दी का प्रथम नाटक आनन्द रघुनन्दन सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है । किले के सामने राजाधिराज के मन्दिर का निर्माण, लक्ष्मण बाग की स्थापना आपकी भक्ति भावना को प्रकट करते है।

महाराजा रघुराज सिंह ने आन्तरिक कलह को समाप्त कर राज्य व्यवस्था को चुस्त-दुरूस्त किया । आय बढ़ी, गोविन्दगढ़ नामक नगर बसाया और वहाँ एक बड़ा तालाब बनवाया । काशी में अस्सीघाट पर रीवा कोठी महाराज विजयनगरम ने महत्ता के कारण प्रदान की । तेन्दुन खानदान के बघेलों की कोठी नष्ट कर दिया । चौहानों को भी तहस-नहस किया । मैहर एवं विजयराघौगढ़ के राजाओं-ठाकुरों को परास्त किया । अमरकण्टक और सोहागपुर का इलाका जो भोसलों के अधिपत्य में था उसे बघेलखण्ड में पुनः मिला दिया । इलाकेदारों-सामन्तों को रीवा में रहने की आज्ञा दे दी और अपने राज्य से रेलमार्ग निकलने के लिए भूमि दी।

महाराजा रघुराज सिंह तीर्थयात्राओं का शौक रखते थे | काशी, प्रयाग, उड़ीसा में जगन्नाथ पुरी की यात्रा की और स्वर्ण तुला दानकर गरीबों को बाँटा । महिमा इतनी बढ़ी कि महाराजा जय सिंह जो पन्द्रह तोपों की सलामी के हकदार थे, महाराजा

विश्वनाथ सिंह सत्रह तोपों की और महाराजा रघुराज सिंह उन्नीस तोपों की सलामी के पात्र हो गये।

महाराजा रघुराज सिंह के तीन व्यसन थे काव्य सृजन, शिकार खेलना और विवाह करना। काव्य सृजन में 9 रचनाएं जिनमें जगदीश शतक तथा आनन्दाम्बुनिधि विशेष महत्वपूर्ण हैं। आपने कुल 12 विवाह किये थे। कोई भी राजा अपनी पुत्री का विवाह किसी राजा से तब करता है जब वह शक्तिशाली, गौरवशाली हो। यह वैवाहिक संबंध स्पष्ट करता है कि महाराजा रघुराज सिंह का वैभव अधिक था।

महाराजा व्यंकट रमण सिंह ने अपने विरोधियों को नगर से बाहर किया, उर्दू के स्थान पर हिन्दी भाषा को स्थापित किया। आपकी सेना में रूचि थी। स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग आपके अभिरूचि का हिस्सा था। पूर्वजों के ग्रन्थों का प्रकाशन, तीर्थों की यात्रा आपके जीवन के उदाहरणीय कार्य हैं। महाराजा गुलाब सिंह जनप्रिय थे। इन्होंने भूमि कर को कम करके लोकप्रियता प्राप्त किया। शिक्षा के लिये स्कूल एवं डिग्री कालेज खोला तथा आप इंग्लैंड भी गए। राज्य के कुशल संचालन के लिए 12 तहसील बनायी गईं। आप मौलिक अधिकारों के पक्षधर थे जिसका कानून बनाया, अपनी रियासत की भाषा हिन्दी को बनाया। स्वाधीनता आन्दोलन में आपका योगदान अविस्मरणीय रहेगा। महाराजा मार्तण्ड सिंह ने 1946 में राज्यभार ग्रहण किया। 1970-71 में सरकार ने राजाओं का प्रीवीपर्स समाप्त कर दिया, तबसे राजाओं की स्थिति बदल गयी। पद्मभूषण पुरस्कार सुशोभित महाराजा मार्तण्ड सिंह जी ने सफेद शेरों की खोज की तथा तीन बार सांसद रहे। आधुनिक कर्ण की उपाधि, उनकी उदार दानवीरता के कारण उन्हें मिली। शिक्षा के प्रचार-प्रसार में योगदान, सैनिक स्कूल, दरबार कालेज जिसे आज टी0आर0एस0 कालेज कहते हैं तथा आई0टी0आई0 की स्थापना का श्रेय महाराजा मार्तण्ड सिंह जी को दिया जाता है। महाराजा पुष्पराज सिंह वर्तमान महाराजा हैं। कला पारखी, कत्थक के विशेषज्ञ, व्यंजन विशेषज्ञ तथा वाइल्ड लाइफ बोर्ड में सदस्य रहने का सौभाग्य उन्हें मिला है। आप मध्य प्रदेश सरकार में मंत्री भी रहे हैं।

महाराज कुमार अथवा युवराज दिव्यराज सिंह का जन्म 1984 में मुम्बई में

हुआ। बघेल राजवंश के आप उत्तराधिकारी हैं। दो बार से सिरमौर विधानसभा क्षेत्र से विधायक हैं । सामाजिक कार्यो के प्रति अभिरूचि तथा जन कल्याण आपकी लोकप्रियता का कारण है।

उपरोक्त विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण के कारण विस्थापित बघेल गुजरात से राजस्थान न जाकर मध्य प्रदेश की ओर प्रस्थान किये। तीर्थस्थलों, धार्मिक स्थलों की यात्रा करते हुए विन्ध्य श्रृंखला एवं प्राचीन व्यापारिक मार्गों से होते हुए महत्वपूर्ण तीर्थस्थल चित्रकूट पहुँचे। चन्देलों के खाली किले को बघेल भवन के रूप में स्थापित किया और बघेल नाला तक का क्षेत्र अधिकार में लिया। पुनः कालिन्जर तथा गहोरा को राजधानी बनाकर राज्य संचालन आरम्भ किया। धीरे-धीरे नीति-निपुणता तथा युद्ध कौशल के कारण बघेल वंश का साम्राज्य बढ़ता गया । व्याघ्रदेव, वीरसिंह देव प्रारम्भिक पराक्रमी राजा हुए । बांधवगढ़ आधिपत्य में लेने के बाद वीर सिंह देव, वीर भानु तथा महाराजा रामचन्द्र एवं वीरभद्र की सफलताओं तथा पराक्रम से वैभव में वृद्धि हुई। कला एवं संगीत प्रेमी महाराजा रामचन्द्र ने भारतीय इतिहास के महान राजाओं की तरह महानता एवं वैभव की दिशा ही बदल दिया और ख्याति पायी। जब राजधानी रीवा में स्थापित हुई तो दया, दान, सहिष्णुता, संरक्षण, उदारता, धार्मिक सदभाव एवं समभाव की प्रवृत्ति, कला एवं साहित्य की रचना एवं संरक्षण ने इतना प्रभाव डाला कि महाराजा विश्वनाथ सिंह, महाराजा रघुराज सिंह भारत के महत्वपूर्ण राजाओं में गिने गये । बाद में महाराजा गुलाब सिंह ने मौलिक अधिकारों का कानून बनाया, महाराजा मार्तण्ड सिंह को पदमभूषण की उपाधि मिली तथा वह सामयिक कर्ण कहे गये । कला पारखी, वन्य जीव प्रेमी तथा व्यंजनों में निष्णात महाराज पुष्पराज सिंह ने राजा होकर जनता की सेवा का भार उठाया, मंत्री बने। उनके पुत्र युवराज दिव्यराज सिंह ने भी जनसेवा का बीड़ा उठाया है। उनकी लोकप्रियता रीवा जिले में अन्य जनप्रतिनिधियों की अपेक्षा अधिक है।

चित्रकूट की महिमा, प्रसादोपरान्त आरम्भ हुआ वैभव धीरे-धीरे बढ़ता गया और बांधवगढ़ होता हुआ पाँचवी राजधानी रीवा के रूप में विस्तारित हुआ। बघेल राजाओं ने वैष्णव धर्म स्वीकार करते हुए गद्दी भगवान राम को समर्पित कर दी और

उनकी कृपा से वैभव बढ़ता गया। आवास के रूप में मरफा (चन्देलों का खाली किला) बांधवगढ़, (कलचुरियों का दहेज में मिला किला) और वर्तमान रीवा का किला सूरी वंश का था जो खाली मिला था, को अपना आशियाना बनाकर कार्य किया। उन्हीं कर्मों ने राजाओं के आन्तरिक वैभव को बढ़ाया और वर्तमान रीवा, सतना, सीधी, शहडोल, अनूपपुर, उमरिया तथा विजय राघौगढ़ का भूभाग आज भी बघेलखण्ड के नाम से जाना जाता है।

सन्दर्भ

बृजगोपाल, एवं अखिलेश, एस0 (2003). स्वतंत्रता आन्दोलन, रीवा: गायत्री पब्लिकेशन।

दीवान, जे0 एस0 (1919). रीवा राज्य दर्पण, प्रयाग: uniyan प्रेस तथा रीवा दरबार।

पाण्डेय, जे0 (1983), पुरातत्व विमर्श, इलाहाबाद: प्राच्य विद्या संस्थान।

प्रसाद, ई0, एवं शर्मा, एस0 (1979). प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन, इलाहाबाद : मीनू पब्लिकेशन।

विकिपीडिया(2020).हिस्ट्रीऑफगुजरात,https://en.wikipedia.org/wiki/Karna_(Vaghela_dynasty)।

सिंह, भारत (1951). भारत विनोद इतिहास अर्थात चालुक्य वंश रत्नमाला सप्तम बघेल खण्ड – भोपाल।

सिंह, सी0 डी0 (1997). अपराजेय प्रो0 राजललन सिंह स्मृतिग्रन्थ . इलाहाबाद : प्रो0 राजललन सिंह स्मृतिग्रन्थ समिति।

सिंह, सी0 डी0 (2019). विन्ध्य की सुकृति का सिंहावलोकन, विन्ध्य भारती. रीवा: ए पी एस विश्वविद्यालय।

अल्तेकर, ए एस (2003), प्राचीन भारतीय शासन - पद्धति, वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।

शास्त्री, आर0 एस (1999). क्योटी की गढ़ी, रीवा: विन्ध्य साहित्य प्रकाशन।

1. अपने गांव, शहर, प्रदेश के नाम लिखने की परम्परा आज भी प्रचलित है। जैसे मऊँगंज के एक पूर्व विधायक श्री सुखेन्द्र सिंह बन्ना जो बन्ना गांव के रहने वाले हैं। फिराक गोरखपुरी जिनका असली नाम श्री रघुपति सहाय था। इसी प्रकार आजमगढ़ के श्री कैफी आजमी, जयपुर के श्री हसरत जयपुरी, बदांयू के श्री शकील वदांयूनी आदि।
2. सप्तांग की अवधारणा वैदिक काल से ही रही है। महाभारत, कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा स्मृतियों में भी इसका वर्णन मिलता है पर कौटिल्य के अर्थशास्त्र के सप्तांग सिद्धांत को अपेक्षाकृत अधिक मान्यता मिली।
3. प्रो० राजललन सिंह ने लिखा है कि गुजरात से आकर दो भाई कालिंजर के भरों के यहाँ नौकरी कर ली फिर सेनापति हो गये थे|
4. बघेलखण्ड के सरयूपारी तिवारी लोगों में मान्यता है कि सरयूपार के हन्ना नामक गांव से तिवारी लोग बघेलखण्ड में बनाये रखने के लिए हन्ना नाम गांव बसाया जो आज भी शंकरगढ़ के पास स्थित है।
5. यहॉ पदम कुँवरि का नाम पदम् कुमारी मिलता है।
6. राम सागर शास्त्री ने कुरूवंशी राजा का नाम सत्यनारायण दास लिखा है।
7. ब्रजगोपाल एवं एस० अखिलेश ने अपनी पुस्तक स्वतंत्रता आन्दोलन पृ० 7 पर तानसेन के रीवा आने का उल्लेख किया है जबकि राजा रामचन्द्र के शासनकाल में रीवा राजधानी ही नहीं बनी थी।
8. हिन्दू परम्परा में जब कोई लड़की विवाह के बाद विदा होती है तो उसे कुछ दूर तक प्रायः गांव की सीमा तक पहुंचाया जाता है तथा जब कोई अपना नजदीकी मृत्यु को प्राप्त करता है तो उसके सम्मान में अर्थी को कन्धा दिया जाता है।
9. 1. उमा रूद्रांग सम्भूता, 2. त्रिकूटा, 3. रेवा 4. ऋक्षपाद प्रसूता, 5. मेकल सुता 6. सोमोदभवा 7. शंकरी 8. दक्षिण गंगा 9. मुरून्दला 10. मुरला 11. इन्दुभवा 12. महार्णवा 13. तमसा 14. विदिशा 15. करमा 16. मुना, 17. चित्रोत्पला 18. विपाशा 19. रंजना 20. बालूवाहिनी 21. कृपा 22. विपाया 23. विमला

24. शोठा 25. महानद 26. सरसा 27. चिरकौभारी 28. अनन्ता 29. मंदाकिनी

10. नर्मदा 140 कि०मी० कहने के बाद पश्चिम दिशा से दक्षिण को मुड़ जाती है कुछ दूर जाने के बाद पुनः उत्तर की ओर आकर मण्डला के पास से गुजरती है।
11. प्राचीनकाल में जब यातायात के सुलभ मार्ग नहीं थे तब पैदल चल कर सार्ध 16 कि०मी० की दूरी तय करता था।

वैश्वीकरण एवं मीडिया मूल्य

नंदिनी हर्षदराय द्विवेदी
प्रोफेसर विनोद कुमार पाण्डेय

सारांश

"मैं अब भी मानता हूं कि यदि आपका उद्देश्य दुनिया को बदलना है, तो पत्रकारिता एक और तात्कालिक अल्पकालिक हथियार है ।"-टॉम स्टॉपर्ड (Stoppard, 2019)

वैश्वीकरण के दौर में विश्वग्राम की अवधारणा को कुछ विद्वानों ने साम्राज्यवादी सोच कहा है | वैश्वीकरण के आगमन और बाज़ार के हावी होने पर दृष्टि डालें तो हम पाएंगे कि बाज़ारवाद मीडिया को प्रभावित कर रहा है | वैश्वीकरण बाज़ारवाद को प्रोत्साहित करता है | बाज़ार अब विज्ञापनों पर आधारित है | समाचारपत्रों की भाषा, कंटेंट पर जिस तरह से बाज़ार हावी है उससे मीडिया के भविष्य को लेकर प्रश्न खड़ा होना स्वाभाविक है |

पत्रकारिता अभिव्यक्ति का एक माध्यम है जिसके ज़रिए समाज को सूचित, शिक्षित और उसका मनोरंजन किया जाता है | पत्रकारिता के माध्यम से आने वाले किसी भी संदेश का समाज पर व्यापक असर पड़ता है जिससे मानवीय व्यवहार को निर्देशित और नियंत्रित किया जा सकता है | ऐसे में एक विशाल जनसमूह तक भेजे जाने वाले किसी संदेश का उद्देश्य क्या है? और वह किससे प्रेरित है? यह सवाल काफी महत्वपूर्ण है | समय के बदलते परिदृश्य में संदेशों को कुछ अलग तरीके से, थोड़ा रोचक रीति से व विभिन्न तरीकों से जनसमूह के समक्ष प्रकाशित, प्रसारित करने की होड़ मची है | इसके पीछे तथ्यों को तोड़ने-मरोड़ने और सनसनीखेज़ बनाने की प्रवृत्ति ने कई विकृतियों को जन्म दिया है, जो बनावटी और पीत पत्रकारिता के दायरे में आता है | वैश्वीकरण के दौर में पत्रकारिता का स्वरूप बदल गया है | ज्यादातर संगठन आगे निकलने की होड़ में पत्रकारिता के सिद्धांतों की अनदेखी कर रहे हैं | अधिकतर समाचार संगठनों का उद्देश्य बड़े जनसमूह को किसी भी तरीके से बांधे रखना है, ताकि उनके व्यवसाय का स्त्रोत विज्ञापन स्थाई रूप से बना रहे | इस प्रकृति ने पत्रकारिता की

नैतिकता को खतरे में डाला है|

बाज़ारवाद के युग में आज मीडिया में मूल्यों की कमी स्पष्ट नजर आ रही है, यह एक बड़ा संकट है | मूल्यों की गिरावट के कारण मीडिया अपना वास्तविक मूल्य वर्तमान में खो रहा है | प्रस्तुत शोध पत्र में 'वैश्वीकरण एवं मीडिया मूल्य' का अध्ययन किया गया है|

इस शोधपत्र में सर्वेक्षण पद्धति एवं विषय वस्तु विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है | अहमदाबाद क्षेत्र के लोगों का सर्वेक्षण कर वैश्वीकरण के असर का अध्ययन किया गया है|

मुख्य शब्द : वैश्वीकरण, बाज़ारवाद, मीडिया, मूल्य, पीत पत्रकारिता, समाज

प्रस्तावना

स्वतंत्रताकालीन भारतीय पत्रकारिता ने भारतीयता, राष्ट्रीयता, मानवीय अस्मिता और मूल्यों के पुनः प्रतिष्ठापन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है| उस समय से उसकी आत्मा-नैतिकता और लक्षण था – जनमंगल | आज आधुनिक पाश्चात्य जीवन-मूल्यों से प्रभावित पत्रकारिता पूर्णतः व्यापारिक और उपभोक्तावादी अपसंस्कृति से ग्रस्त है। आज की पत्रकारिता में व्यवसायिक हित सर्वोपरि है। आज पत्रकारिता दूषित और विकृत है, जो व्यवसायिक हितों के पक्ष में है, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आज अर्थोपार्जन का माध्यम मात्र है । इलेक्ट्रानिक मीडिया के युग में विश्सनीयता संकटग्रस्त है, नैतिक मूल्यों को दांव पर लगाना इनके लिए बायें हाथ का खेल हो गया है। पूर्व की सरकारों के समय में समाचार-माध्यम संपूर्ण परम्पराओं और नैतिक मूल्यों को ताक पर रख देते नजर आते हैं।

पत्रकारिता के आदर्शों की बातें चाहे जितनी भी की जाएँ, वास्तविकता यही रह गई है कि पत्रकारिता में आदर्शों का गला घोंटा जा रहा है। कुछ पत्रकारों के दिलों में आदर्शों के लिए तड़पन भले ही रह गई हो, आदर्श कहीं नहीं रहा। उत्तेजनापूर्ण हो जाने का स्वप्न मात्र कोरी कल्पना है (Essay, 2019)। समाचार और विचार में फर्क तभी नजर आता है जब समाचार केवल तथ्यों के सहारे ही लिखा जाता है और विचार की

सही व्याख्या होती हो, पर आज समाचार और विचार को ही विकृत किया जा रहा है।

मूल्यों का कोई साँचा नहीं होता। मूल्यों का साँचा प्रेम, आपसी सद्भाव तथा सामूहिक शान्ति से बन पाता है। जब ऐसे साँचे बनते रहेंगे तभी हम पथभ्रष्ट होने से बच सकेंगे । आज आधुनिकता के मोह में अधिकांश पत्र-पत्रिकाएँ उपभोक्तावाद, बाज़ारवाद, वैश्विकता की वाहक हैं। आज समाचार पत्रों पर भी व्यवसायिकता हावी है, ये भी मिशन की अपेक्षा प्रोफेशन और फैशन के पर्याय हैं। अर्थोपार्जन के प्रमुख माध्यम होने के कारण आज व्यवसायिक पत्रकारिता प्राथमिक बन गई है। जनसंचार के नए माध्यमों में रेडियो, टीवी और न्यू मीडिया के आगमन के बाद प्रतिस्पर्धा का एक नया दौर शुरू हुआ, जिसने पीत पत्रकारिता को बढ़ावा दिया है। सिर्फ पत्र-पत्रिकाओं के बीच प्रसार संख्या और विज्ञापन को लेकर होड़ थी, लेकिन रेडियो के बाद टीवी और फिर बाद में न्यू मीडिया आने से यह होड़ और बढ़ गई है। पत्रकारिता का परिदृश्य एकदम बदल गया है। बाजार में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए हर माध्यम को काफी जद्दोजहद करनी पड़ी। सबसे तेज और सबसे अलग दिखने वाले इस माहौल में पत्रकारों से भूल आम बात हो गई, जिससे पीत पत्रकारिता को हर माध्यमों के जरिए पनपने का अवसर मिला।

राजा राममोहन राय, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू एवं बाबूराव विष्णु पराड़कर सहित कई उल्लेखनीय नाम हैं जिनकी पत्रकारिता जनसेवा से जुड़ी थी। यही कारण है कि महात्मा गांधी ने अपने पत्र और पत्रिकाओं में विज्ञापन को स्थान देने से इंकार कर दिया था। उनका मानना था कि यह नई विकृतियों को जन्म देगा (कुमार, 2014)।

वैश्वीकरण और पीत पत्रकारिता

वैश्वीकरण के इस दौर में पत्रकारिता का परिदृश्य पूरी तरह बदल गया है | बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में भारत में निजी चैनलों का आगमन हुआ। 'जी न्यूज़ ' ने जब पहली बार समाचारों का प्रसारण किया तो वह समाचार 'दूरदर्शन' के समाचारों से बिल्कुल अलग हटकर थे। पारंपरिक तरीके से समाचार देखने के आदी दर्शकों को एक मसालेदार और सनसनीखेज अंदाज में समाचार देखने का मौका मिला। इसने दर्शकों को अपनी और खींच लिया। इस रुझान को देखते हुए आने वाले समय में

चैनलों की बाढ़ आ गई, जिन्होंने मसालेदार और सनसनीखेज तरीके को ही समाचार प्रस्तुतीकरण का हिस्सा बनाया। राजनीति के अलावा अपराध की खबरों को सबसे अधिक बिकाऊ माना गया, जिसमें रहस्य, रोमांच, जिज्ञासा, सेक्स और मनोरंजन का पुट डाला गया (Wikipedia, 2019)। टीवी चैनल के मालिक यह समझ गए कि ऐसे कार्यक्रमों से टीआरपी, विज्ञापन और दर्शक आसानी से मिल जाते हैं। उन्हें इस बात की कोई परवाह नहीं रही कि इस तरीके से नई पत्रकारीय संस्कृति का जन्म होगा और प्रकाशित/प्रसारित होने वाले ज्यादातर समाचार पीत पत्रकारिता की श्रेणी में आ जाएंगे।

वैश्वीकरण का असर भी भारतीय पत्रकारिता पर साफ दिखा, जब पश्चिमी देशों में प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों की नकल की गई। 1995 में ज़ीटीवी ने 'इंडियाज मोस्ट वांटेड' नामक कार्यक्रम के जरिए अपराध जगत से जुड़े समाचारों का प्रसारण शुरू किया | यह पूरी तरह ब्रिटेन और अमेरिकी टीवी चैनलों में प्रसारित होने वाले कार्यक्रम की नकल थी | भारतीय दर्शकों ने इसे काफी पसंद किया | इसे भांपते हुए एक के बाद एक चैनल इस तरह के कार्यक्रमों की कड़ी में जुड़ गए (चोपड़ा, 2008)।

बाज़ारवाद ने बदला पत्रकारिता का स्वरूप

समाचार पत्र समाज सेवा का माध्यम था किन्तु वर्तमान युग में पत्रकारिता भी एक व्यवसाय बनता जा रहा है। बाज़ारवादी ताकतों ने पत्रकारिता को व्यवसाय की जगह व्यापार का स्वरूप प्रदान कर दिया। इसे ध्यान में रखते हुए कई बड़े राजनीतिक और व्यवसायिक घरानों का पत्रकारिता के क्षेत्र में आगमन हुआ। संचालन पूंजीपति और उद्योगपति द्वारा किया जाने लगा। इसका मुख्य उद्देश्य जनसेवा न होकर समाज और सत्ता पर नियंत्रण बनाए रखना है। उन्हें यह भली भांति मालूम है कि पत्रकारिता एक ऐसा जरिया है जिससे जनसमूह में पैठ बनाई जा सकती है। उन्होंने जनसमूह को आकर्षित करने के लिए उनकी रुचियों को बदलने का प्रयास किया, जो पीत पत्रकारिता के तरीकों से ही संभव हुआ।

बाज़ारवाद के युग में प्रसार संख्या बढ़ाने की लालसा में अपराध, सेक्स और मनोरंजन को विशेष प्रकाशन दिया गया। भड़काऊ तस्वीरों के साथ अपराध के

समाचारों के प्रस्तुतीकरण ने एक खास पाठक वर्ग को बहुत आकर्षित किया। इससे इनकी प्रसार संख्या में काफी इजाफा हुआ। अन्य माध्यमों द्वारा ट्रिपल सी फार्मूला (क्रिकेट, क्राइम और सिनेमा) अपनाए जाने के कारण पत्रकारिता में पीत का समावेश होता चला गया (शर्मा, 2014)। 90 के दशक तक हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने प्रसार के मामले में अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं को पीछे छोड़ दिया, जिससे प्रसार संख्या और विज्ञापन को लेकर जबरदस्त होड़ शुरू हुई। यहां से पीत पत्रकारिता ने अपना पांव पसारना शुरू किया। मीडिया का व्यवसायीकरण चरमोत्कर्ष पर है।

आधुनिक समाज और विज्ञापन

आज के युग को अगर विज्ञापन का युग कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। ऐसा लगता है कि विज्ञापन जीवन में सर्वव्यापी होने लगा है। विज्ञापन आर्थिक विकास का एक तीव्र तथा प्रभावशाली माध्यम है और सामाजिक परिवर्तन का भी सशक्त उपकरण है। व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक विज्ञापन से निरंतर सरोकार रखता है (आलोक, 2009)। खाने-पीने, घर-द्वार, रहन-सहन से लेकर धर्म, राजनीति, समाज के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञापन ने अपना स्थान बना लिया है। औद्योगीकरण ने पाठक एवं दर्शक को उपभोक्ता बना दिया और उपभोक्ता के निर्णय में विज्ञापन की अहम भूमिका है।

मीडिया में नैतिकता का पालन

वर्तमान युग में पत्रकारिता अथवा प्रेस को चौथी सरकार अथवा लोकतन्त्र का चतुर्थ स्तंभ कहा गया है। यह जनता का स्वयं निर्मित और स्थापित स्तंभ है। चूँकि प्रेस के भी कुछ नैतिक कर्तव्य और दायित्व हैं, भले ही वर्तमान में इसका स्वरूप भी औद्योगिक प्रकृति में डूब-सा गया दिखाई देता है। नैतिकता समाचारों की तथ्यात्मकता और निष्पक्षता, गोपनीयता एवं विभिन्न समुदायों की धार्मिक मान्यताओं/परम्पराओं का सम्मान, हिंसा और सामुदायिक सौहार्द भंग होने से संबधित सूचनाओं की रिपोर्टिंग और न्यायिक निर्णयों की आलोचना में सावधानी बरतने की आवश्यकता, सूचना के स्त्रोत की गोपनीयता बनाए रखने एवं अश्लीलता और अशिष्टता से परहेज करने की जरुरत को बताता है।

आज के परिदृश्य में सबसे महत्वपूर्ण बात नैतिक मूल्यों के क्षय को रोकना है। जब हम बाज़ार अर्थव्यवस्था, उपभोक्तावाद और वैश्वीकरण की बात करते हैं, बाज़ार की बात करते हैं, तो इसका मतलब यह नहीं है कि बाज़ार का संबंध नैतिक मूल्यों से नहीं है। आज आवश्यकता है कि हम ऐसे बाज़ार का विकास करें जो मूल्यों पर आधारित हो। अगर ऐसा नहीं है तो हम कहीं के नहीं होंगे। केवल मूल्य आधारित बाज़ार स्थायी है। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यवसायिक मीडियाकर्मियों में नैतिकता और नीति विषयक प्रश्नों पर कुछ उदासीनता विद्यमान है। मनुष्य में नैतिकता, संस्कृति और मूल्य के प्रति तड़प पैदा करना ही पत्रकारिता का धर्म है, आचार-संहिता का यही मर्म है, मूल-मंत्र है।

आज की पत्रकारिता का रवैया

आज की पत्रकारिता में बिना स्त्रोत के भी समाचार लिखे जा रहे हैं। उनका चुनाव भी राजनीतिक और आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर किया जा रहा है। यह पत्रकारीय सिद्धांतों के खिलाफ है जो पीत पत्रकारिता को बढ़ावा देता है। बदलते पत्रकारीय परिदृश्य में प्रबंधन ने तथ्यों को तोड़ने, मरोड़ने, समाचार को सनसनीखेज बनाने, चटपटी कहानियां प्रस्तुत करने और भड़काऊ चित्रों को प्रकाशित और प्रसारित करने को संपादकीय नीति का हिस्सा बना दिया। संपादकों पर ऐसा करने का दबाव डाला गया। धीरे-धीरे पीत पत्रकारिता समाज में अपनी जड़ें मजबूत करती गई। पत्रकारिता की साख बनाए रखना हमेशा से चुनौतीपूर्ण रहा है, क्योंकि इनमें सिद्धांतों का पालन करना जरूरी होता है।

मीडिया का कार्य

मीडिया का काम केवल धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक बुराइयों के खिलाफ आंदोलन छेड़ना ही नहीं बल्कि पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं के बीच संवाद शुरू करना भी है और बिखरे हुए समाज को एकत्रित करना भी है। जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण होता है उसी प्रकार मीडिया भी समाज का दर्पण है। दूसरे देश को जानने का प्रबल माध्यम मीडिया ही है।

बदलती पत्रकारिता के मूल्य

पत्रकारिता के विविध आयाम हैं और ये युग सापेक्ष मूल्यों के साथ मानवीय मूल्यों को स्वर प्रदान करते हैं। इसलिए इसका सम्बन्ध साहित्य, व्यापार, व्यवसाय, राजनीति, विज्ञान, शिक्षा इत्यादि से है।

अध्ययन का महत्व

आज वैश्वीकरण और बढ़ते बाज़ारवाद के कारण मीडिया की भूमिका बदल गई है। अब मीडिया का तंत्र महत्वपूर्ण समाज की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। इस शोधपत्र के माध्यम से वैश्वीकरण के समय में मीडिया की स्थिति का रेखाचित्र यहाँ प्रस्तुत किया है। इस परिप्रेक्ष्य में हम मीडिया में बाज़ारवाद का महत्व और उसकी आवश्यकता तथा उसके असर का अध्ययन कर उनके नुकसान पर ध्यान केंद्रित करेंगे। इस शोध कार्य में 'वैश्वीकरण एवं मीडिया मूल्य' को समझने का एक प्रयास भी है।

अध्ययन के उद्देश्य

- वैश्वीकरण के दौर में मीडिया की वर्तमान स्थिति का अध्ययन
- बाज़ारवाद का मीडिया पर पड़ने वाले प्रभावों की ख़ोज
- वैश्वीकरण से मीडिया के मूल्यों में आए परिवर्तनों की जाँच

संबधित साहित्य का पुनरावलोकन

उमाशंकर श्रीवास्तव 'राजन' ने वर्तमान पत्रकारिता के संबंध में बताया है- "आज की पत्रकारिता ने व्यवसायिक रूख अपना लिया है, जिसकी वजह से स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष लेखन का महत्व घटता जा रहा है। अधिकांशतः समाचार पत्र का स्वामित्व धन कुबेरों के हाथ में होने से, वे समाचार पत्र का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए ही ज्यादा करते हैं, जिससे पत्रकारिता की भावना गौण हो जाती है। स्वस्थ पत्रकारिता के लिए समाचार पत्रों को धनकुबेरों के प्रबन्धन एवं हस्तक्षेप से मुक्त करना होगा, ताकि कोई समाचार पत्र अकाट्य सबूत के बिना किसी का चरित्र हनन न कर सके" (श्रीवास्तव, 2009)।

अशोक कुमार अवस्थी का कहना है कि-"वर्तमान समय में पत्रकारिता का रूप बिगड़ रहा है। अधिकांश पत्रकार या तो स्वयं के लाभ के लिए या फिर किसी

महत्वपूर्ण व्यक्ति या संस्था के चरित्र हनन के लिए लिख रहे हैं । अगर स्वस्थ पत्रकारिता का विकास करना है तो व्यक्तिगत द्वेष भावना से पत्रकारों को हटना होगा एवं देश के हित व सम्मान की भी बात सोचनी होगी। जिन मूल्यों को हमने स्वाधीनता आन्दोलन में पत्रकारिता के माध्यम से पुनर्स्थापित किया था, उन्हीं मूल्यों की फिर से बात करनी होगी तभी राष्ट्र में पत्रकारिता के प्रति लोगों के अन्दर आदर व सम्मान बढ़ेगा" (अवस्थी, 2000)।

राम बिहारी मिश्र वर्तमान पत्रकारिता पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि, "पत्रकारिता अत्यधिक व्यवसायिक होती जा रही है, जिससे जन-समस्याओं के निराकरण की दिशा में उचित योगदान नहीं हो पा रहा है। स्वस्थ पत्रकारिता के लिए आवश्यक है कि पत्रकारों को लिखने की आजादी मिले तथा मालिक वर्ग का पत्रकारिता के ऊपर अनुचित हस्तक्षेप न हो" (मिश्र, 2008)।

जागेश्वर प्रसाद पाण्डेय वर्तमान पत्रकारिता से संतुष्ट नहीं हैं, उनका कहना है कि-"आज की पत्रकारिता अपने लक्ष्य एवं उद्देश्यों से भटकती जा रही है। समाज के मूल्यों से हट रही है। पूंजीपतियों के हाथ का खिलौना बनती जा रही है। पत्रकार भी दायित्वों से अलग हटकर व्यवसाय का रूप धारण कर रहे हैं, अगर ऐसी ही स्थिति रही तो पत्रकारों के ऊपर से लोगों का विश्वास हट जायेगा" (पाण्डेय, 2000)।

भोलेनाथ राव के विचार में-"व्यावसायिक पत्रकारिता ने आज मिशन रूपी पत्रकारिता के सारे मूल्यों को तोड़ दिया है। पूँजीपतियों के हाथ में पत्रकारिता आ जाने के कारण पत्रकारिता अपने आदर्शों से अलग होने लगी है। व्यावसायिकता बढ़ जाने के कारण उन मूल्यों का ह्रास हो रहा है, जिनके कारण पत्रकारिता को एक सम्माननीय दर्जा मिलता है। इस प्रतियोगिता में कलम शक्ति पीछे एवं धन शक्ति आगे बढ़ रही है" (राव, 2009)।

राजेश कुमार सिंह के अनुसार-"पूंजीपतियों के दबाव के कारण पत्रकारिता में निष्पक्षता धीरे-धीरे समाप्त होने लगी है। पत्रकारों के ऊपर खतरों का संकट भी बढ़ गया है, अतः भय और अन्य दबाव के कारण स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का विकिरण नहीं

होने पा रहा है" (सिंह, 2010)।

वैश्वीकरण एवं बाजारवाद के दौर में मीडिया की वर्तमान स्थिति के संबंध में सन्तोष सिंह सेंगर ने 'विंध्य की पत्रकारिता के विविध आयाम' (पृष्ठ. 263) में लिखा है, "अनेक प्रतिबन्धों के बाद पत्रकारिता मुक्त तो हुई, लेकिन बीच में यह व्यापारियों के हाथ में फंस गयी, जिसके कारण पत्रकारिता के क्षेत्र में भी कालाबाजारी होने लगी। इस अमानवीय कृत्य के कारण पत्रकारिता स्वच्छ न रहकर पीत हो गयी। ज्यादातर पत्रकार यथार्थवादी न होकर अवसरवादी मानसिकता के होने लगे हैं" (सेंगर, 2009)।

शोध प्रविधि

शोध कार्य हेतु सर्वेक्षण एवं आंकड़ों के प्रस्तुतिकरण पद्धति का सहारा लिया गया है। आंकड़ों के संकलन के लिए आवश्यकतानुसार प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। इसमें विभिन्न पुस्तकें और वेबसाइट का समावेश किया गया है।

शोध का क्षेत्र

संबधित अध्ययन के शोध का क्षेत्र वैश्वीकरण और मीडिया मूल्य है। वैश्वीकरण का असर आज प्रत्येक क्षेत्र में नजर आ रहा है, मीडिया भी इसे अछूता नहीं है। मीडिया पर हो रहे वैश्वीकरण के असर से आज मीडिया के मूल्य पर संकट मंडराने लगे हैं। अहमदाबाद शहर के लोगों का शोध कार्य में चयन किया गया है।

आंकड़ों के संकलन की विधि

शोध कार्य में प्राथमिक आंकड़ों को प्रयुक्त किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों को प्राप्त करने हेतु गुजरात राज्य के अहमदाबाद शहर का चयन किया गया है। तथ्यों के संग्रहण हेतु विभिन्न व्यवसाय से जुड़े और 20 वर्ष और उससे अधिक आयु वाले कुल 200 पुरुषों और महिलाओं का चयन किया गया। प्रश्नावली के माध्यम से लोगों से विषय संबधित जानकारी प्राप्त की गई है। अहमदाबाद क्षेत्र में 250 से अधिक प्रश्नावली का वितरण किया गया। उसमें 200 सैम्पल को सर्वेक्षण में शामिल किया गया है। प्रश्नावली में शोध से संबधित 11 प्रश्न रखे गए हैं।

आंकड़ों का प्रस्तुतिकरण एवं विश्लेषण

किसी भी शोध अध्ययन की प्रमाणिकता उसके आंकड़ों की प्रस्तुति, विश्लेषण एवं तथ्यों पर आधारित होती है | आंकड़ों से शोध अध्ययन की प्रामाणिकता एवं सापेक्षता पता चलती है | यहाँ प्राथमिक आंकड़ों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर विश्लेषण किया गया है | नैतिकता और मूल्यों की गिरावट के पक्ष में 72% पुरुषों और 28% महिलाओं ने उत्तर दिया है | इस विषय में विभिन्न आयु वाले उत्तरदाताओं ने अपने मत रखे |

सारणी 1 : अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं का आयु संबंधी विवरण-

क्रम	आयु का वर्गीकरण	पुरुष	महिला	योग
1	20-30	20	8	28
२	30-40	24	16	40
3	40-50	60	16	76
4	50-60	28	8	36
	योग	**144**	**56**	**200**

उपर्युक्त सारणी 1 के अनुसार कुल 200 उत्तरदाताओं में से युवा उत्तरदाता 20-30 वर्ष के 28, 30-40 वर्ष के 40, 40-50 वर्ष के 76, 50-60 वर्ष के 36, 60 वर्ष से अधिक आयु के 20 उत्तरदाता से उत्तर प्राप्त हुए | प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि सबसे अधिक नैतिकता और मूल्यों की गिरावट 40-50 वर्ष वाले 76 उत्तरदाताओं ने बताई | 60 वर्ष से अधिक आयु वाले वरिष्ट नागरिकों की सहभागिता केवल 20 उतरदाता की रही | सभी यह मानते हैं कि वैश्वीकरण एवं बाज़ारवाद का असर मीडिया की नैतिकता और मूल्यों में हो रहा है |

सारणी 2: अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं के पेशे संबंधी विवरण

क्रम	पेशे का वर्गीकरण	संख्या	प्रतिशत
1	व्यवसाय	40	20%
2	सरकारी/प्राईवेट नौकरी	100	50%
3	पढ़ाई/अध्ययन	20	10%
4	गृहकार्य	12	24%
5	अन्य	28	6%
	योग	**200**	**100**

उपर्युक्त सारणी 2 से स्पष्ट है कि, कुल 200 उत्तरदाताओं में 40% सरकारी और प्राईवेट नौकरी करते हैं | 24% उत्तरदाता गृहिणी हैं | जबकि 20% उत्तरदाता विभिन्न व्यवसाय में संलग्न है। 10% उतरदाता छात्र हैं, जो अध्यन के कार्य से जुड़े हैं और मात्र 6% उतरदाता अन्य कार्य करते हैं |

1. मीडिया में मूल्यों का होना आवश्यक है?

ग्राफ 1 : मीडिया में मूल्यों की आवश्यकता

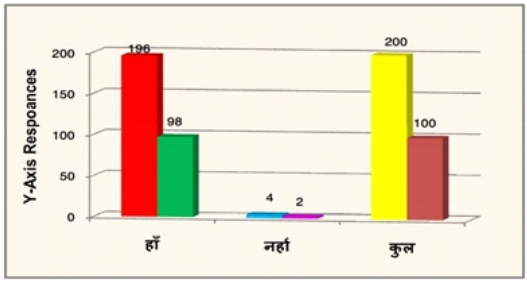

अध्ययन से प्राप्त उपयुक्त आंकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि 98% उत्तरदाताओं ने 'हाँ' में उत्तर दिया और उन्होंने कहा कि मीडिया में मूल्यों की काफी आहै | वे मानते हैं कि मीडिया सशक्त माध्यम है जिससे मूल्यों का फैलाव आसानी से हो सकता है,

इसलिए मीडिया में मूल्यों का होना जरुरी है | मूल्यविहीन मीडिया का कोई महत्व नहीं रहता | केवल 2% ऐसे उत्तरदाता हैं जिनका मानना है कि मूल्यों की आवश्यकता मीडिया में नहीं है |

2. वैश्वीकरण और बाज़ारवाद के युग में मीडिया में सबसे महत्वपूर्ण मूल्य कौन-कौन से हैं?

ग्राफ 2 : मीडिया में सबसे महत्वपूर्ण मूल्य

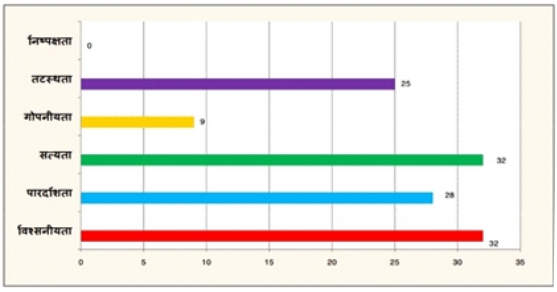

प्राप्त आंकड़ों से यह सामने आया है कि सबसे ज्यादा 32% उत्तरदाताओं ने इस बात पर सहमति जताई कि मीडिया में सबसे पहले विश्वसनीयता और सत्यता का मूल्य चाहिए | सामग्री की तटस्थता बनी रहे, उसके मत में 24% लोग रहे | लोगों के उत्तरों से पता चला कि निष्पक्षता का कोई स्थान नहीं है | पारदर्शिता के लिए 28% लोगों ने सहमति दी | गोपनीयता इतनी आवश्ययक नहीं रही इसलिए इसके लिए केवल 9% लोगों ने 'हाँ' कहा |

3. बाज़ार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण किया जा रहा है?

ग्राफ 3 : बाजार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण

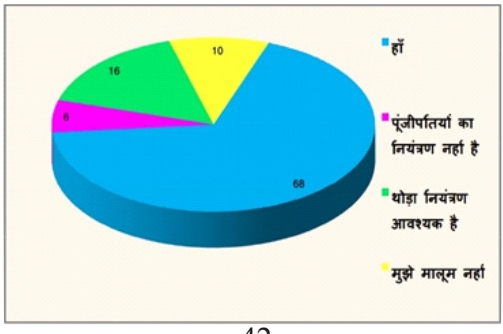

अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट हो रहा है कि आज के समय में मीडिया के क्षेत्र में पूंजीपतियों की भूमिका अहम हो गयी है | बाज़ार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण किया जा रहा है | आज का मीडिया पूंजीपतियों के हाथ में बिका हुआ नजर आता है और बाजार मीडिया को चला रहा है | इस प्रश्न के उत्तर में अधिकतर 68% लोगों का मानना है कि बाज़ार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण किया जा रहा है | वह जैसा चाहते हैं वैसा मीडिया चलता है | केवल 6% लोगों का मानना है कि बाज़ार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण नहीं किया जाता | किन्तु 16% लोग मानते हैं कि थोड़ा नियंत्रण आवश्यक है और 10% लोगों को मालूम नहीं कि बाज़ार और पूंजीपतियों द्वारा मीडिया पर नियंत्रण किया जा रहा है या नहीं |

4. वैश्वीकरण के कारण मीडिया की गुणवत्ता पर कितना प्रभाव पड़ा है?

ग्राफ 4 : वैश्वीकरण के कारण मीडिया की गुणवत्ता पर प्रभाव

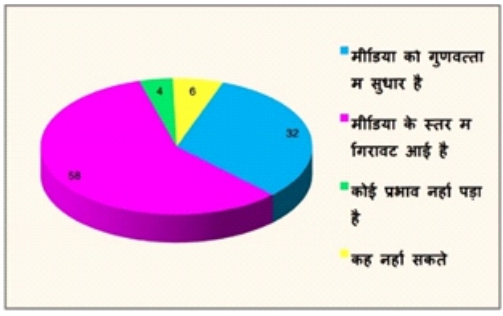

58% उत्तरदाताओं का कहना है कि वैश्वीकरण के कारण मीडिया की गुणवत्ता में गिरावट आई है | अब समाचार पत्र-पत्रिकाएँ, टेलीविज़न चैनल दुनिया के किसी भी कोने पर इन्टरनेट के माध्यम से सहज उपलब्ध है। इसलिए देश-विदेश को ध्यान में रख कर सामग्री का चयन किया जा रहा है | पहले प्रकाशित/प्रसारित हो रही सामग्री की तुलना में वर्तमान में प्रकाशित/प्रसारित हो रही सामग्री में गिरावट दिखाई दे रही है | जबकि 32% उत्तरदाताओं का कहना है कि वैश्वीकरण के कारण मीडिया की गुणवत्ता में सुधार हुआ है | उन्हें कागज की गुणवत्ता, प्रस्तुतीकरण की विधि, आधुनिक तकनीक और इन्टरनेट की सहज सुविधा इस प्रकार के बाहरी परिवर्तन से गुणवत्ता में

सुधार लगता है | केवल 4% लोगों का कहना है कि वैश्वीकरण के कारण मीडिया की गुणवत्ता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा जबकि 6% उत्तरदाता तटस्थ रहे |

5. बाज़ारवाद और वैश्वीकरण के दौर में मीडिया द्वारा जीवनशैली में परिवर्तन हुआ है?

ग्राफ 5 : वैश्वीकरण के दौर में मीडिया द्वारा जीवनशैली में बदलाव

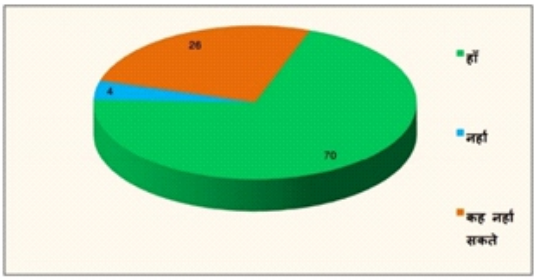

70% उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि बाज़ारवाद और वैश्वीकरण का असर मनुष्य पर बड़े घातक रूप से हो रहा है | उसका परिणाम यह दिखाई देता है कि बाज़ारवाद और वैश्वीकरण से प्रभावित मीडिया ने लोगों की जीवनशैली को बदल डाला है | 26% उत्तरदाता यह मानते हैं कि हम कुछ कह नहीं सकते क्योंकि बाज़ारवाद का वैश्वीकरण पर कोई प्रभाव नहीं है | केवल 4% उत्तरदाताओं ने अपनी राय में कहा कि बाज़ारवाद और वैश्वीकरण के दौर में मीडिया का कोई सकारात्मक या नकारात्मक असर नहीं होता है |

6. मीडिया द्वारा सनसनीखेज समाचारों के प्रकाशन/प्रसारण का नैतिकता से कोई संबंध है?

ग्राफ 6: सनसनीखेज समाचारों के प्रकाशन/प्रसारण का नैतिकता से संबंध

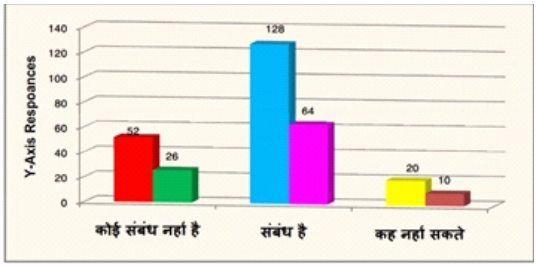

64% उत्तरदाता इस पक्ष में रहे कि मीडिया द्वारा सनसनीखेज समाचारों के प्रकाशन/प्रसारण का नैतिकता से पूरा संबंध है | समाज की स्थिति और वातावरण के परिवर्तन में सनसनीखेज समाचारों की भूमिका है, जिनका नैतिकता से सीधा संबंध है, जबकि 26% उत्तरदाताओं का मानना है कि कोई संबंध नहीं है | 10% उत्तरदाता कुछ कह नहीं सके |

7. क्या टीआरपी बढ़ाने की प्रतिस्पर्धा में मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करना उचित है?

ग्राफ 7 : टीआरपी बढ़ाने की स्पर्धा में मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करना

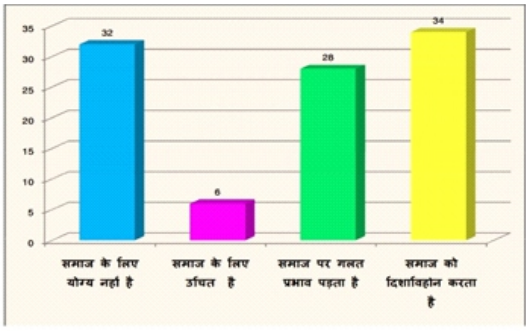

सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों से यह स्पष्ट हो रहा है कि टेक्नोलॉजी और आधुनिकता के समय में टीआरपी बढ़ाने की प्रतिस्पर्धा में मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करना उचित नहीं है | इस बात पर 32% उत्तरदाताओं ने राय दी | किन्तु 6% उत्तरदाताओं का कहना है कि मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करना उचित है क्योंकि उन्हें प्रतिस्पर्धा में टीआरपी बढ़ाने की चिंता है | उससे समाज पर पड़ने वाले लाभ-हानि को देखा-अनदेखा कर देते हैं | 28% उत्तरदाता ये मानते हैं कि मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करने से समाज पर गलत प्रभाव पड़ता है जो टीआरपी को कम भी कर सकता है | 34% उत्तरदाताओं ने यह राय दी कि टीआरपी बढ़ाने की होड़ में मूल्यविहीन सामग्री प्रकाशित/प्रसारित करने का कार्य समाज को दिशाविहीन करने का है |

8. क्या वैश्वीकरण और बाज़ारवाद स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए घातक है?

ग्राफ 8 : वैश्वीकरण और बाज़ारवाद स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए घातक

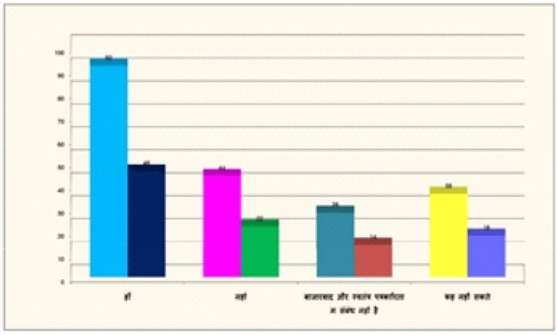

वैश्वीकरण और बाज़ारवाद स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए घातक हैं इससे 46% उत्तरदाताओं ने सहमति जताई है, जबकि 22% उत्तरदाताओं ने माना कि वैश्वीकरण और बाज़ारवाद स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए घातक नहीं है | केवल 14% उत्तरदाता मानते हैं कि बाज़ारवाद और स्वतंत्र पत्रकारिता में कोई खास संबंध ही नहीं है एवं 18% उत्तरदाताओं ने कहा कि हम कुछ कह नहीं सकते |

9. बाज़ारवाद और वैश्वीकरण के दौर में मीडिया में मूल्यों का आग्रह करना पाठकों के हित में है?

ग्राफ 9 : पाठकों के हित के लिए मीडिया में मूल्यों का आग्रह रखना

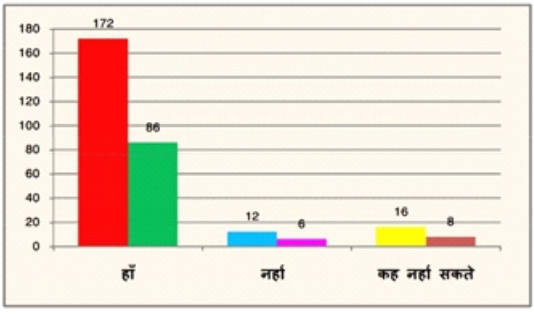

अनुसंधान के प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट हो रहा है कि बाज़ारवाद और वैश्वीकरण के समय में मीडिया में मूल्यों का आग्रह करना पाठकों के हित में है | इस पक्ष में सबसे

अधिक 90% उत्तरदाताओं ने राय व्यक्त की है जबकि 8% ऐसे उत्तरदाता मिले जो इस बारे में कुछ नहीं कह सके | सिर्फ 2% उतरदाता के अनुसार बाज़ारवाद और वैश्वीकरण के दौर में मीडिया में मूल्यों का आग्रह करने में पाठकों का हित नहीं है|

10. क्या बाज़ारवाद के प्रभाव में मीडिया के नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है?

ग्राफ 10 : मीडिया के नैतिक मूल्यों का ह्रास

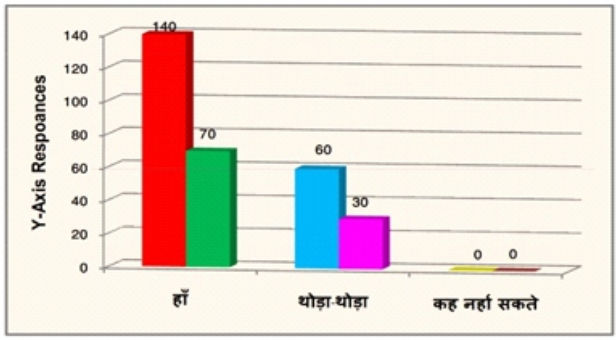

70% उत्तरदाताओं का मानना है कि मीडिया में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, जबकि 30% उत्तरदाताओं ने माना कि बाज़ारवाद के प्रभाव में मीडिया के नैतिक मूल्यों का थोड़ा-थोड़ा ह्रास होता है |

11. आपके अनुसार वर्तमान में कौन-कौन सी खबरें ज्यादा प्रकाशित/प्रसारित की जा रही हैं?

ग्राफ 11 : मीडिया में विविध खबरों का प्रकाशित/प्रसारित होना

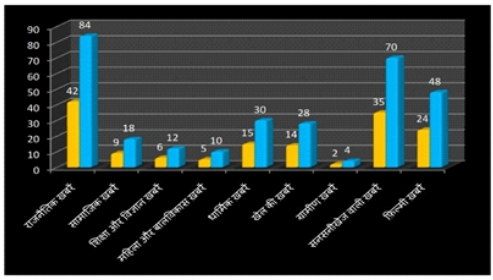

प्राप्त आंकड़ों से यह कह सकते है. कि वर्तमान समय में सबसे ज्यादा 84% राजनैतिक खबरों से समाचार पत्र भरे रहते है. 70% सनसनीखेज वाली ख़बरें होती हैं, 48% फ़िल्मी ख़बरें, 30% धार्मिक खबरें, 28% खेल की ख़बरें, 18% सामाजिक ख़बरें, केवल 12% शिक्षा और विज्ञान की ख़बरें, 10% महिला और बालविकास की ख़बरें और सबसे कम 4% ग्रामीण विकास की ख़बरों को स्थान दिया जा रहा है|

निष्कर्ष

एक समय था जब पत्रकारिता किसी उद्देश्य को लेकर चलती थी, उद्देश्य होता था - जनहित | पत्रकारिता एक सशक्त माध्यम है जिसका समाज से गहरा संबंध है | जबसे इसने व्यवसाय का रूप लिया है तब से यह धन कमाने का साधन बन गया है| यह भी तथ्य है कि उसके संचालन में बड़ी पूंजी की आवश्यकता होने के कारण पत्रों ने मर्यादा और आदर्श गिरा दिये, जिसका जनजीवन में मुख्य स्थान था|

आज भूमंडलीय युग में मुक्त बाजार व्यवस्था के चलते विज्ञापन की माँग व उसकी जरूरत बढ़ी है | इस प्रकार प्रौद्योगिकी की वर्तमान प्रगति भी समाचार-पत्र प्रकाशन को एक विशुद्ध उद्योग बनाती जा रही है और वर्तमान में उसका विकृत तथा हानिकारक स्वरूप हो गया है | आज आधुनिक पत्रकारिता का आदर्श आधुनिक व्यवसाय का ही आदर्श हो गया है| व्यवसायीकरण ने पत्रों को इस स्थिति में पहुँचाया है|

पत्रकारिता का मूल ध्येय सत्य का उद्घाटन करना, घटना-परिघटनाओं की प्रस्तुति, दोष-निवारण करना, सलाह देना, असहायों की सहायता करना, मार्गदर्शन करना, मूल्यों की प्रतिष्ठा करना और मानव की प्रगति एवं समृद्धि में सहभागी बनना है| अतः मनुष्य में नैतिकता, संस्कृति और मानवीय मूल्यों को आत्मसात करना, निरपेक्षता के मार्ग पर अग्रसर होकर राष्ट्रीय प्रगति एवं समृद्धि में सहभागी बनना पत्रकारिता का मूल धर्म है|

भारतीय मीडिया के सामाजिक सरोकारों पर लगातार वैश्वीकरण एवं बाजार का नकारात्मक दबाव पड़ रहा है | मीडिया के बढ़ते दबदबे और दबाव ने इसकी

स्वतंत्रता, निष्पक्षता, संतुलन और तथ्यपरकता तथा सामाजिक व राष्ट्रीय सरोकारों को न सिर्फ कमजोर किया है बल्कि इसकी साख और विश्वसनीयता को भी अपूरणीय क्षति पहुँचायी है | मीडिया का जो चेहरा आज आम समाज में पहचाना जा रहा है वह बेहद भ्रष्ट और ब्लैकमेलर का है और निश्चत रूप से यह विषय हम सबके लिए एक चिंतनीय पहलू है |

सन्दर्भ

Essay, U. (2019). Effects of Globalization on Media Essay. Retrieved on November 11, 2019, from UK Essays: https://www.ukessays.com/essays/media/effects-of-globalization-on-media-media-essay.php

Stoppard, T. (2019). www.brainyquote.com. Retrieved on October 17, 2019, from www.brainyquote.com/quotes/tom_stoppard_1660 67

Wikipedia. (2019). Globalization. Retrieved on November 11, 2019, from wikipedia: https://en.wikipedia.org/wiki/Globalization

अवस्थी, अ. क. (2000). हिंदी पत्रकारिता एवं जनसंचार. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.

आलोक, ट. ड. (2009). पत्रकारिता का बदलता स्वरूप. नई दिल्ली: मोहित एंटरप्राइज.

कुमार, र. (2014). पित पत्रकारिता. नई दिल्ली: एनवी कम्पोजर्स.

चोपड़ा, ज. क. (2008). विश्व पत्रकारिता पर एक नज़र. नई दिल्ली: सुमित एंटरप्राइज.

पाण्डेय, ज. प. (2000). हिंदी पत्रकारिता का बाजारभाव. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

मिश्र, र. ब. (2008). हिंदी पत्रकारिता का समकालीन विमर्श. नई दिल्ली: श्रीनटराज प्रकाशन.

राव, भ. (2009). भारतीय पत्रकारिता. नई दिल्ली: वंदना पब्लिकेशन.

शर्मा, ड. क. (2014). प्रेस कानून एवं पत्रकारिता. नई दिल्ली: एनवी कम्पोजर्स.

श्रीवास्तव, उ. (2009). मीडिया के बदलते तेवर. नई दिल्ली: वंदना पब्लिकेशन.

सिंह, र. क. (2010). आधुनिक समाज में पत्रकारिता. नई दिल्ली: मोहित पब्लिकेशन.

सेंगर, स. स. (2009). विंध्य की पत्रकारिता के विविध आयाम. नई दिल्ली: कामनवेल्थ पब्लिशर्स.

जनजातीय कृषि: भूमि की उर्वरता बढ़ाने में नील-हरित शैवाल का उपयोग

प्रोफेसर नवीन कुमार शर्मा

सारांश

भारत सरकार के जनजातीय मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार देश में वर्तमान में कुल 705 जनजातीय समूह हैं, जो कि अनेक उपजातियों में विभक्त हैं। ये समूह देश के 30 प्रदेशों एवं संघ शासित क्षेत्रों में विस्तृत हैं | इसे कुल जनसंख्या के अनुपात में देखें तो देश की कुल जनसँख्या में जनजातियों की संख्या 8.6 प्रतिशत (लगभग 104,545,716) है | सामाजिक और आर्थिक रूप से अत्यधिक पिछड़ा यह वर्ग मुख्यतः ग्रामीण एवं पर्वतीय अंचलों में (लगभग 90%) निवास करता है | इस ग्रामीण जनसंख्या का 47.3 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करता है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह संख्या लगभग 33.3% है |

इस समुदाय में शिक्षा का स्तर आज भी निम्न है, फिर भी विगत दशकों में साक्षरता दर में संतोषजनक वृद्धि हुई है, जो कि वर्तमान में 48.96% है | जिसमें पुरुष साक्षरता दर 68.43% तथा महिला साक्षरता दर 49.35% है | जीविकोपार्जन के लिए यह समुदाय मुख्यतः कृषि एवं अन्य सम्बंधित क्षेत्रों जैसे पशुपालन, शिकार, मछली पालन, वनोपज संग्रह पर निर्भर है | सन 2014 के एक आँकड़े के अनुसार लगभग 37% जनजातीय जनसंख्या कृषि में तथा 33.4 % जनसंख्या कृषि मजदूर के रूप में कार्यरत है |

परिचय

जनजातीय कृषि पुरातन एवं पारम्परिक तौर-तरीकों पर आधारित है | इसमें अद्यतन तकनीकों एवं नवाचारों का पूर्णतया अभाव है | अधिकांश कृषक लघु एवं सीमान्त हैं | जोतों का छोटा आकार, पूंजी तथा सिंचाई साधनों का अभाव एवं उन्नतशील बीजों का न्यून प्रयोग जनजातीय कृषि के अभिलाक्षणिक गुण हैं | उचित जानकारी के अभाव के साथ-साथ अनेक क्षेत्रों में ऐसे कृषकों के पास जमीन के

स्वामित्व सम्बंधित आधिकारिक दस्तावेजों का अभाव होता है, परिणामस्वरूप कई बार ये बैंकों से मिलने वाली 'माइक्रोफाइनेंसिंग' की सुविधाओं का भी लाभ नहीं ले पाते हैं | इनके अतिरिक्त जनजातीय इलाके अधिकतर सुगम अवस्थापनाओं से दूर हैं और कृषि के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तन, बाज़ार की जानकारी, खेती में नए प्रयोग आदि के बारे में जनजातीय कृषकों को सूचना नहीं हो पाती | सामाजिक और सांस्कृतिक कारणों से भी कई बार यह कृषि कार्यकर्ताओं आदि से मिल नहीं पाते हैं | उपर्युक्त तथा परिस्थितिजन्य अन्य कारणों से जनजातीय कृषि आज भी भरण-पोषण तक ही सीमित है, इसका व्यावसायिक उपयोग संभव नहीं हो पा रहा है |

बढ़ती जनसंख्या के दबाव में लगातार दोहन से विगत वर्षों में कृषि भूमि की उर्वरकता में अनापेक्षित कमी आई है | कृत्रिम रासायनिक उर्वरकों की कमी, इनके लगातार बढ़ते मूल्य तथा मृदा की उर्वरकता पर पड़ने वाले इनके प्रतिकूल प्रभाव एक बड़ी समस्या के रूप में सामने आए हैं | इनके लगातार एवं अधिक मात्रा में प्रयोग से मिट्टी की क्षारीयता बढ़ती जाती है और भूमि क्रमशः ऊसर में परिवर्तित हो जाती है | जनजातीय कृषि भी इससे अछूती नहीं है | इन कुप्रभाओं से बचने में जैवउर्वरकों का प्रयोग एक बेहतर विकल्प बन कर उभरा है | जैवउर्वरक कई प्रकार के होते हैं |

धान, गन्ने तथा अन्य फसलों के साथ खेतों में प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली नील-हरित शैवाल (चित्र 1) एक प्रमुख जैवउर्वरक है | यह स्वपोषी, आद्यकोशिकीय सूक्ष्म जीवधारियों का एक समूह है जो कि धरती पर पाए जाने वाले प्राचीन जीवधारियों (3.2 - 2.8 अरब वर्ष) में से एक हैं | वर्तमान आक्सीजन-युक्त वातावरण तथा इसके परिणामस्वरूप होने वाले जीवधारियों के उद्विकास में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है | पिछले 6 दशकों से अधिक समय से भूमि उर्वरकता संवर्धन में इनकी भूमिका सर्वविदित रही है, और अनेकानेक क्षेत्रों में इनका उचित प्रयोग हो रहा है | दुर्भाग्यवश जनजातीय क्षेत्रों में इनका प्रयोग लगभग नगण्य है |

चित्र - 1 धान के खेत में नील - हरित शैवाल, आलोरसाइरा की वृद्धि

बॉक्स 1 में नील-हरित शैवाल का भूमि की उर्वरकता पर पड़ने वाले लाभप्रद प्रभावों का उल्लेख किया गया है | ये न केवल भूमि की उर्वरकता तथा फसलों की पैदावार बढ़ाने में सहायक हैं बल्कि इनका कोई दुष्प्रभाव भी अभी तक ज्ञात नहीं है|

बॉक्स 1. नील-हरित शैवाल का भूमि की उर्वरकता पर प्रभाव-

1. भूमि की सम्पूर्ण उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है
2. मिट्टी की भौतिक दशा में गुणात्मक बदलाव होता है
3. मिट्टी में नत्रजन की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है
4. कार्बनिक तत्वों की मात्रा में वृद्धि से मिट्टी की जलधारण क्षमता में इजाफा होता है
5. अम्लीय भूमि में लौह आदि तत्वों की विषालुता कम होती है
6. उपलब्ध फास्फोरस की मात्रा बढ़ती है
7. वृद्धि हारमोंस की मात्रा बढ़ती है
8. उत्पादन लागत में हर हेक्टेयर में लगभग 1000 रु. की कमी आती है
9. उत्पाद की गुणवत्ता में वृद्धि

नील-हरित शैवाल की एक प्रमुख भूमिका मिट्टी में नत्रजन की मात्रा में वृद्धि करना होती है | इनकी कई प्रजातियाँ वायुमंडल में उपलब्ध लगभग 72% मुक्त नाइट्रोजन गैस का स्थिरीकरण कर मिट्टी और पौधों को प्रदान करती हैं जिससे फसलों की उत्पादकता बढ़ती है | इस क्रिया को 'जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण' कहते हैं | स्थिरीकृत नाइट्रोजन फसलों को या तो शैवाल की जीवित अवस्था में ही कोशिकीय स्राव के परिणामस्वरूप या कोशिकाओं के मृत होने के बाद जीवाणुओं द्वारा विघटन होने पर प्राप्त होती है|

धान जैसी फसलों की जोत का वातावरण नील-हरित शैवाल के प्राकृतिक बढ़ाव के लिए सर्वथा अनुकूल होता है, इसके लिए किसी अतिरिक्त प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है | शैवालीकरण द्वारा 12.4 किग्रा/हे./सीजन नील-हरित शैवाल के इस्तेमाल से जोत को लगभग 24-30 किग्रा/हे. नाइट्रोजन की उपलब्धता होती है | जिसके परिणामस्वरूप धान के उत्पादन में 24-30% की वृद्धि पाई जाती है |

फास्फेट, पोटैशियम तथा रासायनिक नाइट्रोजन की साथ संयुक्त रूप से देने पर यह वृद्धि अधिक प्रभावी होती है|

नील-हरित शैवाल जैवउर्वरक उत्पादन की सरल तकनीकी

बाजार में तथा नील-हरित शैवाल से जुड़े हुए शोध संस्थानों में पहले से ही तैयार नील-हरित शैवाल कल्चर उपलब्ध हैं| ये कल्चर विभिन्न वाहकों जैसे मुल्तानी मिट्टी, मिट्टी, पुआल के साथ उचित मूल्य पर उपलब्ध हैं| इनमें से मुल्तानी मिट्टी के साथ उपलब्ध कल्चर सबसे प्रभावी है| कृषक आश्यकतानुसार नील-हरित शैवाल आधारित कल्चर का उत्पादन अपने खेतों या आसपास में निम्न विधियों से कर सकते हैं, जो कि सस्ती एवं आसान है| चित्र 2. मे नीली हरी शैवाल के प्रयोगशाला में पृथक्करण एवं संवर्धन से लेकर खेत मे उपयोग तक के विभिन्न चरणों को प्रदर्शित किया गया है|

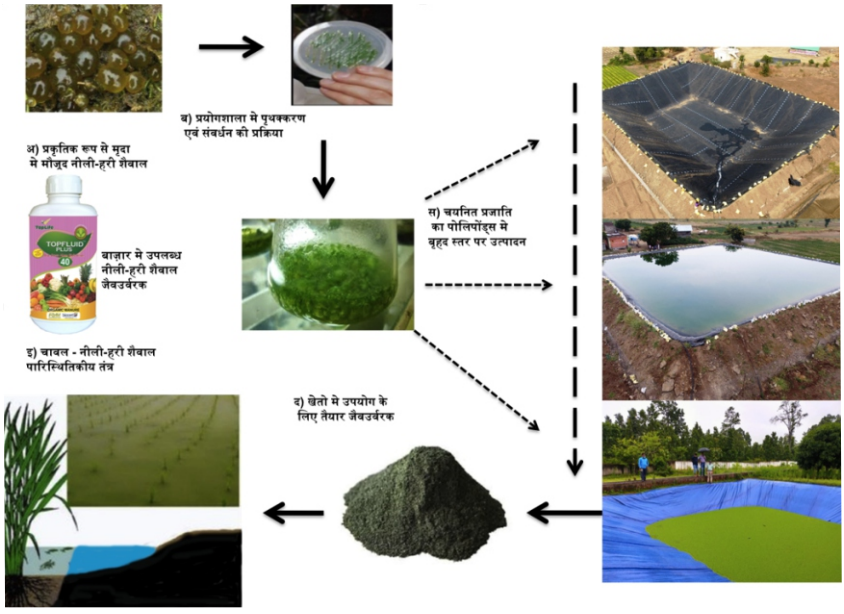

क) टैंक विधि

1. 4 मीटर लम्बा, एक मीटर चौड़ा तथा एक फुट गहरा पक्का टैंक निर्मित करवा लें| इसे अपनी जरूरत के अनुसार घटाया या बढ़ाया जा सकता है|
2. इसमें प्रतिवर्ग मीटर के हिसाब से 1-1.4 किग्रा खेत की भुरभुरी एवं साफ

मिट्टी (मुख्यतया बलुई, दोमट मिट्टी), 100 ग्राम सुपरफास्फेट एवं 4-5 इंच तक पानी भरकर अच्छी तरह मिला लें|

3. कीड़े – मकोड़ों से सुरक्षित रखने के लिए प्रतिवर्ग मीटर के हिसाब से आधा चम्मच मैलाथियान या 10 ग्राम कार्बोफ्यूरान मिला लें|
4. जब मिट्टी बैठ जाय तो दूसरे दिन शैवाल कल्चर टैंक में बिखेर दें| शैवाल की मोटी परत बनने तक पानी मिलाते रहें, परत को सूखने न दें|
5. पर्याप्त मोटी परत बन जाने पर, शैवाल की परत को सूखने दें, पपड़ियों को सूख जाने पर इकट्ठा कर लें और खेतों में प्रयोग करें|

ख) ट्रफ विधि

यह टैंक विधि का ही एक परिमार्जित रूप है| इसमें शैवाल कल्चर के लिए 2 मीटर लम्बी और 1 मीटर चौड़ी एल्युमीनियम या टीन की एक ट्रफ बनवा लें, जिसका आकार सुविधानुसार बढ़ाया या घटाया जा सकता है|

ग) गड्ढों में कल्चर उत्पादन

इस विधि में खेत में सूखे स्थान पर कम गहरी, एक मीटर चौड़ी और जरूरत के हिसाब से लम्बी क्यारियाँ बना लें, आधार पर सफ़ेद मोटी पोलीथिन परत बिछा दें| इस गड्ढे का उपयोग टैंक विधि से शैवाल कल्चर उत्पादन के लिए करें|

घ) खेतों में कल्चर उत्पादन

अधिक मात्रा में शैवाल कल्चर उत्पादन के लिए इस विधि का प्रयोग करते हैं |

1. इसमें खेत में उचित स्थान का चुनाव करके 30-40 वर्गमीटर का क्षेत्र लें, इसे पानी के स्थिर रहने लायक समतल कर लें|
2. इसके चारों तरफ उचित ऊंचाई की मेड़ बना लें और उसमें 2.4-3 सेमी पानी भर दें| पानी के इस स्तर को बनाये रखें|
3. तदोपरान्त 12 किग्रा सुपरफास्फेट 250 ग्राम कार्बोफ्यूरान डाल दें| तदोपरान्त 5 किग्रा शैवाल कल्चर बिखेर दें|
4. मोटी परत बनने तक खेत में पानी मिलाते जायें| सूखने के लिए छोड़ दें|

शैवाल की सूखी पपड़ियों को एकत्रित करके प्रयोग करें|

सावधानियाँ

1. उत्पादन टैंको या खेतों में नाइट्रोजन का प्रयोग ना करें|
2. शैवाल की सूखी पपड़ियों को कीटनाशक एवं नाइट्रोजन उर्वरकों के साथ मिला कर न रखें|
3. शैवाल की पपड़ियों को नमी से दूर रखें|
4. शैवाल कल्चर के उत्पादन का सर्वोतम समय मार्च से जून तक होता है|

खेतों में शैवाल जैवउर्वरक की प्रयोग विधि

धान की रोपाई के 3-4 दिन बाद स्थिर पानी में 12.4 किग्रा/ हे. की हिसाब से शैवाल की सूखी पपड़ियों बिखेर दें, 4-5 दिन तक खेत में पानी भरा रहने दें|

नील-हरित शैवाल के जैवउर्वरक के तौर पर प्रयोग से कृषक आर्थिक रूप से प्रति हेक्टेयर 1200 – 1500 रूपये की बचत कर सकते हैं| यदि एक निश्चित समय (3 साल) तक इसका नियमित प्रयोग किया जाय तो इन्हें पुनः खेतों में डालने की आवश्यकता नहीं रहती है|

निष्कर्ष:

जनजातीय कृषि से आशय जनजातीय समाज द्वारा की जा रही कृषि से है| यह कृषि अभी भी तुलनात्मक रूप से पिछड़ी हुई है और इसकी आर्थिक उपादेयता अत्यंत कम है| इसके साथ-साथ दिन-प्रतिदिन रासायनिक उर्वरकों का बढ़ता प्रयोग भी अंततः भूमि जैसे महत्वपूर्ण लेकिन सीमित संसाधन के लिए बहुत श्रेयस्कर नहीं है| ऐसे में कृषि की उत्पादन लागत को कम करने और जनजातीय समाजों के कृषि के माध्यम से सशक्तिकरण में जैविक खेती और हरित खेती जैसे प्रयोग अत्यंत लाभदायक हो सकते हैं|

सन्दर्भ

https://m.dailyhunt.in/news/bangladesh/hindi/krishify+hindi-epaper-krhfyh/dhan+me+ ... retrieved: 8/1/2020 9:37:00

AM 4
https://krishiguru2013.blogspot.com/2013/04/blog-post_19.html Retrieved: 10/7/2019 8:52:29 AM 1
https://vicharvithi2.blogspot.com/2019/11/ Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1
https://hi.vikaspedia.in/education/91d93e93091692394d921-93093e91c94d92f/91d93e930 ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1
https://hi.vikaspedia.in/education/91d93e93091692394d921-93093e91c94d92f/91d93e930 ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1
https://krishiyugvarta.blogspot.com/2017/03/blog-post_30.html Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 2
https://glibs.in/m/MISC/-20071.html Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1 URL: https://agriculturebuxar.blogspot.com/2011/03/7-300-70-2.html Retrieved: 1/27/2020 7:20:50 AM 1
https://www.jagran.com/uttar-pradesh/mau-9344892.html Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 2 URL: https://hi.vikaspedia.in/agriculture/crop-production/91d93e930916902921-915947-932 ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 5
https://m.facebook.com/story.php?story_fbid=173287817694447 3&id=1435740416658252&_ ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1
https://www.gaonconnection.com/stories/green-manure-can-be-made-from-green-algae-a ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 3 2/14 URL: https://www.jagran.com/uttar-pradesh/ghazipur-9268780.html Retrieved: 8/1/2020

9:37:00 AM 1
https://khetigyan.in/cyanobacteria-biofertilizer/ Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1 URL: https://www.krishisewa.com/articles/soil-fertility/1189-blue-green-algae-generated ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM 1
https://www.krishakjagat.org/horticulture/use-and-importance-of-bio-fertilizers-in ... Retrieved: 8/1/2020 9:37:00 AM

डिजिटल सोसायटी और सरकारी जनसंपर्क (भारत सरकार के जनसंपर्क का एक अध्ययन)

डॉ. मनोज कुमार लोढ़ा
रतन सिंह शेखावत

सारांश

लोकतंत्र में सत्ता जनमत से चलती है और जनमत निर्माण के लिए जनसंपर्क आवश्यक शर्त है। यही वजह है कि कोई भी सरकार जनता के बीच अपनी योजनाओं और कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार करने में कोई कसर नहीं छोड़ती। इस कार्य को करने के लिए भारत सरकार के पास भी अपना विशाल जनसंपर्क तंत्र है, जिसका उपयोग वह जनमत निर्माण के लिए करती है। जनसंपर्क का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि संचार का। ऐसे में जनसंपर्क को संपन्न करने के लिए उपकरणों में बदलाव भी संचार में बदलाव के साथ होता है क्योंकि समाज भी संचार के उन नए उपकरणों को स्वीकार कर चुका होता है। इंटरनेट और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी से उपजे वर्तमान डिजिटल दौर में समाज भारी बदलावों से गुजर रहा है और जनसम्पर्क भी इन बदलावों से अछूता नहीं है। डिजिटल सोसायटी के वर्तमान दौर में सरकार के जनसंपर्क में भी बदलाव स्वाभाविक है। प्रस्तुत शोध पत्र में केंद्र सरकार के जनसंपर्क कार्यों पर पिछले एक दशक में डिजिटल तकनीक के प्रभावों का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में गुणात्मक (Qualitative) शोध पद्धति को अपनाया गया है। अध्ययन में वैयक्तिक अध्ययन (केस स्टडी) पद्धति की मदद ली गई है। केंद्र सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अधीन कार्यरत विभिन्न संगठन सामूहिक रूप से केंद्र सरकार के जनसंपर्क के लिए उत्तरदायी हैं। प्रस्तुत अध्ययन में इनमें से प्रमुख दो संगठनों-पत्र सूचना कार्यालय (पीआईबी) और लोक संपर्क एवं संचार ब्यूरो (बीओसी) को शामिल किया गया है। इसमें प्राथमिक आंकड़े (Primary Data) गहन साक्षात्कार के जरिए जुटाए गए हैं जिसके लिए पीआईबी एवं बीओसी में जनसंपर्क कार्य संभाल रहे 4 जनसंपर्क अधिकारियों का साक्षात्कार किया गया है। साक्षात्कार में दोनों संस्थानों की डिजिटल पीआर की रणनीति, जनसंपर्क के नए उपकरणों, सोशल मीडिया के उपयोग आदि से संबंधित प्रश्न पूछे गए। सभी साक्षात्कारदाताओं से 16 संरचित (Structured) प्रश्न

पूछे गए। दोनों संगठनों की वेबसाइट और अन्य स्रोतों से प्राप्त जानकारी से द्वितीयक आंकड़े (Secondary Data) जुटाए गए हैं। इस अध्ययन के परिणाम केंद्र सरकार के जनसंपर्क में आए बदलावों को दर्शाते हैं, जिनका विस्तार से वर्णन शोध पत्र में किया गया है।

सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि (Theoretical Background)

संचार की तरह ही जनसंपर्क का क्रमिक विकास हुआ है। एक अंतराल पर जनसंपर्क के नए सिद्धान्तों का जन्म और अप्रसांगिक का लुप्त होना जारी रहा है। जनसंपर्क को अलग-अलग कालखंड में विभाजित कर उसके विकास को सैद्धान्तिक रूप देने का सबसे बड़ा प्रयास ग्रूनिग और हंट (1984) ने किया। उन्होंने जनसंपर्क के विकास क्रम को 4 चरणों में बांटा और इसे जनसंपर्क के चार मॉडल्स कहा। ग्रूनिग और उनकी टीम ने जनसंपर्क पर 15 वर्ष तक शोध करने के बाद एक सिद्धान्त का निर्माण किया जिसे 'एक्सीलेंस थ्योरी इन पब्लिक रिलेशंस' नाम दिया गया। इस शोध अध्ययन को इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ बिजनेस कम्युनिकेटर्स (आईएबीसी) ने फंड दिया था। इस सिद्धान्त का परीक्षण अमेरिका, कनाडा और ब्रिटेन में जनसंपर्क के क्षेत्र में कार्यरत 327 संगठनों के जनसंपर्क प्रमुखों और कर्मचारियों पर सर्वे और साक्षात्कार के जरिए किया गया।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature)

डिजिटल टेक्नोलॉजी ने जनसंचार के पूरे क्षेत्र को ही प्रभावित किया है और जनसंपर्क भी इससे अछूता नहीं है। सूचना एवं संचार तकनीक (आईसीटी) का समाज और मीडिया पर प्रभाव अत्यंत गहरा है। मौजूदा डिजिटल दौर के बदलावों और समाज और संचार पर उसके प्रभावों पर कई लेखकों ने गहन और शोपरक अध्ययन किया है। गूगल के कार्यकारी अध्यक्ष और गूगल आइडियाज के प्रमुख एरिक स्मिट और जारेड कोहेन (2014) ने अपनी पुस्तक 'दि न्यू डिजिटल एज' में डिजिटल मीडिया की वर्तमान स्थिति और इसके भविष्य के बारे में बेहतरीन शोध और विश्लेषण किया है। यह पुस्तक डिजिटल मीडिया को समझने के लिए इसलिए भी जरूरी है क्योंकि ये दोनों ही लेखक दुनिया के सबसे बड़े सर्च इंजन गूगल की अगुवाई करते हैं। दुनिया की सबसे बड़ी इंटरनेट कंपनी के लीडर डिजिटल मीडिया के भविष्य को लेकर क्या सोचते

हैं इसे जानने के लिए यह पुस्तक एक प्रमुख स्रोत है। सुनेत्रा सेन नारायण और शालिनी नारायणन (2016) ने अपनी पुस्तक (संपादित) में भारत में डिजिटल मीडिया के वर्तमान और भविष्य की संभावनाओं के बारे में शोधपरक रूप से लिखा है। डिजिटल मीडिया भारत में किस तरह से लोगों के जीवन को बदल रहा है? समाज में इसके प्रभाव से बदलाव किस स्तर पर हो रहा है? इस तरह के सवालों के जवाब इसमें तलाशने की कोशिश की गई है। यह पुस्तक देश में न्यू मीडिया के प्रभाव और महत्व को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। इस पुस्तक में डिजिटल मीडिया के परिदृश्य और उसके राजनीतिक अर्थशास्त्र की चर्चा की गई है और भारतीय समाज पर उसके पड़ने वाले प्रभावों की पड़ताल की गई है। इंटरनेट और सूचना प्रौद्योगिकी के विकास से संभव इस नए मंच को डिजिटल प्लेटफॉर्म कहा गया है । भारत में इस समय इंटरनेट सेवाओं के उपभोक्ताओं की संख्या जून 2018 में करीब 50 करोड़ है और इसकी वार्षिक वृद्धि दर करीब 12 फीसदी की है। रॉब ब्राउन ने भी अपनी पुस्तक 'दि सोशल वेब' में जनसंपर्क पर डिजिटल प्रभावों को गंभीरता से प्रस्तुत किया है । पुस्तक का मानना है कि जनसंपर्क उद्योग में अब वैसा ही नहीं चलेगा, जैसा चलता आ रहा है और जल्द ही इसमें बड़े बदलाव देखने को मिलेंगे। प्रेस रिलीज का मौजूदा तरीका खत्म होने वाला है और इसकी जगह सोशल मीडिया रिलीज ले लेंगी । सोशल मीडिया मैनेजर या डिजिटल पीआर मैनेजर अब जनसंपर्क विभाग में अपनी अलग जगह बना रहे हैं। फेसबुक, ट्विटर, यूट्यूब, इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर कंपनी या संगठन जनसंपर्क कार्य को बढ़ावा देने के लिए अलग तरह के कौशल और ज्ञान की जरूरत हो रही है और जनसंपर्ककर्मी खुद को नए दौर के जनंसपर्क के लिए तैयार कर रहे हैं। शैली चोपड़ा (2014) ने अपनी पुस्तक बिग कनेक्ट में राजनीतिक जनसंपर्क में डिजिटल मीडिया की भूमिका को बेहद तथ्यात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। शैली ने 2014 के लोकसभा चुनाव में जनमत निर्माण में सोशल मीडिया के प्रभावों का शोधपरक अध्ययन किया है। अमेरिकी कम्युनिकेशंस एंड पीआर एजेंसी लेविस की पत्रिका में 3 मई 2018 को छपे एक शोध लेख में ब्रियाना ब्रूनिस्मा ने नए और पुराने जनसंपर्क का तुलनात्मक अध्ययन पेश किया है। उनका कहना है कि अब ट्विटर, फेसबुक और वाट्सएप के आने से रिपोर्टर्स का काम करने का तरीका पूरी तरह से बदल गया है।

शोध के उद्देश्य (Objectives)

1. भारत सरकार के जनसंपर्क कार्य पर डिजिटल मीडिया के प्रभावों का अध्ययन
2. जनसंपर्क के उपकरण के रूप में प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के मुकाबले डिजिटल मीडिया की ताकत का अध्ययन
3. जनसंपर्क रणनीति में डिजिटल मीडिया के प्रभाव से बदलावों का अध्ययन
4. जनसंपर्क में सर्वाधिक प्रयोग किए जाने वाले डिजिटल प्लेटफार्म्स का पता लगाना

शोध संरचना (Research Design)

प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य जनसंपर्क पर डिजिटल प्रभावों का अध्ययन करना है। यह एक मौलिक शोध है और शोध के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए इस शोध कार्य के लिए गुणात्मक पद्धति को अपनाया गया है। प्रस्तुत शोध में जनसंपर्क में आए बदलावों की पड़ताल करने के लिए गुणात्मक पद्धति को अपनाया गया है। प्राथमिक आंकड़े केंद्र सरकार के जनसंपर्क तंत्र से जुड़े संगठनों के 4 जनसंपर्क अधिकारियों से गहन साक्षात्कार से जुटाए गए हैं। सभी साक्षात्कारदाताओं से विषय से संबंधित संरचित (Structured) प्रश्न पूछे गए। साक्षात्कार के आधार पर जुटाए गए प्राथमिक आंकड़ों के विश्लेषण के लिए संरचित कूटलेखन (Structured Coding) को अपनाया गया है। अध्ययन में निगमनात्मक कोडिंग पद्धति (Deduvctive coding method) को अपनाया गया है, जिसमें शोध के उद्देश्यों के आधार पर पूर्वनिर्धारित कोड्स के आधार पर आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है। शोध के परिणाम आंकड़ों का आख्यान विश्लेषण (Narrative Analysis) कर निकाले गए हैं।

विश्लेषण और निष्कर्ष (Analysis and Conclusion)

शोध के दौरान जुटाए गए द्वितीयक आंकड़ों और साक्षात्कार में पूछे गए प्रश्नों के आधार पर जो परिणाम प्राप्त हुए उनका शोध उद्देश्यों के आधार पर कोडिंग की गई है। कोडिंग के उपरांत विश्लेषण करने पर प्राप्त परिणामों को संक्षिप्त रूप में यहां प्रस्तुत किया गया है।

क्र. सं.	शोध प्रश्न	संरचनात्मक कोड
1.	डिजिटल जनसंपर्क के बारे में जनसंपर्ककर्मियों की क्या राय है?	डिजिटल जनसंपर्क
2.	जनसंपर्क रणनीति में बदलाव के लिए आप डिजिटल टेक्नोलॉजी की कितनी भूमिका मानते हैं और किस रूप में?	डिजिटल टेक्नोलॉजी
3.	जनसंपर्क के माध्यम के रूप में प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के मुकाबले डिजिटल मीडिया किस रूप में देखा जा रहा है?	डिजिटल मीडिया
4.	जनसंपर्क के लिए सोशल मीडिया की विश्वसनीयता को कितना जरूरी मानते हैं और वर्तमान में सोशल मीडिया की विश्वसनीयता पर उनकी क्या प्रतिक्रिया है?	सोशल मीडिया की विश्वसनीयता
5.	क्या उनको लगता है कि सोशल मीडिया जनसंपर्क के बजाय प्रोपगेंडा का उपकरण ज्यादा है? जनसंपर्क के लिए सोशल मीडिया के उपयोग के जोखिमों के बारे में प्रतिक्रिया।	सोशल मीडिया और प्रोपगेंडा
6.	विभिन्न संगठनों के जनसंपर्क विभाग में क्या डिजिटल पीआर और सोशल मीडिया के लिए अलग से टीमें कार्यरत है? क्या डिजिटल पीआर के लिए टीम को विशेष प्रशिक्षण दिया गया है?	डिजिटल जनसंपर्क का प्रशिक्षण

7.	विभिन्न क्षेत्रों में संगठनों की वेबसाइट और इसका उपयोग जनसंपर्क के लिए किस प्रकार किया जा रहा है?	जनसंपर्क उपकरण के रूप में वेबसाइट
8.	क्या सोशल मीडिया रिलीज (एसएमआर) जारी की जा रही हैं? यदि हां, तो उसका अनुभव विभिन्न संगठनों में जनसंपर्क विभाग के लिए अब तक कैसा रहा है?	सोशल मीडिया रिलीज
9.	फेसबुक पेज, ट्विटर हैंडल, इंस्टग्राम और यूट्यूब चैनल में से कितने डिजिटल प्लेटफॉर्म पर विभिन्न संगठनों की उपस्थिति है और इन पर यूजर्स में कौन शामिल हैं?	डिजिटल प्लेटफॉर्म्स
10.	ब्लॉगर्स, यूट्यूबर्स आदि इन्फ्लुएंसर्स जनसंपर्क में नए हितधारक माने जा रहे हैं? इनकी भूमिका विभिन्न संगठन जनसंपर्क में कैसे देखते हैं?	इन्फ्लुएंसर्स
11.	डिजिटल पीआर के प्रभावी होने के बाद जनसंपर्क बजट का कितना प्रतिशत हिस्सा डिजिटल पीआर के लिए उचित मानते हैं?	जनसंपर्क बजट में डिजिटल मीडिया
12.	भविष्य के जनसंपर्क विभाग को किस प्रकार के बदलावों से गुजरना होगा? और जनसंपर्क कर्मियों के सामने किस प्रकार की चुनौतियां होंगी?	जनसंपर्क विभाग की भावी चुनौतियां
13.	डिजिटल दौर में जनसंपर्क के सामने नैतिक मूल्यों (एथिक्स) संबंधी चुनौतियों के बारे में जनसंपर्क पेशेवरों की क्या राय है?	डिजिटल युग में जनसंपर्क के नैतिक मूल्य

- **डिजिटल जनसंपर्क:** सभी प्रतिभागियों का मानना था कि अब यह दौर डिजिटल तकनीक से संचालित है और ऐसे में जनसंपर्क का तरीका भी बदल गया है। अब मीडिया संबंधों का कार्य ऑफिस में बैठे ही पूरा हो जाता है । सभी क्षेत्रों में जनसंपर्क में डिजिटल तकनीक का दखल बढ़ा है।
- **जनसंपर्क रणनीति:** जनसंपर्क की रणनीति में डिजिटल की भूमिका उतनी तो नहीं बढ़ी है जितनी कि कॉरपोरेट सेक्टर में बढ़ी है, लेकिन सरकार भी अब अपनी रणनीति में डिजिटल पीआर को शामिल करने पर जोर दे रही है।
- **डिजिटल मीडिया:** इंटरनेट और सूचना एवं संचार तकनीक के विस्तार के बाद डिजिटल मीडिया का तेजी से विस्तार हुआ है । हालांकि अब भी सरकारी जनसंपर्क विभाग प्रिंट मीडिया को सबसे ज्यादा प्राथमिकता देते हैं और सबसे ज्यादा विश्वसनीय मानते हैं।
- **सोशल मीडिया की विश्वसनीयता:** सरकारी जनसंपर्क से जुड़े पेशेवर मानते हैं कि सोशल मीडिया विश्वसनीय नहीं है। सोशल मीडिया को प्रोपगेंडा के तौर पर इस्तेमाल करने की संभावना बहुत अधिक है। उनका मानना है कि सोशल मीडिया में गेटकीपिंग का अभाव है।
- **सोशल मीडिया और प्रोपगेंडा:** सोशल मीडिया में यदि खबर का स्रोत विश्वसनीय है तो उस पर भरोसा किया जा सकता है। उत्तरदाताओं का मानना है कि कई बार सोशल मीडिया की मदद से बेहतरीन जनसंपर्क अभियान संभव है, लेकिन सूचना का स्रोत सही होने पर।
- **डिजिटल पीआर प्रशिक्षण:** सभी प्रतिभागियों का मानना है कि अब सरकारी जनसंपर्क संगठन डिजिटल पीआर के लिए प्रशिक्षण पर जोर देते हैं। केंद्र सरकार में पीआईबी और डीएवीपी जैसे संगठनों में सूचना सेवा के अधिकारियों के लिए डिजिटल टेक्नोलॉजी के उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाता है। डिजिटल पीआर के लिए अलग से टीम का प्रचलन अभी आरंभिक दौर में है।
- **वेबसाइट:** वेबसाइट को अब भी जनसंपर्क का प्रमुख माध्यम माना जाता है। इसके जरिए आवश्यक सूचनाएं आंतरिक और बाहरी हितधारकों के लिए उपलब्ध करवाई जाती हैं । विभिन्न मंत्रालयों की वेबसाइट्स के लिंक और सरकार से संबंधित सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के लिंक भी वेबसाइट से जुड़े हैं।

- **सोशल मीडिया रिलीज:** सरकारी जनसंपर्क में सोशल मीडिया रिलीज (एसएमआर) का प्रचलन अभी नहीं है। हालांकि ट्विटर, यूट्यूब, फेसबुक आदि के जरिए प्रेस विज्ञप्तियों का वितरण जरूरी होता है।
- **डिजिटल प्लेटफॉर्म्स:** पत्र सूचना कार्यालय (पीआईबी) फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम और यूट्यूब चैनल सभी पर उपलब्ध हैं और इनका उपयोग सरकारी विज्ञप्तियों के प्रसार के लिए होता है । हालांकि ब्यूरो ऑफ आउटरीच एंड कम्युनिकेशन (बीओसी) में डीएवीपी की ही थोड़ी मौजदूगी डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर है । क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय और संगीत एवं नाटक विभाग की डिजिटल प्लेटफॉर्म्स पर उपस्थिति अभी काफी कम है।
- **इन्फ्लुएंसर्स:** ब्लॉगर्स और यूट्यूबर्स का जनसंपर्क के लिए उपयोग सरकारी जनसंपर्क में काफी सीमित है । कॉरपोरेट सेक्टर के मुकाबले यह बेहद कम है । हालांकि दूरदराज के क्षेत्रों में किसी अभियान के लिए इसका उपयोग करना सभी उत्तरदाता बेहतर मानते हैं।
- **डिजिटल जनंसपर्क का बजट:** सरकार अपने जनसंपर्क बजट में प्रमुख रूप से प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को ही शामिल करती है । हालांकि अब वेब पोर्टल और अन्य डिजिटल मीडिया को भी संबद्ध करने की प्रक्रिया शुरू हुई है ।
- **जनसंपर्क का भविष्य:** सभी उत्तरदाताओं का मानना है कि आने वाले समय में जनसंपर्क का पूरा कार्य डिजिटल हो जाएगा । डिजिटल मीडिया भी सबसे महत्वपूर्ण माध्यम बनने वाला है।
- **जनसंपर्क में नैतिक मूल्य:** सरकारी जनसंपर्ककर्मियों का मानना है कि सरकारी जनसंपर्क तंत्र किसी भी तरह कवरेज हासिल करने के बजाय प्रमाणिकता पर जोर देता है । हालांकि डिजिटल दौर में नैतिक मूल्यों की चुनौती बढ़ेगी, लेकिन यह सूचना के स्रोत पर ज्यादा निर्भर करेगी।

निष्कर्ष

मीडिया के डिजिटल रूपांतरण के दौर में जनसंपर्क बहुत तेजी से बदल रहा है । यह बदलाव इतना तीव्र है कि इस शोध कार्य के दौरान भी ये बदलाव देखने को मिले। इंटरनेट और डिजिटल मीडिया को लेकर बड़ी संख्या में अध्ययन हो रहे हैं, लेकिन

जनसंपर्क पर उसके प्रभावों को लेकर अभी बहुत अध्ययन नहीं हुआ है। सैद्धान्तिक रूप से जनसंपर्क एक समान होने पर भी कॉरपोरेट जगत, सार्वजनिक क्षेत्र और सरकारी क्षेत्र में जनसंपर्क का ढांचा और कार्य अलग-अलग हैं। इसमें अलग-अलग क्षेत्रों में बदलाव पर अध्ययन की विशाल संभावनाएं हैं। उम्मीद है कि जनसंपर्क क्षेत्र में आए बदलावों को समझने में यह शोध उपयोगी साबित होगा।

सन्दर्भ

Grunig, J. E.,& Todd, Hunt. (1984). Managing Public Relations. Holt, Rinehart and Winston, USA.

Schmidt, E. & Jared, Cohen. (2014). The New Digital Age: Reshaping the Future of People, Nations and Business. John Murray (Publishers) London, UK.

Assange, Julian. (2014). When Google Met Wikileaks, Narayana Publishing Pvt Ltd, Delhi.

Narayan, S. S,& Shalini, Narayanan. (2016, Edited). India Connected: Mapping the Impact of New Media.

Brown, Rob. (2010). Public Relations and the Social Web. Kogan Page India,New Delhi (P. 126).

Chopra, Shaili. (2014). THE BIG CONNECT: Politics in the Age of Social Media. Random House India, New Delhi.

जनसंपर्क सेवाएं प्रदान करने वाली वैश्विक एजेंसी लेविस की पत्रिका में छपा शोध लेख।

https://www.teamlewis.com/magazine/the-evolution-of-public-relations-in-a-digital-world/

Saldana, Johnny. (2009). The Coding Manual for Qualitative Researches. Sage Publications, New Delhi

जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू नियंत्रण और मीडिया : एक विश्लेषण

डॉ. राघवेन्द्र मिश्रा

सारांश

तम्बाकू नियंत्रण हमारे देश का एक प्रमुख लक्ष्य और अभियान है जो बड़े पैमाने पर समन्वित रूप में संचालित होता है। तम्बाकू हमारे देश में पिछले कई सौ सालों से प्रचलन में है और विविध तरीकों से, अनेक रूपों में इसका सेवन होता है। अपने बहुत सारे रूपों में यह सामाजिक स्तर पर स्वीकृत हो चुका है तथा सामूहिक एकत्रीकरण के अवसरों पर इसे बड़े शौक से प्रस्तुत किया जाता है। एक आदत और एक नशे के रूप में तम्बाकू महानगरों के हुक्का बारों से लेकर गाँव-गिरावं, गली-मोहल्लों, जगह-जगह तक फैला हुआ है और इसके शौकीनों में बड़ों के साथ-साथ नई उम्र के लोग भी शामिल हैं।

एक आदत के रूप में इसे भले ही सामाजिक स्वीकृति मिली हो लेकिन यह एक गंभीर सामाजिक और राष्ट्रीय समस्या भी है जो लोगों को जानलेवा बीमारियों जैसे कैंसर आदि का शिकार बनाती है और इसके चलते गरीबी आदि जैसे दुष्परिणाम भी सामने आते हैं। तम्बाकू देश में एक बड़ा व्यवसाय भी है और शायद मज़बूत तम्बाकू लॉबी का दबाव ही है जो इस व्यवसाय को पूर्णतया प्रतिबंधित होने से बचा लेता है। हालाँकि देश में तम्बाकू निरोधी अनेक नियम-कानून बने हैं और अनेक संस्थाएं, सरकारें, संयुक्त राष्ट्र संघ आदि भी इसकी रोकथाम के लिए प्रयासरत हैं लेकिन अभी भी हम संतोषजनक लक्ष्यों से बहुत पीछे हैं। प्रस्तुत शोधप्रबंध तम्बाकू निषेध में मीडिया की भूमिका का विश्लेषणात्मक पद्धति से विवेचन प्रस्तुत करता है और विशेष रूप से जनजातीय आबादी वाले इलाकों में मीडिया की पहुँच और प्रभाव का मूल्यांकन करता है।

मुख्य शब्द- तम्बाकू नियंत्रण, जनजातीय क्षेत्र, मीडिया, परम्परागत माध्यम

प्रस्तावना

टोबैको बोर्ड की वेबसाइट के अनुसार भारत में तम्बाकू लाने का काम

पुर्तगाली लोगों ने किया था। सत्रहवीं सदी से इसकी खेती के प्रमाण मिलते हैं। बहुत जल्द इसने लोकप्रियता हासिल कर ली और आज हम अनेकों रूपों में इसका इस्तेमाल कर रहे हैं। 'आज तम्बाकू भारत में पैदा होने वाली प्रमुख वाणिज्यिक फसल है। लगभग 750 मिलियन किग्रा वार्षिक उत्पादन के साथ हमारा तम्बाकू उत्पादन में दुनिया में तीसरा स्थान है।.....वर्ष 2019-20 में तम्बाकू और तम्बाकू उत्पादों ने लगभग 22,737 करोड़ रूपये अर्जित किये जिनमें से लगभग 5870 करोड़ रूपये विदेशी मुद्रा के रूप में अर्जित हुए' (https://tobaccoboard.com/)। समय के साथ तम्बाकू ने हमारे देश में एक महत्वपूर्ण वाणिज्यिक उत्पाद के साथ-साथ सामाजिक मेलजोल की वस्तु और सामाजिक रीतिरिवाजों की आवश्यकता के रूप में जगह बना ली है। भारत में तम्बाकू दोनों रूपों धूम्रयुक्त एवं धूम्ररहित में प्रयुक्त होता है। पान के साथ जर्दा, खैनी, गुटखा, दोहरा आदि धूम्ररहित और बीड़ी, सिगरेट, हुक्का आदि धूम्रयुक्त उपयोग के कुछ प्रकार हैं।

तम्बाकू को आज सामाजिक स्वीकृति सी मिल चुकी है। 'भारत में तम्बाकू उपयोग के प्रतिरूप विशिष्ट हैं और यह स्थापित सांस्कृतिक गतिविधि का संकेतक हैं' (सोनलिया, 2012)। जाति-धर्म, उम्र, क्षेत्र के परे जाकर तम्बाकू ने जो स्वीकृति अर्जित की है उसके चलते युवा, महिलाएं और यहाँ तक कि बच्चे भी बड़ी तेजी से इसकी ओर आकर्षित होते हैं। ग्लोबल एडल्ट टोबैको सर्वे 2016-17 की रिपोर्ट के अनुसार जनसँख्या का लगभग 30% और युवा जनसँख्या का लगभग 35% तम्बाकू के किसी ना किसी प्रकार का सेवन करता है। तम्बाकू का धुआँ तो उसके संपर्क में आने वालों को भी नुकसान पहुँचाता है और तम्बाकूजनित व्याधियों से पीड़ित में से एक बड़ी संख्या इनकी होती है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य विविध उपलब्ध अध्ययनों और डेटाबेस की सहायता से निम्न लक्ष्यों को अर्जित करना है

- जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू उपभोग की स्थिति का आकलन
- तम्बाकू नियंत्रण के कार्यक्रम और उनकी जनजातीय क्षेत्रों में प्रभावशीलता का अध्ययन
- जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू नियंत्रण में मीडिया की प्रभावशीलता के विविध

पक्षों का मूल्यांकन

शोध विधि

प्रस्तुत शोधपत्र उपलब्ध द्वितीयक स्रोतों के विश्लेषण पर आधारित है। विषय के विश्लेषण हेतु डाटाबेस जैसे गूगल स्कॉलर, शोध गंगा, विश्व स्वास्थ्य संगठन प्रकाशन, वेबसाइटों पर उपलब्ध न्यूज़ रिपोर्ट, भारत सरकार एवं उसकी संस्थाओं की रिपोर्ट और पालिसी पेपर एवं अन्य सामग्रियों का उपयोग किया गया है। भारत सरकार के तम्बाकू पर राष्ट्रीय सर्वेक्षण की रिपोर्ट और अन्य उपलब्ध स्थानीय स्तर के अध्ययनों का उपयोग शोध के निष्कर्षों को प्राप्त करने के लिए किया गया है। उक्त विविध स्रोतों से प्राप्त सामग्री के क्रॉस-रेफेरेंस एवं विश्लेषणात्मक मूल्यांकन द्वारा शोध के उद्देश्यों का विवेचन किया गया है।

तम्बाकू और मानव स्वास्थ्य

तम्बाकू मानव स्वास्थ्य को अनेक रूपों में नुकसान पहुँचाता है। तम्बाकू के उपयोग से कैंसर, ह्रदय सम्बन्धी व्याधियां एवं फेफड़ों से जुड़ी गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। तम्बाकू की लत लोगों को बड़ी तेजी से शिकार बनाती है और लोगों में क्रोनिक निर्भरता पैदा हो जाती है। गर्भवती महिलाओं द्वारा तम्बाकू का उपभोग माता के साथ-साथ अजन्मे बच्चे को भी नुकसान पहुँचाता है। तम्बाकू में बहुत सारे रसायन और मेटल होते हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक होते हैं। 'धूम्ररहित तम्बाकू में लगभग 3095 रसायन मिलते हैं जिनमें से 28 में कैंसर के कारक होते हैं। विविध अध्ययनों में भी यह सिद्ध हो चुका है कि बहुत से मेटल जैसे लीड, कैडमियम, क्रोमियम, आर्सेनिक, और निकेल आदि तम्बाकू उत्पादों में मौजूद होते हैं। धूम्ररहित तम्बाकू उपयोग मुख, गला, पेट और यकृत के कैंसर का कारण बनता है। इसी तरह धूम्रपान से तम्बाकू उपयोग जिसमें सेकंड हैण्ड धूम्रपान भी शामिल है, में 7000 से भी ज्यादा रसायनों की उपस्थिति रहती है। इनमें सैकड़ों जहरीले हैं और कम से कम 69 कैंसर के कारक हो सकते हैं। भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद (आईसीएमआर) की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में पुरुषों में कैंसर के लगभग 50% मामले और महिलाओं में लगभग 25% और मुख कैंसर के लगभग 80% मामले सीधे-सीधे तम्बाकू से जुड़े हैं। ह्रदय से और फेफड़ों से जुड़ी ढेर सारी बीमारियाँ तम्बाकू उपभोग

का परिणाम हैं' (ऑपरेशनल गाइडलाइन्स, एनटीसीपी, 2012, पृष्ठ-3)|

तम्बाकू मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत बड़े खतरे के रूप में है जिस पर तत्काल नियंत्रण बहुत आवश्यक है। सामाजिक स्वीकृति होने के चलते तम्बाकू के उपभोग पर विशेष अंकुश नहीं लग पाता। तम्बाकू से होने वाली बड़ी बीमारियों के अलावा इसका उपभोग अनेक छोटी समस्याओं को भी जन्म देता है। तम्बाकू शारीरिक क्षमताओं को सीमित कर देता है और खेलकूद या व्यायाम में तम्बाकू के आदी व्यक्ति का बहुत मन नहीं लगता|गुटका और पान मसाला लगातार चबाते रहने से स्वाद इन्द्रियां सही तरीके से काम नहीं करतीं, मुंह में लगातार छाले बने रहते हैं, मुंह का खुलना कम हो जाता है और खान-पान सम्बंधी दिक्कतें भी शुरू हो जाती हैं। तम्बाकू का सेवन करने वाले को भूख भी कम लगती है। तम्बाकू और गरीबी का भी सीधा सम्बंध है। सीमित आय में तम्बाकू के खर्चों के लिए पारिवारिक जरूरी खर्चों से समझौता करना पड़ता है जो परिवार के विकास को प्रभावित करते हैं। इसके साथ-साथ अन्य व्ययभार भी परिवार और व्यक्ति को गरीब बनाने का काम करते हैं|मोहन, पी., लानदो, एच.ए., और पनीर, एस. (2018) अपने अध्ययन में इसे रेखांकित करते हुए बताते हैं कि तम्बाकू जनित बीमारियों के चलते सक्रिय उम्र समूह; 24-69 वर्ष में बीमार रहने और मृत्यु की दर उच्च है। उनका यह भी कहना है कि तम्बाकू के चलते होने वाली बीमारियों के कारण व्यक्ति को अपनी क्षमता से ज्यादा इलाज पर खर्च करना होता है और यह स्थितियां गरीबी के कुचक्र को फ़ैलाने का काम करती हैं।

जनजातीय समुदायों में तम्बाकू का प्रचलन

सामान्य तौर पर जनजातीय और ग्रामीण समुदायों में तम्बाकू के सेवन की दर उच्च पाई जाती है। इसके पीछे सामाजिक-सांस्कृतिक कारक महत्वपूर्ण भूमिका में होते हैं। चूँकि तम्बाकू को समाज में लोगों की स्वीकृति मिली होती है और कई बार ओझा-सोखा आदि को और वन देवता या स्थान देवता को तम्बाकू चढ़ाने का भी रिवाज बन जाता है तो अन्य सभी के लिए तम्बाकू सेवन कई बार सामाजिक परम्परा का हिस्सा बन जाता है। एम. रानी एवं अन्य (2003) द्वारा किए गए अध्ययन में भी यह निष्कर्ष सामने आया कि भारत में सामाजिक-सांस्कृतिक कारक तम्बाकू के उपभोग को प्रभावित करते हैं। इनके अनुसार गरीबों, कम शिक्षित, अनुसूचित जाति और

अनुसूचित जनजाति में तम्बाकू सेवन की दर तुलनात्मक रूप से ज्यादा है।

भारत में अधिकांश जनजातियाँ सुदूर, भौगोलिक रूप से दुर्गम क्षेत्रों में निवास करती हैं। तुलनात्मक रूप से इन क्षेत्रों का विकास कम हुआ है और सड़क, बाज़ार, आधुनिक रोज़गार, आधुनिक मनोरंजन आदि की दृष्टि से यह क्षेत्र अत्यंत पिछड़े हुए हैं। जनजातियों में शैक्षणिक पिछड़ापन भी ज्यादा है और निम्न श्रेणी के रोज़गार जैसे मजदूरी आदि या पारम्परिक संग्रहण अर्थव्यवस्था में इनकी संलिप्तता ज्यादा है। पढ़ाई नहीं होना, कम होना, ड्रॉपआउट की संख्या ज्यादा होने का कम उम्र में आर्थिक उपार्जन में संलग्न होने से सीधा सम्बंध है। ऐसे आदिवासी किशोरवय लोग जिन्होंने कमाई जल्द शुरू कर दी उनमें उन किशोरों की तुलना में जो विद्यालय जा रहे हैं, तम्बाकू के उपयोग की दर भी ज्यादा पाई गई है (ज़हीरुद्दीन, एवं अन्य, 2011)। आदिवासी समुदाय में तम्बाकू के सेवन के आरम्भ की उम्र अन्य समुदायों की तुलना में कम है। ज़हीरुद्दीन और अन्य द्वारा किया अध्ययन यह भी निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि आदिवासी किशोरों में तम्बाकू उपयोग की दर बहुत ज्यादा है। शिक्षा का कम प्रसार, किशोरों का धनोपार्जन से जुड़ जाना और कोई सामाजिक टोका-टाकी नहीं होने से पुनर्वास कार्यक्रमों में इनकी सहभागिता अत्यंत कम होती है।

तम्बाकू के उपभोग की आदत के दो पहलू भारत में प्रमुखता से दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें से एक है इसे सामाजिक स्वीकृति मिलना और दूसरा है वंचित तबके और गरीबों के बीच में इसका उच्च उपभोग स्तर। अनेक अध्ययन इस ओर काफी समय से यह संकेत करते रहे हैं कि आदिवासियों में तम्बाकू की लत बहुत छोटी उम्र में शुरू हो जाती है और इसे स्वीकृति भी मिल जाती है। यह लत उनके अभावग्रस्त जीवन को हमेशा अभावग्रस्त भी बनाए रखती है। क्राई की अध्येतावृत्ति पर सहरिया जनजाति का अध्ययन करते हुए सचिन जैन (2007) यह अवलोकन प्रस्तुत करते हैं कि आर्थिक रूप से विपन्न होने के बाद भी सहरिया परिवार भोजन के बाद अपनी आय का सबसे बड़ा हिस्सा (लगभग 13%) चबाने वाली तम्बाकू, शराब और बीड़ी पर खर्च करते हैं| राष्ट्रीय जनजातीय स्वास्थ्य शोध संस्थान (निर्थ) द्वारा जबलपुर में किए गए एक सामुदायिक सर्वेक्षण में यह निष्कर्ष सामने आया कि 65% गोंड आदिवासी तम्बाकू की लत का शिकार हैं तथा इनमें से अधिकांश बीड़ी और गुटखा का सेवन करते हैं।

छत्तीसगढ़ में विद्यालय जाने वाले बच्चों पर हुए सर्वेक्षण में भी यह निष्कर्ष आया कि 20.4 प्रतिशत बच्चे तम्बाकू का सेवन करते हैं (गायकवाड़, 2019)।

आदिवासी समुदायों के सन्दर्भ में तम्बाकू के सेवन से जुड़ा एक और चिंतनीय पहलू महिलाओं में भी तम्बाकू सेवन की ऊँची दर का पाया जाना है। वर्मा, सकलेचा और कासर (2017) अपने अध्ययन में इसे रेखांकित करते हुए बताते भी हैं कि मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में महिला-पुरुष सभी में तम्बाकू सेवन की दर उच्च है। एक शोध अध्ययन में चित्रकूट जिले की कोल जनजाति की महिलाओं के सन्दर्भ में यह तथ्य पुष्ट होता है कि 'आदिवासी कोल महिलाओं में भी नशा करने की प्रवृत्ति पाई जाती है क्योंकि कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाएं धुरी का कार्य करती हैं और वे प्रायः आर्थिक क्रियाओं के लिए अपने आवासों से बाहर जंगलात में कार्य करती हैं तथा विक्रय हेतु वनोत्पादों के समीपस्थ बाज़ारों जैसे कर्वी, इलाहाबाद, बाँदा, अतर्रा जैसे नगरीय क्षेत्रों में जाती रहती हैं। परिणामतः उनमें भी नशा करने की प्रवृत्ति पाई जाती है' (कुमार, 2013)।

भारत में चबाने वाली तम्बाकू का काफी प्रचलन है। खैनी और गुटखा ऐसे उत्पाद हैं जो सर्वसुलभ हैं। खैनी सबसे सस्ता उत्पाद है जिसका उपयोग निम्न आयवर्ग, ग्रामीण और आदिवासी आबादी द्वारा सर्वाधिक किया जाता है। 'गुटखा और खैनी जैसे तम्बाकू उत्पादों का सेवन करने वाले दुनिया के 65 प्रतिशत लोग भारत में हैं और यहाँ मुंह के कैंसर के 90 प्रतिशत मामले इन उत्पादों के उपयोग की वजह से ही होते हैं' (मिश्रा, 2019)। भारत में निम्न आय वर्ग, अनुसूचित जाति और आदिवासी समुदायों में तम्बाकू उपभोग की उच्च दर चिंता का विषय है। सामाजिक स्वीकार्यता, जागरूकता का निम्न स्तर, चिकित्सकीय सुविधाओं की कमी, चिकित्सा सुविधाओं तक कम पहुँच आदि कारक आदिवासी समुदाय में तम्बाकू उपभोग और उससे उत्पन्न नकारात्मक परिणामों को और भी बढ़ा देते हैं।

भारत में तम्बाकू उपभोग की आदत पर नियंत्रण के प्रयास

भारत में तम्बाकू आज एक महामारी की तरह फैला हुआ है जिसकी आदत के शिकार करोड़ों में हैं और लाखों की संख्या में इसके चलते लोग मौत के मुंह में चले

जाते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुमान के अनुसार दुनिया में बीसवीं सदी में तम्बाकू के चलते लगभग 10 करोड़ लोग असमय काल-कलवित हो गए और इक्कीसवीं सदी में यह संख्या लगभग सौ करोड़ रहने का अनुमान है (डब्ल्यूएचओ रिपोर्ट, 2011)। तम्बाकू अनेक तरह की गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बनता है और अंततः लोगों को मौत के मुंह में धकेलता है। लेकिन मौत के अतिरिक्त और अन्य दुष्परिणाम भी लोगों को भुगतने पड़ते हैं। सेकंड हैण्ड स्मोकिंग से उन लोगों को भी तम्बाकू जनित बीमारियों का शिकार होना पड़ता है जो इनका उपभोग नहीं करते। तम्बाकू और गरीबी का सीधा सम्बंध भी है और तम्बाकूजनित रोगों के इलाज पर होने वाले खर्चों के चलते अनेक परिवार आर्थिक रूप से विपन्नता का जीवन जीते हैं। इसके अलावा निम्न और निम्न मध्यम आय वर्ग में तम्बाकू उपभोग की ऊँची दर इस वर्ग को और भी विपन्नता की ओर धकेलने का कार्य करती है।

भारत में तम्बाकू निषेध सम्बंधी कार्यक्रम काफी समय से चलाए जा रहे हैं। सन 2004 भारत ने भी विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन टोबैको कण्ट्रोल को स्वीकार किया था (मिश्रा एवं अन्य, 2012)। कोटपा यानि सिगरेट एवं अन्य तम्बाकू उत्पाद (विज्ञापन का प्रतिषेध और व्यापार तथा वाणिज्य, उत्पादन, प्रदाय और वितरण का विनियमन) अधिनियम, 2003 को लागू कर भारत में तम्बाकू के प्रचार-प्रसार को रोकने और इसके व्यवसाय को विनियमित करने की दिशा में गंभीर प्रयास हुए। तबसे इसमें संशोधन और नए कठोर दंडात्मक प्रावधानों की सहायता से तम्बाकू उपभोग को हतोत्साहित करने की कोशिश की गई है। भारत सरकार ने सन 2007-08 में 11वीं पंचवर्षीय योजना के तहत राष्ट्रीय तम्बाकू नियंत्रण कार्यक्रम का शुभारम्भ किया। इस कार्यक्रम का लक्ष्य तम्बाकू उत्पादों के उपयोग के नुकसानदायक प्रभावों के प्रति जागरूकता लाना, तम्बाकू के उत्पादन और वितरण में कमी लाना, कोटपा के प्रावधानों को प्रभावी रूप से लागू करना, लोगों की तम्बाकू की लत छोड़ने में सहायता करना और डब्ल्यूएचओ फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑफ़ टोबैको कंट्रोल द्वारा घोषित तम्बाकू निषेध की रणनीतियों को लागू करना है (http://ntcp.nhp.gov.in)| वस्तुतः भारत में तम्बाकू नियंत्रण के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं। इन प्रावधानों में विधि का निर्माण, तम्बाकू उत्पादों पर करों की उच्च दर, तम्बाकू उत्पादों के विज्ञापन, स्पॉन्सरशिप आदि पर रोक, तम्बाकू उत्पादों की पैकजिंग चेतावनी दिखाना आदि

इसमें शामिल हैं। राष्ट्रीय तम्बाकू नियंत्रण प्रकोष्ठ के राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तर के कार्यक्रमों में जनमाध्यमों और सम्प्रेषण रणनीति का भी प्रभावी उपयोग उल्लिखित है। जनमाध्यम तम्बाकू नियंत्रण में प्रभावी माने जाते हैं।

तम्बाकू नियंत्रण और जनमाध्यम

तम्बाकू नियंत्रण में मीडिया एक प्रभावी और महत्वपूर्ण कारक है । विश्व स्वास्थ्य संगठन (2004) आरम्भ से ही तम्बाकू से लड़ाई में जनमाध्यमों की प्रभावी भूमिका को स्वीकार करता है और यह मानता है कि जनमाध्यम व्यक्ति और नीति निर्माता दोनों को ही प्रभावित करते हैं और इस तरह तम्बाकू नियंत्रण में जनमाध्यमों ने महती भूमिका का निर्वाह किया है। जनमाध्यम किसी सैद्धांतिक प्रारूप को लागू करने या उसका चित्र बनाने की ताकत रखते हैं। लोगों के दिलो-दिमाग में यह प्रारूप किस तरह स्थापित होंगे यह जनमाध्यमों द्वारा गहराई से प्रभावित होता है और अंततः मीडिया द्वारा निर्मित छवियाँ और प्रारूपों के बारे में लोगों की मीडिया निर्मित छवियाँ किसी भी नीति के क्रियान्वयन को दूर तक प्रभावित करती हैं।

बहुत से विद्वान यह मानते हैं कि मीडिया और तम्बाकू के बीच में जटिल सम्बन्ध है। पारम्परिक रूप से मीडिया छवियाँ तम्बाकू के उपभोग को बढ़ा भी सकती हैं और घटा भी सकती हैं। तम्बाकू का सम्बंध मर्दानगी से भी है और वर्चस्ववादी पौरुष के प्रदर्शन में तम्बाकू एक उद्दीपक की तरह कार्य करता है। अक्सर ऐसी छवि मीडिया जैसे सिनेमा आदि में लोगों के सामने आती है जहाँ मुख्य पात्र की मर्दानगी, उसकी बौद्धिकता और उसकी केन्द्रीयता के प्रदर्शन के लिए सिगरेट, सिगार या तम्बाकू के अन्य रूपों का उपयोग होता है। सिनेमा की छवियाँ विशेषरूप से युवाओं के मानस पर गहरा प्रभाव डालती हैं और तम्बाकू उपयोग के दृश्य उन्हें इसका उपयोग करने के लिए प्रेरित करते हैं । चार्ल्सवर्थ और ग्लान्त्ज़ (2005) के अनुसार सिनेमा में धूम्रपान के दृश्यों को देखकर किशोरों में सिगरेट पीने की आदत तेजी से विकसित होती है। फुलमेर एवं अन्य (2009) ने स्पष्ट किया है कि सिनेमा में अपने हमउम्रों को देखकर युवाओं में भी धूम्रपान की इच्छा पैदा होती है। इस तरह यह कहा जा सकता है कि मीडिया एक उद्दीपक का कार्य करता है और यह आदमी की सोच, प्रतिबद्धता और इच्छा को भी प्रभावित करता है। अतः तम्बाकू की लत पर नियंत्रण के लिए यह बहुत आवश्यक है

कि मीडिया छवियों में तम्बाकू की उपस्थिति को नियमित किया जाय।

मीडिया की तम्बाकू नियंत्रण में प्रभावी भूमिका स्वीकार की जाती है। यह भूमिका सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही है। तम्बाकू उपभोग की आदतों के प्रसार में मीडिया की भूमिका को स्वीकार करते हुए ही इन उत्पादों के मीडिया विज्ञापनों पर प्रतिबंध लगाए गए हैं। जॉनसन (2008) इसे रेखांकित करते हुए मानते हैं कि पिछली सदी में तम्बाकू व्यवसायियों द्वारा अपनी रणनीति में सतत बदलाव करते हुए इस भारी मुनाफे वाले व्यवसाय के विस्तार हेतु मीडिया और वैधानिक माहौल का अपने हक़ में इस्तेमाल किया गया। जॉनसन आगे यह भी कहते हैं कि तम्बाकू उपयोग को सामाजिक आदत बनाने में जनमाध्यमों का व्यापक उपयोग हुआ है। इस प्रकार ऐतिहासिक रूप से देखें तो यह स्पष्ट होता है कि मीडिया का इस्तेमाल तम्बाकू की लत के प्रसार के लिए किया गया है और इसका तम्बाकू व्यापारियों को लाभ भी मिला है। जनमाध्यम व्यक्ति के सोचने के तरीके और चीजों को परखने के नज़रिए में बदलाव लाते हैं। टीवी, सिनेमा, डिजिटल मीडिया की छवियाँ हमारे मन-मस्तिष्क को झिंझोड़ने का काम करती हैं। विश्वनाथ और अन्य (2010) ने माना है कि प्रयोग की बारंबारता एवं मीडिया की विषयवस्तु तम्बाकू उपभोग को प्रमुखता से प्रभावित करते हैं। उनका मानना है कि तम्बाकू का प्रचार करने वाले संदेशों पर नियंत्रण करके तम्बाकू उपभोग की आदत पर नियंत्रण किया जा सकता है। विश्वनाथ एवं अन्य इसे तम्बाकू नियंत्रण नीतियों और कार्यक्रम का हिस्सा बनाने की संस्तुति करते हैं। कौर ,किशोर एवं कुमार (2012) तम्बाकू की लत से छुटकारा पाने और तम्बाकू के प्रसार को रोकने में जनमाध्यमों की भूमिका को प्रभावी मानते हैं। शोधार्थियों के मत में तम्बाकू नियंत्रण के लिए व्यक्ति के ज्ञानवर्धन और उसकी मनोवृत्ति में बदलाव की दृष्टि से जनमाध्यम काफी उपयोगी हैं। इनकी नज़र में नवोन्मेषी सम्प्रेषण रणनीति के साथ जनमाध्यमों का उपयोग करना चाहिए। सोशल मीडिया एक नई संभावना के रूप में हमारे सामने है| तम्बाकू की लत के खिलाफ अनेक ऑनलाइन कैंपेन चलाए जा रहे हैं जो बड़ी संख्या में लोगों का ध्यान खींच रहे हैं। इस मंच का बेहतर इस्तेमाल समकक्ष लोगों की सहायता से सोशल मीडिया द्वारा लोगों को तम्बाकू के खिलाफ लामबंद करने के लिए किया जा सकता है।

भारत में कोटपा एवं अन्य प्रावधानों के तहत किसी भी टीवी चैनल या अन्य माध्यम सिनेमा आदि को तम्बाकू वाले दृश्यों का प्रदर्शन करते समय वैधानिक चेतावनी भी देनी होगी कि तम्बाकू का सेवन जानलेवा है | इस नियम के दायरे में टीवी से लेकर सिनेमा तक को प्रतिबंधों का पालन करना पड़ता है | लेकिन दुर्भाग्यवश ऑनलाइन मनोरंजन प्लेटफार्म ओटीटी के विषय में ऐसा नहीं है | हाल में दस वेबसीरीज जिनमें से मिर्ज़ापुर जैसी भारत में बनी वेबसीरीज भी थीं, उनका एक शोधपरक विश्लेषण किया गया और यह निष्कर्ष सामने आया कि इन सीरीज में देश के तम्बाकू निषेध सम्बंधी नियमों की कोई परवाह नहीं की गई (www.amarujala.com) | यह निश्चित तौर पर चिंतनीय है | इससे यह भी पता चलता है कि मीडिया से जुड़े लोग, विशेषकर मनोरंजन उद्योग के लोग तम्बाकू नियंत्रण के नियमों का पालन मजबूरी में करते हैं स्वयं से नहीं | इस प्रवृत्ति में भी बदलाव की आवश्यकता है | ऐसे निर्माता-निर्देशकों और फिल्म निर्माण से जुड़े लोगों को निरंतर जागरूक करना होगा कि वह इसे अपनी सामाजिक जिम्मेदारी के तौर पर लें, मजबूरी के तौर पर नहीं |

मीडिया की तम्बाकू नियंत्रण में बड़ी भूमिका को सभी स्वीकार करते हैं | मीडिया के माध्यम से प्रभावी ढंग से उन भयावह तस्वीरों को लोगों के सामने बार-बार रखा जा सकता है जिनमें तम्बाकू के जानलेवा खतरे और उससे उत्पन्न गरीबी और लाचारी का चित्रण है | ऐसे चित्र लोगों को सोचने के लिए उद्वेलित करते हैं | परिवार के लोगों तक जब ऐसी छवियाँ पहुँचती हैं तो उनमें जागरूकता आती है और वे अपने उस सदस्य के साथ टोकाटाकी शुरू कर सकते हैं जो तम्बाकू का उपयोग करते हैं | ऐसे प्रतिरोध तम्बाकू के प्रति सामाजिक स्वीकार्यता में कमी लाते हैं और इस तरह तम्बाकू की लत के रोकथाम में प्रभावी होते हैं | हालाँकि तम्बाकू से लड़ाई में सभी मीडिया प्लेटफार्म एक जैसी भूमिका नहीं निभा रहे और ना ही सभी जगहों पर इनका प्रभाव समान है | तम्बाकू की लत के नियंत्रण में सामाजिक-सांस्कृतिक कारक भी अपनी भूमिका निभाते हैं और इस तरह मीडिया की यदि अन्य कारकों के सापेक्ष भूमिका तय की जाय तो यह ज्यादा प्रभावी हो सकती है |

सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों के सापेक्ष जनजातीय क्षेत्रों में विशेषरूप से परम्परागत जनमाध्यम ज्यादा प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं | जनजातीय समाजों में

परम्परागत माध्यम बाहरी आधुनिक जनमाध्यमों के समकक्ष माने जाते हैं और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों को संप्रेषित कर इस समुदायों में परिवर्तन और विकास के संवाहक होते हैं (मिश्रा, & न्यूमे, 2015, पृष्ठ-2)| जनजातीय समाज का बड़ा हिस्सा अभी भी भौगोलिक रूप से दुरूह क्षेत्रों में निवास करता है| इसके अतिरिक्त यह समाज अभी भी अपनी परम्पराओं और पुरानी मान्यताओं के ज्यादा समीप है | ऐसे में परम्परागत माध्यम जो समाज की उपज होते हैं और समाज में ही विकसित होते हैं तम्बाकू नियंत्रण से जुड़े संदेशों की स्थापना में ज्यादा प्रभावी हो सकते हैं|

जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू नियंत्रण और मीडिया

जनजातीय क्षेत्रों में तम्बाकू निषेध के कार्यक्रमों की मीमांसा करने पर यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि टीवी, सिनेमा, डिजिटल और सोशल मीडिया के साथ-साथ अन्य माध्यम भी हैं जिनकी भूमिका को नकारा नहीं जा सकता| तम्बाकू के प्रति सामाजिक-सांस्कृतिक स्वीकार्यता जनजातीय क्षेत्रों में सबसे ज्यादा है | अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे जो यह स्पष्ट करने के लिए काफी हैं कि जनजातीय समाज में तम्बाकू की पैठ बहुत गहरी हो चुकी है| इसका एक बहुत चिंतनीय उदाहरण जसविंदर सहगल की डीडब्ल्यू डॉट कॉम पर प्रस्तुत रिपोर्ट करती है जिसमें वह बताते हैं कि 'सामाजिक मान्यताओं की बात करें तो राजस्थान के बाड़मेर के आदिवासी क्षेत्रों में तो नवब्याहता वधु का स्वागत फूलों की माला के साथ पान मसालों और गुटकों की मालाओं से किया जाता है' (https://www.dw.com)|

यह इकलौता उदाहरण नहीं है | मध्य प्रदेश में भी ऐसा ही एक दुर्भाग्यपूर्ण उदाहरण सामने आया है जिसमें माँ-बाप के चलते आदिवासी बच्चों में मुख कैंसर के खतरे बढ़ गए हैं| नई दुनिया समाचार पत्र में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश के श्योपुर में बहुत से आदिवासी क्षेत्रों में बच्चे के रोने पर माँ-बाप द्वारा उन्हें मनाने के लिए गुटखा खाने को दे देते हैं| इनमें कई बच्चे तो 8 से 14 साल की उम्र के हैं | यह रिपोर्ट नई दुनिया में 12 नवम्बर 2018 को आई है और इस तरह काफी नई है|

जनजातीय समाजों में तम्बाकू की गहरी पैठ और स्वीकार्यता को प्रस्तुत करते यह दृष्टांत एक ओर तो चिंतनीय तस्वीर प्रस्तुत करते हैं वहीँ दूसरी ओर यह भी बताते हैं

कि इन समाजों में जागरूकता का स्तर बहुत कम है और इसका ही दुष्परिणाम इस तरह के उदाहरण हैं | जनजातीय समुदायों में जागरूकता लाने के लिए जो भी कार्यक्रम हों वह उनकी जरूरतों और उनकी प्रकार्यात्मक स्थितियों के हिसाब से हों | आधुनिक मीडिया की उपलब्धता आदिवासी समाजों में तुलनात्मक रूप से कम है | ऐसे में पारम्परिक माध्यमों और इंटरैक्टिव सम्प्रेषण पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है | इसके साथ ही आदिवासी किशोरों और युवाओं पर विशेष ध्यान दिए जाने की जरूरत है | इसके लिए मोबाइल कम्युनिकेशन एक बेहतर विकल्प हो सकता है क्योंकि आबादी का यह हिस्सा बाहर ज्यादा रहता है और मोबाइल का ज्यादा आदी भी है | व्यवहार परिवर्तन हेतु सम्प्रेषण के उपयोग की जनजातीय क्षेत्रों में बड़ी आवश्यकता है | यहाँ मल्टीमीडिया रणनीति अपनाना ज्यादा प्रभावी ढंग से लक्षित जनता तक पहुँचने में मददगार हो सहता है |

निष्कर्ष

उपलब्ध आंकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि मीडिया की तम्बाकू नियंत्रण के सम्बंध में भूमिका जटिल और ध्यान देने योग्य है | मीडिया दोधारी तलवार की तरह है जो सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रभाव डालती है | अतीत में मीडिया का इस्तेमाल तम्बाकू के उपभोग को बढ़ावा देने के लिए किया गया और इसके लिए सभी तरह के मीडिया इलेक्ट्रॉनिक, प्रिंट मीडिया, आउट ऑफ़ होम मीडिया और सिनेमा का प्रयोग किया गया और इन माध्यमों ने निश्चित तौर पर तम्बाकू उपभोग को बढ़ावा देने का काम किया | हालाँकि बाद में सरकारों का ध्यान गया और तम्बाकू पर नियंत्रण के कदम के रूप में मीडिया के माध्यम से इसके प्रचार-प्रसार पर रोक लगाई गई | आज जनमाध्यमों का उपयोग तम्बाकू के खतरों से लोगों को आगाह करने के लिए किया जा रहा है |

दुर्भाग्यवश आदिवासी क्षेत्रों में जागरूकता का स्तर कम है और अधिकांश आबादी गरीबी, अशिक्षा और अंधविश्वास से घिरी हुई है | तम्बाकू के खिलाफ सामाजिक-सांस्कृतिक प्रतिरोध जनजातीय समाजों में अत्यंत कम है और जागरूकता के अभाव में बड़ी संख्या में लोग तम्बाकू की लत का शिकार भी हो रहे हैं | जनजातीय समाजों की विशेषता और जरूरतों का ध्यान रखते हुए मीडिया रणनीति तम्बाकू का

प्रसार इन समुदायों में रोकने में सहायक हो सकती है | इस रणनीति में मास मीडिया की पहुँच बढ़ाने के साथ-साथ पारम्परिक लोक माध्यमों के प्रभावी उपयोग को भी ध्यान में रखना होगा |

अभी तेजी से फैले कोरोना संकट में भी तम्बाकू एक बड़े खतरे के रूप में सामने आया है और बहुत सारी सरकारों ने इस पर प्रतिबन्ध लगाया है या सार्वजनिक स्थलों पर पान, गुटखा, पान मसाला आदि थूकने पर प्रतिबन्ध लगाया है | कोरोना की जागरूकता का स्तर भी जनजातीय समुदायों में तुलनात्मक रूप से कम है | तम्बाकू से जुड़े प्रतिबन्ध भी उनके पास तक प्रभावी रूप में शायद ही पहुंचे हों | जनजातीय समुदायों में तम्बाकू के खतरे काफी ज्यादा हैं अतः इनकी रोकथाम की दिशा में गंभीरता से काम करने की आवश्यकता है |

सन्दर्भ ग्रन्थ

https://tobaccoboard.com/indexeng.php दिनांक 28/07/20 को प्रातः 7.54 पर उद्धृत |

के.एन. सोनलिया (2012). द इकोनॉमिक्स ऑफ़ टोबैको इन इंडिया, नेशनल जर्नल ऑफ़ मेडिकल रिसर्च, भाग: 2, अंक: 3. जुलाई-सितम्बर 2012.

Operational guidelines, National Tobacco Control Programme, National Tobacco Control cell, Ministry of Health and Family Welfare, Government of India, 2012, page 3.

मोहन, पी., लानदो, एच.ए., और पनीर, एस. (2018). असेसमेंट ऑफ़ टोबैको कंजम्पशन एंड कण्ट्रोल इन इंडिया. इंडियन जर्नल ऑफ़ क्लिनिकल मेडिसिन 9, 1179916118759289.

रानी, एम., बोनू, एस., झा, पी., एन्गुयेंन, एस., एन., जम्जाम, एल. (2003). टोबैको यूज़ इन इंडिया,: प्रेविलेंस एंड प्रेडिक्टर्स ऑफ़ स्मोकिंग एंड च्युइंग इन अ नेशनल क्रॉस सेक्शनल हाउसहोल्ड सर्वे. टोबैको कंट्रोल, 12 (4). इ4-इ4.

ज़हीरुद्दीन, क्यू., एस., गैधाने, ए., बावनकुले, एस., नाज़ली, के., & जोडपे, एस. (2011). "प्रेविलेंस एंड पैटर्न ऑफ़ टोबैको यूज़ अमंग ट्राइबल

अडोलेसेंट्स: आर टोबैको प्रिवेंशन मेसेजेस रीचिंग द ट्राइबल पीपल इन इंडिया ?." अनल्स ऑफ़ ट्रॉपिकल मेडिसिन एंड पब्लिक हेल्थ 4 (2), 74.

जैन, एस. (2007).

https://www.cry.org/resources/pdf/NCRRF/Sachin_Jain_2007_Report.pdf दिनांक 29/07/2020 को सायं 9.30 पर उद्धृत |

गायकवाड़, आर., एन. (2019). ट्राइबल टोबैको सर्वे अमंग यंग अडोलेसेंट ऑफ़ सेंट्रल पार्ट ऑफ़ इंडिया. वर्ल्ड जर्नल ऑफ़ डेंसिट्री. खंड- 10. अंक- 2. पृष्ठ-110.

वर्मा, पी., सकलेचा, डी., & कासर, पी.के. (2017). ए स्टडी ऑन प्रेवेलेंस ऑफ़ टोबैको कंसम्पशन इन ट्राइबल डिस्ट्रिक्ट ऑफ़ मध्य प्रदेश | इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ कम्युनिटी मेडिसिन एंड पब्लिक हेल्थ 5 (1), 76-80.

कुमार, के. (2013). आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन. अप्रकाशित शोध प्रबंध. बुंदेलखंड विश्वविद्यालय. पृष्ठ-193-194.

मिश्रा, यू. (2019). गुटखा-खैनी के नियंत्रण के लिए राष्ट्रीय मिशन जरूरी : शोध. https://www.downtoearth.org.in/hindistory/health/non-communicable-disease/need-a-national-mission-for-gutkha-and-khaini-says-a-report-63886 से दिनांक 30/07/2020 को प्रातः 7.55 पर उद्धृत |

द एमपॉवर पैकेज, वार्निंग अबाउट द डेंजर्स ऑफ़ टोबैको. जेनेवा: डब्ल्यूएचओ;2011. डब्ल्यूएचओ रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल टोबैको एपिडेमिक, 2011.

मिश्रा, जी.ए., पिम्पल, एस.ए., & शास्त्री, एस.एस. (2012). एन ओवरव्यू ऑफ़ द टोबैको प्रॉब्लम इन इंडिया. इंडियन जर्नल ऑफ़ मेडिसिन एंड पीडियाट्रिक ऑन्कोलॉजी, 33 (3), 139.

http://ntcp.nhp.gov.in/about से दिनांक 31/07/2020 को प्रातः 8.17 पर उद्धृत |

विश्व स्वास्थ्य संगठन (2004). बेसिक प्रिंसिपल्स ऑफ़ मीडिया एडवोकेसी. वर्ल्ड

हेल्थ आर्गेनाइजेशन. http: http://www.who.int/tobacco/policy/media/en/ से दिनांक 31/07/2020 को प्रातः 9.20 पर उद्धृत |

चार्ल्सवर्थ, ए., & ग्लान्त्ज़, एस.ए. (2005). स्मोकिंग इन द मूवीज इन्क्रीजेज एडोलसेंट स्मोकिंग: ए रिव्यू. पीडियाट्रिक्स, 116(6), 1516-1528

फुल्मेर, ई.बी., नेइलन्द्स, टी.बी., दुबे, एस.आर., कुइपर, एन.एम., आराजोला, आर.ए. & ग्लान्त्ज़, एस.ए. (2015). प्रोटोबैको मीडिया एक्सपोज़र एंड यूथ सुस्सप्तिबिलिटी टू स्मोक सिगरेट्स, सिगरेट एक्सपेरिमेंटेशन एंड करंट टोबैको यूज़ अमंग यूएस यूथ. पीएलओएस वन, 10(8), इ०134734

जॉनसन, टी. (2008). फॉरवर्ड; रोनाल्ड एम. डेविस एवं अन्य द्वारा सम्पादित थे रोले ऑफ़ मीडिया इन प्रोमोटिंग एंड रेड्युसिंग टोबैको यूज़ मोनोग्राफ सीरीज: संयुक्त राज्य |

विश्वनाथ, के., अकेर्सन, एल.के., सोरेनसेन, जी., & गुप्ता., पी.सी.(2010). मूवीज एंड टीवी इन्फ्लुएंस टोबैको यूज़ इन इंडिया: फाइंडिंग्स फ्रॉम ए नेशनल सर्वे. प्लोस वन 5 (6): इ11365. डीओआई: 10.1371/जर्नल.पोन. 0011365.

कौर, जे., किशोर, जे., & कुमार, एम. (2012). इफ़ेक्ट ऑफ़ एंटी-टोबैको ऑडियो-विसुअल मेसेजेस ओं नॉलेज एंड एटिट्युड टुवर्ड्स टोबैको यूज़ इन नार्थ इंडिया. इंडियन जर्नल ऑफ़ कम्युनिटी मेडिसिन, आईएपीसीएम, खंड:37,अंक:37, पृष्ठ-227-231.

https://www.amarujala.com/entertainment/web-series/sacred-games-and-mirzapur-these-web-series-promote-tobacco?pageId=1 से दिनांक 31/07/2020 को दिन के 12.07 पर उद्धृत |

Mishra, R., & Newme, K. (2015). SOCIAL COMMUNICATION AND TRADITIONAL FOLK MEDIA OF THE ZEME NAGA SOCIETY. Global Media Journal: Indian Edition, 6.

सहगल, जे. (2012). सेहत में जहर घोलता तम्बाकू. https://www.dw.com/a-15990231 से दिनांक 31/07/2020 को

दिन के 12.37 पर उद्धृत |
https://www.naidunia.com/madhya-pradesh/sheopur-tribal-children-are-being-victim-of-oral-cancer-due-to-parents-2659799 से दिनांक 31/07/2020 को दिन के 12.44 पर उद्धृत |

आभार : प्रस्तुत अध्ययन के लिए शोधकर्ता भारतीय सामाजिक अनुसन्धान परिषद का आभारी है जिसके इम्प्रेस स्कीम के तहत यह अध्ययन वित्तपोषित किया गया है और अध्ययन के परिणामस्वरूप यह रिव्यू शोध पत्र प्रस्तुत किया जा सका है |

प्राचीन दक्षिण कोसल की कर व्यवस्था: एक अध्ययन

डॉ. देवेन्द्र कुमार सिंह

सारांश

दक्षिण कोसल भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। प्राचीन काल में यह क्षेत्र महाकोसल तथा दक्षिण कोसल इत्यादि नामों से जाना जाता था। बस्तर क्षेत्र को छोड़कर वर्तमान छत्तीसगढ़ का संपूर्ण भाग तथा उड़ीसा का पश्चिमी भू- भाग दक्षिण कोसल कहलाता है। इसके अतिरिक्त दण्डकारण्य, महाकोशल, महाकांतार, कोसल इत्यादि उपनामों से भी इस क्षेत्र को पहचाना जाता है। दक्षिण कोसल वर्तमान की तरह प्राचीन काल में भी कृषि उत्पादन में भारत के अग्रणी प्रदेशों में रहा है। किसी भी राज्य को सुचारू रूप से गतिमान रहने के लिए कोष की आवश्यकता होती है जो अधिकांशतः राज्य द्वारा लगाये गए करों से प्राप्त हुए धन से समृद्ध होती है। प्राचीन दक्षिण कोसल में राज्य की आय का महत्वपूर्ण साधन कृषि तथा व्यापार पर लगाया जाने वाला कर था किन्तु यदा-कदा अपराधिक प्रवित्तियों पर लगाया जाने वाला कर तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय लगाये जाने वाले करों का भी अस्तित्व मिलता है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन दक्षिण कोसल में लगाये जाने वाले करों के प्रकार, उनका अनुपात, भूमिदान, करयुक्त तथा करमुक्त भूमि, कर के उद्देश्य इत्यादि का वर्णन साहित्यिक तथा पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर किया गया है।

मुख्य शब्द- दक्षिण कोसल, कर, छत्तीसगढ़, दण्डकारण्य, कृषि, अभिलेख, भूमि

परिचय

प्राचीन भारतवर्ष का इतिहास अत्यन्त गौरवशाली रहा है। इसके पूर्व मध्य भाग में स्थित दक्षिण कोसल (छत्तीसगढ़) क्षेत्र का भी विशेष ऐतिहासिक महत्व रहा है। प्राचीन काल में यह क्षेत्र महाकोसल तथा दक्षिण कोसल इत्यादि नामों से जाना जाता था (पाण्डेय, 2008)। दक्षिण कोसल शब्द का प्रयोग उस भू-भाग के लिए किया जाता है जिसका भौगोलिक विस्तार लगभग 20° से 30° उत्तरी अक्षांश से लेकर 81° से 84° पूर्वी देशांतर तक है। इस क्षेत्र की प्राकृतिक सीमा का निर्धारण मेकल, महेन्द्रगिरि, मचका, सिहावा तथा शुक्तिमान (शुक्तिमत) पर्वत मालाएं करती हैं।

कोशल शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के शब्द 'कुशल' से हुई है जिसका अर्थ मुद्रित अथवा प्रसन्न से है । दण्डकारण्य, महाकोशल, महाकांतार, कोसल इत्यादि उपनामों से विख्यात वर्तमान छत्तीसगढ़ क्षेत्र भारतवर्ष के दक्षिणी पठार अथवा दक्षिणी प्रायद्वीप का एक भाग है जो मध्य तथा दक्षिण पूर्व में स्थित है। कई बार आधुनिक छत्तीसगढ़ प्रखण्ड को दक्षिण कोसल समझा जाता है किन्तु वास्तव में वर्तमान छत्तीसगढ़ प्रांत प्राचीन दक्षिण कोसल का केवल मध्य भाग था। मूलतः एक अवशेष पठार के रूप में जाना जाने वाला छत्तीसगढ़ अपने चारों ओर अवशेष पर्वतों तथा पठारों से घिरा हुआ है। लक्ष्मी शंकर निगम ने बस्तर को छोड़कर शेष छत्तीसगढ़ तथा उड़ीसा के संबलपुर, बांलागीर तथा कालाहाण्डी जिलों तक विस्तृत प्रदेश को दक्षिण कोसल माना है (निगम, 1998)। प्रस्तुत अध्ययन में प्रोफेसर निगम के विभाजन को दक्षिण कोसल की भोगौलिक सीमा के रूप में स्वीकार किया गया है।

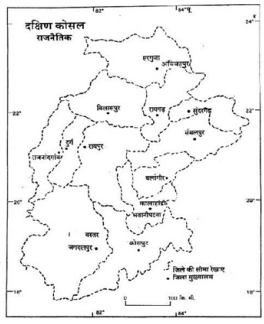

(सौजन्य- दक्षिण कोसल टुडे)

भारत प्रारंभ से ही कृषि प्रधान देश रहा है। दक्षिण कोसल वर्तमान की तरह प्राचीन काल में भी कृषि उत्पादन में भारत के अग्रणी प्रदेशों में रहा है । यहाँ की जलवायु, सदानीरा नदियाँ, उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त वर्षा, जैविक विविधता के साथ-साथ शक्तिशाली राजनीतिक शासन व्यवस्था ने इस क्षेत्र को समृद्ध बनाया है। वर्तमान में इस क्षेत्र को धान का कटोरा कहा जाता है क्योंकि इस क्षेत्र में धान की खेती मुख्य रूप से की जाती है और यहाँ धान की सबसे उन्नत किस्मे उपजाई जाती हैं। दक्षिण कोसल से प्राप्त विभिन्न अभिलेखों के साथ-साथ तत्कालीन साहित्यिक रचनाओं से ज्ञात

होता है कि प्राचीन काल से ही यह क्षेत्र धान के उत्पादन में अग्रणी रहा है। धान के अतिरिक्त तिवरा, कोदो-कुटकी, अलसी, गेहूं, चना व दालें इत्यादि यहाँ की अन्य प्रमुख फसलें हैं। कृषि के साथ-साथ पशुपालन में भी दक्षिण कोसल क्षेत्र अग्रणी रहा है जिसके कारण यहाँ की अर्थव्यवस्था सदैव फलती-फूलती रही है। दक्षिण कोसल क्षेत्र के आर्थिक इतिहास का प्रारंभ ई. पू. द्वितीय शताब्दी में मिलने वाले अभिलेखों एवं मौद्रिक साक्ष्यों में मिलने वाले विवरणों के साथ होता है जो निरंतर गतिमान हैं। पुरावशेषों के आधार पर ज्ञात होता है कि इस काल में राजा और प्रजा दोनों ने ही विविध निर्माण कार्य करायें। अनेक नगरों और गॉवों को बसाते हुए उनमे भवन, देवालय, दुर्ग, विहार, सरोवर, बाग, बगीचे आदि बनवाए। इन ग्रामों को त्रिदस पति सदन सुख प्रतिष्ठाकर अर्थात स्वर्ग के समान सुख देने वाला कहा गया है। वर्तमान समय में यह क्षेत्र अपने सघन वनों के लिए भारत में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्राचीन काल में भी यह प्रदेश सघन वनों से आच्छादित था जिसकी पुष्टि यहाँ से प्राप्त पुरातात्विक तथा साहित्यों साक्ष्यों से होती है।

किसी भी समाज के विकास तथा गतिशीलता को उस समाज की आर्थिक संरचना व्यापक रूप से प्रभावित करती है। आर्थिक दशाएं ही किसी समाज के मूल का निर्माण करती हैं। यदि प्राचीन विश्व इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो यह तथ्य प्रमाणित होता है कि जब भी किसी सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन हुआ है तो उसका कारण अधिकांशतः आर्थिक तत्व ही रहा है। प्राचीन भारतीय आर्थिक संरचना का मुख्य आधार 'वार्ता' है। प्रारंभ में वार्ता के अंतर्गत कृषि, वाणिज्य एवं पशुपालन आता था जिसमें बाद में 'कुसिद' अर्थात ब्याज भी जुड़ गया। वार्ता शब्द संस्कृत के 'वृत्ति' शब्द से निर्मित है, जिसका सामान्य अर्थ व्यवसाय होता है। किंतु इसका सीमित और विस्तृत दोनों अर्थों में प्रयोग किया जाता है। वार्ता के अंतर्गत विविध आर्थिक क्रियाओं जैसे - उत्पादन, उपभोग, विनिमय एवं वितरण आदि के संबंध में जानकारी प्राप्त होती है। वार्ता के नियम सामाजिक जीवन के आधार स्तंभ वर्ण-आश्रम एवं पुरूषार्थ (धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष) व्यवस्था पर आधारित है। इसीलिए प्राचीन भारतीय समाज में अर्थ के महत्व को स्वीकार करते हुए अर्थ प्राप्त करने के लिए श्रम एवं कर्म को साधन माना है तथा प्रत्येक व्यक्ति की जीविका को ध्यान में रखा है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय आर्थिक व्यवस्था में विचार और व्यवहार में संतुलन बना

रहा और एक निर्धारित ढांचे में समसामयिक आवश्यकताओं के साथ क्रमिक आर्थिक विकास होता रहा। दक्षिण कोसल क्षेत्र की आर्थिक पृष्ठभूमि और उसका क्रमिक विकास का अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि यह भू-भाग प्रागैतिहासिक काल से अपने अनुकूल जैविक स्थिति के कारण मानव निवास के प्रमुख केन्द्रों में से एक रहा है।

राज्य या राजकीय आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत्र कृषि, उद्योग एवं व्यापार इत्यादि पर लगाया जाने वाला कर होता है। दक्षिण कोसल क्षेत्र से प्राप्त होने वाले अभिलेखों में शासक या राज परिवार के सदस्यों द्वारा दान देते समय, दान में दी गयी भूमि या ग्राम के संबंध में वहां के ग्रामवासियों तथा राज्य के राजकीय अधिकारियों को संबोधित करते हुए यह उल्लेख किया गया है कि हमने दान ग्रहणकर्ता को अमुक करों से मुक्त किया या उन्हें अमुक कर ग्रहण करने का अधिकार प्रदान किया है। इस संदर्भ में राज्य के प्रचलित समसामयिक विविध प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों का उल्लेख मिलता है। कर संबंधी उल्लेखित विवरणों का समकालीन सामाजिक-आर्थिक संदर्भ में विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि सभी प्रकार के करों को मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

कृषि तथा भूमि पर आधारित कर

प्राचीन काल में कृषि या भूमि कर राज्य के राजस्व का सबसे प्रमुख साधन था। इसलिए कृषि या भूमि में कर लगाने की प्राचीन परंपरा मिलती है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कृषि भूमि के प्रकार एवं उसमें होने वाली उपज के आधार पर कर निर्धारण का उल्लेख मिलता है, जैसे असिंचित भूमि में कर फसल का छठवां भाग होता था और अपने प्रयास से सिंचित भूमि में फसल का पांचवा भाग तथा शासकीय सहयोग से सिंचित भूमि में फसल का चौथा भाग, कभी-कभी तीसरा भाग भी भूमि कर के रूप में लेने का उल्लेख प्राप्त होता है। इससे यह प्रतीत होता है कि यह व्यवस्था भूमि कर की आदर्श स्थिति रही होगी तथा संभवतः लगभग इसी प्रकार की स्थिति दक्षिण कोसल में भी रही होगी। 'सनिधि-सोपनिधि' शब्द का भी प्रयोग भूमि कर के रूप में मिलता है। कुछ अभिलेखों में 'द्रारद्रणक' शब्द का भी प्रयोग मिलता है (फ्लीट, 1888)। दार शब्द का प्रयोग शब्दकोषों में जुती हुई भूमि के लिए किया गया है। इसी प्रकार कृषि कर के

लिए उपरिकर शब्द का भी प्रयोग मिलता है जिसका अर्थ फ्लीट ने दूसरे की भूमि पर कृषि करने वाले कृषक पर लगाया जाने वाला कर बताया है (फ्लीट, 1888)। इसी प्रकार कृषि या भूमि कर के रूप में अभिलेखों में धान्य शब्द का भी उल्लेख मिलता है (शास्त्री, 1995)। कभी-कभी उपरोक्त करों के साथ आदेय शब्द भी कर के रूप में प्रयुक्त होता है जिसका अर्थ दा के साथ आ लगने पर होता है जिसे दिया जाना है। इससे यह ज्ञात होता है कि कृषि पर अधिकांशतः उपज के आधार पर अन्न के रूप में कर दिया जाता था। कभी-कभी उनके स्थान पर वस्तु या मुद्रा कर के रूप दिया जाता था। कांकेर के सोमवंशीय शासक पम्पराजदेव के तहनकापार शिलालेख में गौटिया लक्ष्मीधर द्वारा कुछ ग्रामों का राजस्व विजयराजठंक (मुद्रा) के रूप में देने का उल्लेख है (मिराशी, 1955)। प्राचीन काल में कर राजस्व संग्रह करने का अधिकार ग्राम प्रमुख को था वह कृषकों से राजस्व का संग्रह अन्न अथवा मुद्रा दोनों रूपों में करता था, जिसके लिए टकोली शब्द का प्रचलन मिलता है (शुक्ला, 1985), जो कभी-कभी श्रम के रूप में भी लिया जाता था। उसके लिए बेगारी या बेठी शब्द का प्रयोग किया गया है। जो गांव दान में मंदिर को दिया गया होता था उसके राजस्व के लिए देवोत्तर शब्द का प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार राज परिवार के महिला सदस्यों के अधिकार में जो ग्राम होता था जो अधिकांशतः विवाह के अवसर पर उपहार के रूप में प्राप्त होता था उसके राजस्व के लिए कुमारी शब्द का प्रयोग होता था। देवोत्तर एवं कुमारी गांव के राजस्व संग्रह का अधिकार राजा या राज्य के पास नहीं होता था।

उपरोक्त करों के अतिरिक्त सिंचाई एवं कृषि दंड तथा गोचर भूमि के लिये अलग से कर लेने का उल्लेख मिलता है। दक्षिण कोसल क्षेत्र में प्राचीन काल से ही कृषि उत्पाद के रूप में धान ही प्रमुख रहा है। धान की खेती के लिये वर्षा से अतिरिक्त जल की आवश्यकता होती है। इस क्षेत्र की भू-भौतिक संरचना के लिए वर्षा जल संग्रह का मुख्य स्त्रोत तालाब था जिससे सिंचाई की जाती थी। इस क्षेत्र में आज भी अनेक तालाब मिलते हैं जो सिंचाई के माध्यम के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। अभिलेखों में राजकीय अनुदान से अनेक तालाब बनाने का उल्लेख मिलता है। निश्चित ही इन तालाबों का प्रयोग सिंचाई के लिये किया जाता होगा। दक्षिण भारतीय अभिलेखों में सिंचाई कर के लिये 'कादा' शब्द का प्रयोग मिलता है (अल्तेकर, 1967)। नागवंशी शासक जयसिंहदेव के सुनरपाल शिलालेख में

'अधकादा' शब्द का प्रयोग मिलता है (शुक्ला, 1985)। संभवतः यह सिंचाई कर ही रहा होगा।

सोमवंशी शासकों के अभिलेखों में 'हलदण्ड' नामक कर का उल्लेख मिलता है (सरकार, 1987)। किंतु इसका स्वरूप क्या था यह स्पष्ट नही होता है, परंतु यह संभव प्रतीत होता है कि यह भी कर कृषि संबंधी किसी प्रकार के अपराध या अनियमित कार्य करने पर दंड के रूप में लिया जाता होगा। जैसे कुछ वर्ष पूर्व तक ग्राम के गौटिया द्वारा किसानों से हल अर्थात नागर बेगार के रूप में लिया जाता था। इस क्षेत्र से प्राप्त अनेक अभिलेखों में ऊसर एवं गोचर भूमि में भी कर लेने का उल्लेख मिलता है जिसके लिये वरवलीवर्द्द या चारी शब्द का उल्लेख मिलता है (सरकार, 1987)।

उद्योग एवं व्यापार से संबंधित कर

प्राचीन काल में राज्य के राजस्व का द्वितीय महत्वपूर्ण स्त्रोत उद्योग एवं व्यापारिक गतिविधियों में लगाये जाने वाले विविध कर होते थे । कौटिल्य के अर्थशास्त्र में विविध व्यवसायों, व्यापारिक संघो, श्रेणियों एवं बाह्य तथा आंतरिक व्यापार पर लगाये जाने वाले अनेक शुल्कों का विस्तृत विवरण मिलता है। संभवतः यह व्यवस्था संपूर्ण देश में लगभग समान रूप से प्रचलित होगी ऐसा प्रतीत होता है। दक्षिण कोसल क्षेत्र से प्राप्त अभिलेखों में सर्वकर अर्थात सभी प्रकार के कर के रूप का उल्लेख मिलता है पर अन्य उद्योग एवं व्यापार के प्रचलन तथा त्रिपुरी के कलचुरि शासकों के अभिलेखों में जो विविध प्रकार के व्यापार तथा बाजार कर का उल्लेख मिलता है (मिराशी, 1955), संभवतः वही व्यवस्था इस क्षेत्र में भी प्रचलित रही होगी। केवल कलचुरि शासकों के अभिलेखों में खनिजों तथा अवैध रूप से शराब बनाने पर रसवती दण्ड नामक कर लगाये जाने का उल्लेख मिलता है (शास्त्री, 1983) । इसी प्रकार नाव द्वारा व्यापार करने के लिए घाट कर और मार्ग्गणिका कर, लगाने का उल्लेख सोमवंशी शासक महाभवगुप्त जनमेजय प्रथम के वक्रतेन्तली ताम्रपत्र और महाभवगुप्त उद्योत केसरी के नरसिंहपुर ताम्रपत्र में मिलता है। आयातित खाद्य पदार्थ, तेल, आभूषण एवं हाथी-घोड़ों पर कर लगाने का उल्लेख मिलता है जो सामान्यतः विविध मान अथवा मूल्य के सिक्कों के रूप में होता था।

अपराधिक कर एवं समसामयिक अन्य कर

प्राचीन काल में राज्य में होने वाले अपराधों के दण्ड के रूप में लिया जाने वाला कर (हर्जाना) और विभिन्न अवसरों पर उपहार या भेंट के रूप में दिया जाने वाला कर (नजराना) आय का तीसरा महत्वपूर्ण स्त्रोत था। दक्षिण कोसल से प्राप्त अनेक अभिलेखों में अन्य करों के साथ-साथ 'सदशापराधः' नामक कर का उल्लेख अवश्य मिलता है जिसका अभिप्राय मनुष्यों द्वारा होने वाले दस प्रकार के अपराधों पर दण्ड स्वरूप लिया जाने वाला कर था (शास्त्री, 1983)। धर्मसिंधु के अनुसार दस अपराधों के अंतर्गत (शरीर के तीन, वाणी के चार और मन के तीन अपराध) अदत्त वस्तुओं का ग्रहण अर्थात चोरी करना, हिंसा या हत्या करना, बलात्कार, भाषा की कटुता, असत्य बोलना, चुगली करना, असंबद्ध प्रलाप करना, दूसरों के धन के लिये लोभ करना, मन में अनुचित बातों का चिंतन करना और अयथार्थ बातों के प्रति दृढ़ आग्रह करना आते हैं। इसी प्रकार सोमवंशी शासकों द्वारा जारी विभिन्न ताम्रपत्रों में ग्राम दान देते समय अनेक प्रकार के अपराधों पर दण्ड स्वरूप दिये जाने वाले करों का उल्लेख मिलता है। इसके अंतर्गत हस्तिदण्ड, वरलीवर्द्द, चित्तोल, अन्धारूआ प्रत्यन्धारूआ, पदातिजीव्य, अंतरावड्डि, वसावकों विषयाली अहिदण्ड, हलदण्ड, बान्धदण्ड, तान्दापना आदि का उल्लेख मिलता है। कलचुरि शासकों के अभिलेखों में अवैध रूप से शराब बनाने के लिए रसवन्ती दण्ड लेने का उल्लेख मिलता है। उपरोक्त विवरणों से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में ग्राम के अंतर्गत होने वाले विभिन्न आपराधिक कार्यों के लिए दण्ड के रूप में लिया जाने वाला कर प्रायः अर्थ के रूप में लिया जाता था किंतु ग्राम दान देने पर वह आय दान ग्रहणकर्ता को प्राप्त हो जाता था। इसीलिये इन अभिलेखों में दान संबंधी शर्तों का विस्तार से उल्लेख किया जाता था।

उपरोक्त करों के अतिरिक्त 'दिव्य', 'विष्टि' एवं 'प्रतिभेदिका' कर राजा या दान ग्रहणकर्ता को दिया जाता था। दिव्य संभवतः विशेष प्रसंगों में राजा को दिया जाने वाला नजराना होगा। विष्टि से तात्पर्य विशेष अवसरों पर ग्रामीणों से बिना मजदूरी दिये काम लेने के अधिकार से है। प्रतिभेदिका में अन्य अधिकारों का समावेश होता था। इसके अतिरिक्त राज्य के अधिकारी या सिपाही जब किसी गांव में जाते थे तो गांव वालों को उन्हें वसतिदण्ड या प्रवासदण्ड नामक कर देना पड़ता था। दान में दिये गये गांव में यह कर नहीं लगता था इसी कारण सैनिक एवं पुलिस के लोग चोरों व

राजविद्रोहियों को पकड़ने के अतिरिक्त अन्य किसी भी काम से दान में दिये गये गांवों में प्रवेश नही कर सकते थे। इस प्रकार का उल्लेख दक्षिण कोसल से प्राप्त होने वाले अनेक दान पत्रों में मिलता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन दक्षिण कोसल में भी भारत के अन्य समकालीन प्रदेशों के तरह की कर प्रणाली प्रचलित थी। किन्तु यदा-कदा कुछ विशेष परिस्थितियों में कर का प्रतिशत तथा निर्धारण में हम पर्याप्त विभिन्नता पाते हैं। कर का निर्धारण तथा कर में छूट दोनों ही राजा के विशेषाधिकार थे। राजा को यह विशेषाधिकार था की वह कोई भी भूखंड किसी को भी दान कर सकता था जो अधिकांशतः करमुक्त भूमि होती थी। राज्य द्वारा निर्मित साधनों से सिंचित भूमि पर कर की मात्रा अन्य भूमि से अधिक हुआ करती थी।

संदर्भ

पाण्डेय, ऋषिराज (2008). छत्तीसगढ़ (दक्षिण कोसल के कलचुरि) (पृष्ठ 15). रायपुर: छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी.

निगम, लक्ष्मी शंकर (1998). दक्षिण कोसल का ऐतिहासिक भूगोल (पृष्ठ 9). दिल्ली: शारदा पब्लिशिंग हाउस.

फ्लीट, जे. एन. (1888). कार्पस इन्सिक्रिप्सनम् इंडिकेरम, (भाग 3, पृ. 384). कलकत्ता: दि सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ़ गवर्नमेंट प्रिंटिंग.

शास्त्री, ए. एम. (1995). इंस्क्रिप्शंन ऑफ शरभपुरीय पाण्डुवंशीय एंड सोमवंशीय (पृ. 5). दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास.

मिराशी, वी. वी (1955). कार्पस इन्सिक्रिप्सनम् इंडिकेरम, (भाग 4, खंड 2, पृ. 375). ऊताकामुन्द: गवर्नमेंट एपिग्राफिस्त फॉर इंडिया.

शुक्ला, हीरालाल (1985). सोशल हिस्ट्री ऑफ छत्तीसगढ़ (पृ. 35, 165). दिल्ली: आगम कला प्रकाशन.

अल्तेकर, ए. एस. (1967). राष्ट्रकूट एंड देयर टाईम (पृ. 412). पूना: ओरिएण्टल बुक एजेंसी.

सरकार, डी. सी. (1987). एपिग्राफिया इंडिका (भाग 33, पृ. 263, 237). नई दिल्ली: ए0 एस0 आई0.

शास्त्री, हीरानंद (1983). एपिग्राफिया इंडिका (भाग 19, पृ. 75), नई दिल्ली: ए0 एस0 आई0.

क्षमाशीलता, संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार एवं कल्याण: साहित्य समीक्षा

रेशू मिश्रा
डॉ. ललित कुमार मिश्र

सारांश

सन 2000 में मार्टिन सेलिंगमैन ने मनोविज्ञान की एक नई शाखा "सकारात्मक मनोविज्ञान" की शुरुआत की जिसमें एक सामान्य व्यक्ति के जीवन के स्तर को सुधारने और नकारात्मक परिस्थितियों से उबरने की उसकी योग्यताओं को संवर्धित करने का उपक्रम किया जाता है। क्षमाशीलता इस सकारात्मक मनोविज्ञान का एक प्रमुख कारक है जिसकी सहायता से व्यक्ति सामंजस्य स्थापित करने में तथा अपने निष्पादन को बेहतर करने में सहायता प्राप्त कर सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र में पूर्व में किए गए विभिन्न शोध पत्रों का विश्लेषण कर यह पता लगाने का प्रयास किया गया है कि क्षमाशीलता संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार के साथ मिलकर व्यक्ति के कल्याण को और बेहतर बनाती है अथवा नहीं। विभिन्न शोध पत्रों का विश्लेषण कर यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति के कार्यस्थल पर क्षमाशीलता का प्रभाव उसके कल्याण से जुड़ा हुआ है और संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार यदि व्यक्ति में उपस्थित होता है तो यह दो चरों का प्रभाव और भी ज्यादा मजबूत हो जाता है। नुकसान पहुंचाने वाले व्यक्ति को क्षमा कर व्यक्ति अपने मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर कर पाता है अंततः कार्यस्थल पर उसका समायोजन उत्कृष्ट होता है फलत: निष्पादन ज्यादा बेहतर होता है।

प्रस्तावना

सकारात्मक मनोविज्ञान की शुरुआत 1998 में हुई जब प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मार्टिन सेलिंगमैन अमेरिकी मनोवैज्ञानिक संघ के चेयरमैन नियुक्त हुए। उन्होंने 19वीं शताब्दी के 70 और 80 के दशक में अर्जित नि:सहायता पर बहुत से काम किए; इसके अतिरिक्त उन्होंने अवसाद पर भी शोध किया और अर्जित नि:सहायता को अवसाद के साथ जोड़ते हुए यह माना कि व्यक्ति जब अवसाद से ग्रसित होता है तो वह परिस्थितियों पर काम कर उस पर काबू पाने की अपनी क्षमता में गिरावट महसूस

करता है, वस्तुतः वह परिस्थितियों पर कार्य कर उसे ठीक कर सकता है अर्थात अवसाद ग्रस्त व्यक्ति में अर्जित नि:सहायता का योगदान सेलिंगमैन ने माना। लंबे समय तक इन नकारात्मक पहलुओं पर शोध कर सेलिंगमैन व्यथित हो चुके थे और मनोविज्ञान के क्षेत्र को एवं विश्व को कुछ अतिरिक्त योगदान देना चाहते थे। अमेरिकी मनोवैज्ञानिक संघ के चेयरमैन नियुक्त होते ही सेलिंगमैन को एक मौका मिल गया और उन्होंने सन 2000 में मनोविज्ञान के एक नए क्षेत्र "सकारात्मक मनोविज्ञान" की शुरुआत की। इस कारण ही इन्हें इस क्षेत्र का पिता माना जाता है। सकारात्मक मनोविज्ञान में शोधकर्ताओं ने उन विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया है जो व्यक्ति के जीवन को सुधारने और उसे ज्यादा बेहतर बनाने का प्रयास करता है। सकारात्मक मनोविज्ञान आनंद, खुशी, आशा, विश्वास जैसे मुद्दों पर विचार करता है और जीवन को जीने लायक बनाता है (सेलीगमैन एवं सेसिकज़ेंटमिहैली, 2000); इन्होंने यह भी रिपोर्ट किया कि साहस, उम्मीद, आशावाद, विश्वास, ईमानदारी, निष्ठा, करुणा, और क्षमाशीलता जैसे गुण मनोवैज्ञानिक संकटों (Psychological Distress) व्यसनों तथा शिथिल व्यवहारों (Dysfunctional Behaviour) के रोकथाम में उपयोगी साबित हुए हैं। सेलिंगमैन के बाद बहुत सारे शोधकर्ताओं ने मनोविज्ञान के नियमों एवं सिद्धांतों को इस प्रकार प्रयोग किया है जिसकी सहायता से हम मानव के आपसी रिश्तों को सुधरने में, शिक्षण व प्रशिक्षण, तथा कार्य स्थल पर प्रयोग कर व्यक्ति में कठिन परिस्थितियों से जल्द निपटने की योग्यता (resilience) विकसित करने में सक्षम हो सकें।

सकारात्मक मनोविज्ञान के बहुत से कारकों को लेकर उद्योगों एवं कार्य स्थलों पर अनुसंधान एवं शोध किए गए हैं जिसका उद्देश्य व्यक्ति की नकारात्मक परिस्थितियों से शीघ्रता से उबर कर उनके कार्य करने की क्षमता को बढ़ाना है जिससे अंततः संगठन की कार्य क्षमता विकसित हो। क्षमाशीलता (Forgiveness), संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (Organizational Citizenship Behaviour) और कल्याण (well-being) व्यापक रूप से सकारात्मक मनोविज्ञान के चर हैं, जिनका कार्यस्थल पर कर्मचारी के निष्पादन पर प्रभाव से संबंधित अनेक अध्ययन किए गए हैं परंतु, इन चरों के आपसी संबंधों की जांच पर आधारित शोध अपेक्षाकृत कम किये गये है। होप (1987) के अनुसार, क्षमा करना मनोवैज्ञानिक उपचार

(हीलिंग) की एक प्रक्रिया है और आध्यात्मिक अभ्यास (स्पिरिचुअल प्रैक्टिस) की तरह है। कैमरन, डटन और कुइन (2003) के अनुसार संगठनों में क्षमाशीलता का प्रादुर्भाव सकारात्मक संगठनात्मक स्कॉलरशिप (पीओएस) नामक अध्ययन के एक नए क्षेत्र से सामने आई है। एक्विनो, ग्रोवर, गोल्डमैन, और फोल्गर (2003) के अनुसार, क्षमाशीलता को संगठनों में सैद्धांतिक रूप से महत्वपूर्ण मानना ही चाहिए साथ ही प्रबंधकों को इसे व्यवहार में भी लाना चाहिए क्योंकि इसी की सहायता से व्यक्ति अपने कार्यस्थल के बिगड़े रिश्तों को सुधार सकता है और पारस्परिक बिगड़े संबंधों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न दुर्बल विचारों और भावनाओं को दूर कर सकता है; यह एक संज्ञानात्मक, भावनात्मक और व्यवहारिक प्रक्रिया है।

क्षमाशीलता

क्षमाशीलता किसी व्यक्ति का एक नैसर्गिक गुण होता है जिसमें व्यक्ति एक अनुचित व्यवहार करने वाले व्यक्ति पर भी दया करता है, साथ ही अपने प्रति अनुचित काम करने वाले के प्रति प्रेम रखता है। क्षमाशीलता मानव अनुभव का एक स्वाभाविक हिस्सा है; जिसमें व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के अनुचित व्यवहार से उत्पन्न हुए नाराज़गी, कड़वाहट, क्रोध और प्रतिशोध लेने की भावनाओं को समाप्त कर अनुचित व्यवहार कर रहे व्यक्ति को क्षमा प्रदान करता है। व्यक्ति यह मानता है कि जैसे वह व्यक्ति हमारे साथ बुरा बर्ताव कर रहा है, संभवत: हमने भी किसी अन्य व्यक्ति के साथ ऐसा ही व्यवहार किया होगा और इसी से क्षमाशीलता जन्म लेती है; परिणाम स्वरूप व्यक्ति उसे क्षमा प्रदान कर देता है भले ही बुरा व्यवहार कर रहा व्यक्ति क्षमा प्रार्थी ना भी हो। क्षमाशीलता मानव का एक स्वाभाविक व्यवहार है और इसका विकास भी उसी प्रकार हुआ है जैसे हमारे बदला लेने की प्रवृत्ति का जन्म हुआ है, यह दोनों व्यवहार मनुष्य की सामाजिक प्रवृत्तियाँ हैं जिनका उद्देश्य बुरे व्यवहार से उपजे नकारात्मक भावनाओं से उत्पन्न तनाव में कमी करना है। नि:संदेह, इसमें बदला लेना, नाराजगी, कड़वाहट इत्यादि नकारात्मक जबकि क्षमाशीलता एक सकारात्मक प्रक्रिया है।

यदि इसे साधारण शब्दों में परिभाषित किया जाए तो कहा जाएगा "क्षमाशीलता किसी व्यक्ति का, सचेतन एवं जानबूझकर किसी व्यक्ति या किसी समूह

द्वारा किए गए बुरे बर्ताव से उपजे प्रतिशोध या प्रतिशोध की भावनाओं को छोड़ने के निर्णय से है, भले ही जिस व्यक्ति ने उसे नुकसान पहुंचाया है वह वास्तव में माफी के लायक हो अथवा न हो"। क्षमाशीलता का तात्पर्य यह नहीं है कि बुरे बर्ताव की गंभीरता को ही समाप्त कर दिया जाए और न ही उसे नकार दिया जाए; यह "भूल जाना" कभी भी नहीं हो सकती, अपितु, यह किसी क्षतिग्रस्त हो रहे रिश्ते को सुधारने में मदद कर सकती है। क्षमाशीलता बुरा बर्ताव कर रहे व्यक्ति के साथ सामंजस्य बैठाने के लिए बाध्य नहीं करती, और न ही उस व्यक्ति को कानूनी प्रक्रियाओं से मुक्त करती है। ऐसा करने से व्यक्ति को मात्र मानसिक शांति प्राप्त होती है और उपजे क्रोध को समाप्त करने में मदद मिलती है। आसान शब्दों में कहा जा सकता है कि क्षमाशीलता प्रतिदिन के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है; यह हमारे पारस्परिक संबंधों को प्रभावित करती है और मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करती है|

क्षमाशीलता एक नैतिक गुण है जो 'बहाना बना देना', 'भूल जाना' और 'सामंजस्य स्थापित कर लेना', से सर्वथा भिन्न है क्योंकि इन तीनों गुणों में नैतिकता का अभाव होता है; अपितु क्षमाशीलता में व्यक्ति बुरा बर्ताव करने वाले को स्वतः क्षमा कर देता है तथा उसके प्रति प्रेम का भाव रखता है, न कि उसके बुरे व्यवहार के प्रति कोई बहाना बना कर उसका मूल्यांकन ही परिवर्तित कर दे और उसे बुरे बर्ताव के रूप में ना देखें, उस व्यवहार को भूलने का प्रयास करे, या किसी प्रकार सामंजस्य मात्र स्थापित कर ले। राई और परगमेंट (2002) के अनुसार क्षमाशीलता अन्याय की प्रतिक्रिया से उत्पन्न नकारात्मक भाव (शत्रुता), नकारात्मक संज्ञान (बदले का विचार), और नकारात्मक व्यवहार (मौखिक अथवा शारीरिक आक्रामकता) को छोड़ देने से है, इसके विपरीत, अपराधी के प्रति करुणा जैसा सकारात्मक भाव इसमें शामिल हो सकता है।

क्षमाशीलता का सीधा संबंध व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य से होता है। इस संदर्भ में किए गए शोध कार्यों से यह पता चलता है जिन व्यक्तियों में क्षमाशीलता का गुण ज्यादा होता है, उनके मानसिक स्वास्थ्य का स्तर भी अच्छा होता है। बेरी एंड वर्थिंगटन (2001) द्वारा एक सह-संबंधी अध्ययन से पता चलता है कि क्षमाशीलता मानसिक स्वास्थ्य के साथ सकारात्मक रूप से जुड़ा हुआ होता है। इसी प्रकार का

शोध थॉम्पसो, स्नाईडर, हॉफमैन, मिशेल, रासमुसेन, बिलिंग्स तथा उनके साथियों (2005) ने किया और पाया कि क्षमा करने से मानसिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ब्राउन एवं फिलिप्स (2005), लॉलर -रोव एवं पिफरि (2006) और थॉम्पसन एवं उनके साथियों (2005) के एक अध्ययन में पाया गया कि क्षमा का सकारात्मक संबंध जीवन की संतुष्टि से है जबकि अवसाद से इसका नकारात्मक संबंध है । एक्सलाइन, याली, और लोबेल (1999), ब्राउन (2003), बेरी, वर्थिंगटन, ओ'कॉनर, पैरट, और वेड (2005) तथा ऑर्कट, (2006) के अध्ययनों से पता चलता है कि क्षमाशीलता नकारात्मक मनन से नकारात्मक रूप से जुड़ा हुआ है, अर्थात जिन व्यक्तियों में क्षमाशीलता अधिक होती है ऐसे व्यक्ति किसी नकारात्मक पहलू पर कम मनन करते हैं|

क्षमाशीलता एक आंतरिक प्रतिक्रिया है जो एक अपराधी को नकारात्मक विचारों, भावनाओं और प्रतिक्रियाओं के साथ अपराधी के प्रति व्यवहार की जगह अपराध को जिम्मेदार ठहराती है । अपराधी के प्रति सहानुभूति और करुणा क्षमाशीलता को बढ़ावा देती है, अपराधी को क्षमा करने से नकारात्मक भावना कम हो जाती है और सकारात्मक भावनाऐं उत्पन्न होती हैं | मनोवैज्ञानिक रूप से, क्षमाशीलता में एक प्रकार का आतंरिक परिवर्तन हो जाता है, इस परिवर्तन में एक अंतर-वैयक्तिक परोपकारिता निहित होती है जो अपराधी के प्रति एक विशेष सामाजिक संदर्भ से उपजी नकारात्मकता को समाप्त कर देती है (मैककूलोघ, परगामेन्ट, और थोरेसन, 2000) | क्षमाशीलता व्यक्ति के अंदर ही निहित होती है, पर इस पर अंतरावैयक्तिक परिवेश का भी प्रभाव पड़ता है, इसीलिए व्यक्ति का अपराधी के प्रति लगाव कैसा है, उसके गुण रोपण का प्रकार क्या है (अर्थात व्यक्ति परिस्थिति को या व्यक्ति विशेष को उसके कृत्य के लिए जिम्मेदार मानता है), उसके अपने व्यक्तिगत विश्वास एवं मूल्य क्या हैं, तथा उसका व्यक्तित्व का प्रकार क्या है, इन चरों का भी प्रभाव पड़ता है; इसके अतिरिक्त अपराध किन परिस्थितियों में हुआ, अपराधी का व्यक्ति से संबंध कैसा है, व्यक्ति की आध्यात्मिक/धार्मिक स्थिति किस प्रकार की है, दुर्व्यवहार या अपराध के समय आसपास की परिस्थितियां, व्यवहार, तथा बातचीत किस प्रकार की थी, तथा अन्य सभी परिस्थितियां जो क्षमा प्रदान करने को प्रभावित कर सकती हैं इनका भी क्षमाशीलता पर प्रभाव पड़ता है (डेविस, हुक, और

वर्थिंगटन, 2008)।

क्षमाशीलता उस स्रोत (व्यक्ति या परिस्थिति) के प्रति नकारात्मक जुड़ाव से मुक्ति पाना है जिसने किसी व्यक्ति के खिलाफ अपराध किया है (थॉम्पसन एवं साथी, 2005)। द फाउंडेशन फॉर इनर पीस (1975), जम्पोलस्की (1999) और फ्राईडमैन (1989, 2000) ने क्षमाशीलता को परिभाषित करने के लिए सात मानदंडों का प्रयोग किया:

1. प्रत्यक्षीकरण और दृष्टिकोण में बदलाव लाना,
2. विश्वास और मनोवृत्ति में बदलाव लाना,
3. भावना में बदलाव लाना,
4. आत्म-सशक्तीकरण और स्वयं की ज़िम्मेदारी में बदलाव लाना,
5. विकल्प, निर्णय और नीयत में बदलाव लाना,
6. द्वैत चेतना से एकल चेतना पर केंद्रित होना, एवं
7. किसी व्यक्ति के मूल गुणों की पहचान में बदलाव लाना।

भारतीय हिंदू परंपरा में क्षमाशीलता एक महत्वपूर्ण तत्व है। गीता को हिंदू धर्म के सार्वभौमिक ग्रंथ के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसमें लिखे हुए श्लोक क्षमाशीलता को एक महत्वपूर्ण धार्मिक समर्थन देते हैं। महाभारत में क्षमाशीलता के लिए एक प्रसिद्ध भजन है जो इस प्रकार है: "क्षमा पुण्य है; क्षमा ही त्याग है, क्षमा ही वेद है, क्षमा ही श्रुति है [प्रकट शास्त्र]"। क्षमा ब्रह्मा है [भगवान]; क्षमा सत्य है; क्षमा को संन्यासी गुण माना जाता है; क्षमा भविष्य की तपस्वी योग्यता की रक्षा करती है; क्षमा तप है; क्षमा पवित्रता है; और क्षमा से ही ब्रह्मांड को एक साथ रखा गया है।

- अभयं सत्वसंशुद्धि: ज्ञानयोग व्यवस्थितिः
  दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम ||

- अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्याग: शान्तिरपैशुनम

दया भूतेष्वलोलुप्तवं मार्दवं ह्रीरचापलम ||

- तेज: क्षमा धृति: शौचमद्रोहोनातिमानिता
  भवन्ति सम्पद दैवीमभिजातस्य भारत || (श्रीमद् भागवत गीता)

हे भारत के वंश, ये एक दिव्य प्रकृति के साथ संपन्न लोगों के संत गुण हैं - निर्भयता, मन की पवित्रता, आध्यात्मिक ज्ञान में दृढ़ता, दान, इंद्रियों पर नियंत्रण, बलिदान का प्रदर्शन, पवित्रता का अध्ययन। किताबें, तपस्या और सरलता; अहिंसा, सत्यवादिता, क्रोध का अभाव, त्याग, शांति, दोष में संयम, सभी जीवों के प्रति करूणा, दया, लोभ, सौम्यता, विनय का अभाव और चंचलता का अभाव; जोश, क्षमा, भाग्य, स्वच्छता, किसी के प्रति शत्रुता और घमंड की अनुपस्थिति । तेज (प्रभाव), क्षमा, धैर्य, शरीर की शुद्धि, बैर भाव का न रहना और मान को न चाहना, ये सभी दैवीय सम्पदा को प्राप्त हुए मनुष्य के लक्षण हैं।

संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB)

उपरोक्त वर्णित सकारात्मक संगठनात्मक स्कॉलरशिप किसी संस्था के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान देता है न कि नकारात्मक पहलुओं पर | उदाहरण के लिए, संस्था में अच्छा क्या है, इसमें क्या प्रेरणादायक है, वरन नकारात्मक पहलू जैसे क्या बुरा है और संस्था की खामियाँ क्या हैं । इन्हीं सकारात्मक व्यवहारों में एक संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB) है जो क्षमाशीलता से संबंधित हो सकता है । एक संस्था में कर्मचारी यह समझते हैं कि इस संस्था में उनका मुख्य काम किए गए कार्य को निष्पादित कर देना है, उन व्यवहारों को करने से बचना है जिससे कोई समस्या उत्पन्न हो जाए, और उन कामों को करना है जो एक संस्था में स्वीकार किए जाते हैं तथा संस्था के लिए फ़ायदेमंद होते हैं। संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार ऐसे व्यवहार हैं जो सीधे नौकरी से संबंधित नहीं होते हैं अर्थात यह व्यवहार नौकरी के नियमों के अधीन नहीं आते, फिर भी कर्मचारी की टीम को फायदा पहुंचाते हैं और संगठन के प्रभावी और कुशल संचालन को बढ़ावा देने में मदद करते हैं (विलियम्स एवं एंडरसन, 1991)। संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB) कार्यकर्ता के अपने विवेकाधीन व्यवहार होते हैं, जिनकी न तो संगठन अपेक्षा करता है और न ही इन्हें आवश्यक

समझता है और इसलिए ही संगठन द्वारा इसकी उपस्थिति या कमी के लिए औपचारिक रूप से कर्मचारी को पुरस्कृत या दंडित नहीं किया जा सकता है। इसमें मुख्यत: पाँच कारक सम्मिलित हैं: 1) परहितवाद (Altruism): इसमें कर्मचारी किसी दूसरे कर्मचारी की मदद बिना इस प्रत्याशा के करता है कि बदले में उसे कुछ प्राप्त होगा। 2) खेल-भावना (स्पोर्ट्समैनशिप): कुछ गलत या निराश कर देने वाली स्थिति उत्पन्न होने के बावजूद कर्मचारी का अच्छी भावना में बने रहना 3) कर्तव्यनिष्ठा (Conscientiousness): समय या नियमों के बाहर जाकर भी कार्य का निष्पादन करना जैसे प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए अतिरिक्त समय देना। 4) नागरिक धर्म (Civic Virtue): स्वयं को संस्था का नागरिक मानना तथा उसका भला सोचना, जैसे संगठन के बाहर संगठन के सकारात्मक पहलुओं को प्रस्तुत करना तथा 5) सौजन्यता (Courtesy): सहकर्मियों का भला सोचना और उनके प्रति विनम्र होना। स्यनेक (1991) ने ऐसे तीन कारण बताए हैं जिससे संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार, संस्थानों के प्रभावों से प्रभावित नहीं होता है:

1. ऐसे व्यवहार अति जटिल होते हैं जिससे इसे कर्मचारी के वार्षिक मूल्यांकन (Appraisal) में वस्तुनिष्ठ तरीके से रेटिंग के लिए सम्मिलित कर पाना संभव नहीं होता;
2. संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार के कुल 5 प्रकार बताए गए हैं जिसमें एक प्रकार दूसरों की सहायता करना है, दूसरे की सहायता करने पर व्यक्ति कार्यस्थल पर अपने कार्य से दूर हो सकता है; तथा
3. इस तरह के व्यवहार स्वेच्छा से किए जाते हैं, इन्हें कार्य के नियमों में अनुबंधित नहीं किया जा सकता और यदि अनुबंधित किया जाता है तो यह नागरिकता व्यवहार नहीं रह जाएगा बल्कि यह कार्यस्थल अनुबंधित व्यवहार माना जाएगा; संगठन कर्मचारियों को इस व्यवहार के प्रदर्शन नहीं करने के लिए दंडित नहीं कर सकता है। इस कारण से, संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB) को आमतौर पर सामाजिक विनिमय (मूरमैन, 1991) के संदर्भ में परिभाषित किया गया है।

क्षमाशीलता और संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार

संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB) पिछले दो दशकों के दौरान सबसे अधिक शोध का विषय रहा है (मैकेंजी, पॉड्सकॉफ़, एवं फेटर, 1991; ऑर्गन; 1997), और यह इस संभावना पर आधारित रहा है कि संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार (OCB) संगठन की प्रभावशीलता को बढ़ाता है (ऑर्गन, 1988; पॉड्सकॉफ़ और मैकेंज़ी, 1997; वाल्ज़ और निहॉफ़, 2017)| ऑर्गन (1988), OCB को व्यक्तिगत व्यवहार के रूप में परिभाषित करते हैं, जो संस्था के प्रोत्साहन प्रणाली द्वारा प्रत्यक्ष या स्पष्ट रूप से मान्यता प्राप्त नहीं है, परन्तु यह संस्था के कामकाज को प्रभावी रूप से बढ़ावा देता है; ये व्यवहार नौकरी के लिए आवश्यक योग्यता नहीं है, वरन व्यक्ति के व्यक्तिगत पसंद पर निर्भर करता है|

क्षमाशीलता और व्यक्तित्व:

व्यक्तित्व व्यक्ति के विचार, भावना और व्यवहार के स्थायी पैटर्न को संदर्भित करते हैं जो समय के साथ नहीं बदलते हैं और विभिन्न स्थितियों में लोगों के व्यवहार की व्याख्या करते हैं (कोस्टा और मैकक्रे, 1989; फंडर; 2001)। व्यक्तित्व का पाँच-कारक मॉडल (FFM) या "बिग-फाइव" पर पिछले दो दशकों के दौरान व्यक्तित्व के क्षेत्र में काफी अध्ययन हुए हैं (रॉबर्टसन एवं कॉलिनन, 1998) | पाँच-कारक इस प्रकार है अंतर्मुखता, मनोविक्षुब्धता, अनुभव का खुलापन, सहमतता, और कर्तव्यनिष्ठा (कोस्टा और मैकक्रे, 1992), व्यक्तित्व मनोविज्ञान ने व्यक्तित्व के मापन के लिए स्पष्ट माप प्रदान किया है और कार्य के क्षेत्र में व्यक्तित्व के प्रति रुचि बढ़ाने के लिए जिम्मेदार है।

क्षमाशीलता पर किये गए विभिन्न शोध कार्यों से इस बात को पुख्ता करने के पर्याप्त सबूत मिलते हैं कि क्षमाशीलता व्यक्ति का अपना एक शीलगुण होता है, और इस तरह से यह व्यक्तित्व का भाग हो सकता है। कुछ विशेष प्रकार के व्यक्तित्व में क्षमाशीलता अधिक बलवती हो सकेगी तथा कुछ अन्य में यह क्षमाशीलता के लिए बाधक हो सकती है। व्यक्तित्व के 'बिग-फाइव प्रकार' से संबंधित अध्ययनों में इसका क्षमाशीलता से सार्थक सहसंबंध पाया गया है। वर्थिंगटन (1998) का दावा है कि मनोविक्षुब्धता (Neuroticism), क्षमाशीलता की एक नकारात्मक विशेषता है और

इस बात का आंकड़ों पर आधारित शोधकार्यों में प्रमाण भी मिलता है (एश्टन, 1998; वॉकर और गोर्सुच, 2002) । मनोविक्षुब्धता के अंतर्गत निहित क्रोध व शत्रुता, क्षमाशीलता में बाधा उत्पन्न करते हैं (कैपलान, 1992; मैकुलॉ, बेल्ला, किलपैट्रिक, और जॉनसन, 2001) । वोर्थिन्टन (1998) ने सहमतता (Agreeableness) को क्षमाशीलता को बढ़ावा देने वाले रूप में देखा है। आंकड़ों पर आधारित शोध इस परिकल्पना का समर्थन करते हैं और विभिन्न शोधकर्ताओं ने सहमतता एवं क्षमाशीलता के मध्य सकारात्मक सहसंबंध प्राप्त किया है (एश्टन 1998, मैकुलॉफ 2001; रॉस, केंडल, मैटर्स, व्रोबेल और राई, 2004)। वॉकर और गोर्सुच (2002) ने पाया कि सहमतता दूसरे व्यक्तियों से और ईश्वर से क्षमा प्राप्त करने से तो संबंधित थी, लेकिन दूसरों को क्षमा करने से संबंधित नहीं थी।

शेष बिग-फाइव व्यक्तित्व प्रकारों पर किए गए अध्ययनों में मिश्रित परिणाम प्राप्त हुए हैं । वर्थिंगटन (1998) ने सुझाया था कि अंतर्मुखता क्षमाशीलता से नकारात्मक रूप से जुड़ी होती है, जिसका समर्थन रॉस (2004) द्वारा किया गया जिसमें उन्होंने पाया कि 'गर्मजोशी' और 'सकारात्मक भावनाएं' बहिर्मुखी व्यक्तित्व में पाई जाती हैं जिसकी वजह से बहिर्मुखता एवं क्षमाशीलता एक दूसरे से सकारात्मक रूप से जुड़ी होती हैं। यद्यपि कि वाकर और गोर्सुच (2002) ने पाया कि अंतर्मुखी व्यक्तियों को दूसरों से क्षमा प्राप्त करने की संभावना कम होती है; उन्हें दूसरों को क्षमा करने और बहिर्मुखता के बीच कोई संबंध नहीं प्राप्त हुआ।

वर्थिंगटन (1998) ने कहा कि अनुभव का खुलापन (Openness to Experience) क्षमाशीलता को संवर्धित करने वाली एक विशेषता है। हालांकि, कई अध्ययन अनुभव का खुलापन और क्षमा के बीच संबंध खोजने में विफल रहे हैं (एश्टन 1998; वॉकर और गोर्सुच, 2002)। अनुभव का खुलापन प्रकार के व्यक्तित्व में व्यक्ति अनेक कल्पनाएं करता है; वॉकर और गोर्सुच (2002) ने इस कल्पनाशीलता के गुणों के कारण अनुभव का खुलापन एवं क्षमा के बीच एक नकारात्मक सह संबंध पाया। कई अध्ययन भी दूसरों की क्षमा और कर्तव्यनिष्ठा (Conscientiousness) के बीच संबंध खोजने में विफल रहे हैं (एश्टन 1998, रॉस एवं साथी, 2004; वॉकर और गोर्सुच, 2002), हालांकि, वाकर और गोर्सुच (2002) ने कर्तव्यनिष्ठा के

कर्तव्यपरायणता और क्षमा (दूसरों को क्षमा करने) और देवताओं से क्षमा प्राप्त करने के बीच एक सकारात्मक संबंध पाया।

व्यक्ति का व्यक्तित्व, संगठनों के नागरिक व्यवहार से भी जुड़ा हुआ पाया गया है। 1990 के दशक की शुरुआत में व्यक्तित्व क्षेत्र में बिग-फाइव के उद्भव ने OCB के क्षेत्र में अनुसंधान के लिए एक नया अवसर लाया। ऑर्गन (1990) ने प्रस्तावित किया कि व्यक्ति के गुण जानकर OCB को ज्यादा बेहतर तरीके से शोध कर समझा जा सकता है और एक संस्था में मैनेजर उसे ज्यादा बेहतर तरीके से प्रयोग में ला सकते हैं। व्यक्ति के इन गुणों (व्यक्तित्व) तथा OCB के संबंधों को लेकर अनेक शोध किए गए हैं। संस्थानों में सामाजिक व्यवहार करना (OCB का क्षेत्र) से संबंधित अध्ययन बैरिक, पार्क्स और माउंट, (2005) ने किया और पाया कि जो लोग मनोविक्षुब्धता पर कम अंक प्राप्त करते हैं वह संवेगात्मक रूप से ज्यादा स्थिर होते हैं, बेहतर समायोजन करते हैं, तथा तनावपूर्ण माहौल में भी शांत रहते हैं। इनका यह गुण संगठन में सामाजिक व्यवहार को बढ़ावा देता है। जो लोग भावात्मक रूप से स्थिर होते हैं वह ज्यादा संवेग प्रकट नहीं करते; ज्यादातर समय वह दुश्चिंता, अवसाद, क्रोध, चिंता, और असुरक्षा जैसे भावनाओं को कम प्रकट करते हैं जिससे यह संभव है कि वे संगठनों में OCB का ज्यादा प्रदर्शन कर पाएंगे।

उपरोक्त कुछ शोध बहुत उत्साहित करने वाले नहीं हैं, कुछ अन्य शोधों में इन चरों में कोई स्पष्ट सम्बन्ध देखने को नहीं मिलता जिससे कोई निष्कर्ष निकाला जा सके। उदाहरण के लिए यहाँ कुछ एक शोधकार्य उद्धरित किये जा रहे हैं: ऑर्गन (1994) ने सुझाव दिया कि व्यक्तित्व और OCB के बीच कोई स्पष्ट संबंध अभी तक स्थापित नहीं हो पाया है, इन्होंने रेयान के साथ में एक मेटा-एनालिसिस (1995) कर इन दोनों चरों के बीच कमजोर संबंधों को उजागर किया है (ऑर्गन एवं रेयान, 1995)। इस अस्पष्ट संबंध के कारण ही इन दो चरों के बीच संबंधों को खोजने की प्रचुर संभावना व्याप्त है, जिसको ज्ञात करना आवश्यक है। खासतौर से भारतीय परिप्रेक्ष्य में इन चरों के बीच संबंधों को खोजने की नितांत आवश्यकता है और शोधार्थियों के पास इसका अवसर उपलब्ध है।

क्षमाशीलता और कल्याण (Forgiveness and Well- being)

वर्तमान समय में जहां तनाव एवं समस्याएं व्यक्ति के जीवन में तेजी से पैर पसार रही हैं मनोवैज्ञानिकों के अनुसार कल्याण (वेल-बीइंग) ही अब व्यक्ति के जीवन का अंतिम लक्ष्य बन चुका है (ब्रैडबर्न 1969; फोर्डायस 1988)। क्षमाशीलता व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक कल्याण से जुड़ी हुई है; यदि परस्पर निर्भरता सिद्धांत (केली एंड थिबॉट, 1978; रुसबुल एंड वैनलैंग, 1996) का अनुसरण किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि यदि व्यक्ति अपराधी के प्रति मजबूत प्रतिबद्धता प्रदर्शित करें, तो क्षमाशीलता से उसका मनोवैज्ञानिक कल्याण (साइकोलॉजिकल वेल-बीइंग) का स्तर बेहतर हो जाता है, जबकि कमजोर प्रतिबद्धता प्रदर्शित करने पर कल्याण का स्तर क्षीण हो जाता है अथवा सर्वथा लुप्त हो जाता है।

शोध कार्यों के परिणाम यह बताते हैं कि क्षमाशीलता का विकास ईमानदारी, विश्वसनीयता व अखंडता जैसे मजबूत चरित्र से होता है; यदि व्यक्ति एक दूसरे की देखभाल करने वाले सकारात्मक वातावरण में रहता है तो इससे उसकी क्षमाशीलता विकसित होती है। टीस और यिप (2009) ने पाया कि क्षमाशीलता व्यक्तियों के आपसी सामंजस्य तथा मनोवैज्ञानिक कल्याण से सकारात्मक रूप से जुड़ी होती है। लॉलर-रो और पिफरि (2006) ने वयस्कों पर अध्ययन कर पाया कि जिन व्यक्तियों में दूसरों को क्षमा करने की प्रवृत्ति अधिक होती है उनका व्यक्तिपरक कल्याण (सब्जेक्टिव वेल-बीइंग) एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर भी उच्च होता है। इस परीक्षण में मनोवैज्ञानिक कल्याण छः आयामों से मापा गया: वातावरण पर नियंत्रण, स्व-स्वीकार्यता, जीवन का उद्देश्य, स्वतंत्रता, व्यक्तिगत वृद्धि तथा दूसरों के साथ अच्छे संबंध। यह पाया गया कि इन सभी छः आयामों में उच्च क्षमाशीलता वाले व्यक्ति उच्च अंक प्राप्त करते हैं अर्थात यह सभी छः आयामों के साथ धनात्मक रूप से जुड़ा हैं। जिन मनोचिकित्सा पद्धतियों में क्षमाशीलता को बढ़ावा देना शामिल किया गया उन मनोरोगियों के मनोवैज्ञानिक कल्याण का स्तर भी उच्च पाया गया (अल मबूक, एनराइट, एवं कार्डिस, 1995; कोयले एवं एनराइट, 1997; फ्रीडमैन एवं एनराइट, 1996; हेबल एवं एनराइट, 1993)।

व्यक्तिपरक कल्याण (Subjective Well- being) में व्यक्ति अपने जीवन का मूल्यांकन करता है और उस बारे में एक निष्कर्ष निकालता है और इसमें जीवन में संतुष्टि, वैवाहिक जीवन में संतुष्टि, अवसाद व चिंता से मुक्ति, सकारात्मक मनोदशा जैसी चीज़ों को शामिल करता है। "द मोरल डेवलपमेंट ऑफ़ फॉरगिविंग" पर एनराइट और द ह्यूमन डेवलपमेंट स्टडी ग्रुप (1991) द्वारा एक अध्ययन किया गया, जिसमें कहा गया कि यदि व्यक्ति में क्षमाशीलता को बढ़ावा दिया जाए तो माता-पिता के प्रेम से वंचना, किसी नज़दीकी द्वारा दुराचार आदि जैसे गंभीर अपराधों से पीड़ित व्यक्ति के भी मनोवैज्ञानिक कल्याण के स्तर में वृद्धि हो जाती है। एक अध्ययन में कर्रेमंस, वान लॉन्ग, ओवरकर्क और क्लुवर (2003) तथा मैकुलॉफ (2000) ने बताया कि क्षमाशीलता व्यक्ति के क्रोध के स्तर को कम कर देती है जिससे नकारात्मक भावनाओं की बारम्बारता में गिरावट आ जाती है। केली और थिबॉट (1978) ने क्षमाशीलता व कल्याण में सकारात्मक संबंध पाया है। टूसेंट, विलियम्स, मस्क और एवेरसन (2001) ने पाया कि स्वयं को एवं दूसरों को क्षमा कर देने पर पीड़ा में कमी होती है और कल्याण में वृद्धि होती है। टूसेंट और वेब्स (2005) ने पाया कि क्षमाशीलता का मानसिक स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष व परोक्ष संबंध होता है; मानसिक स्वास्थ्य कल्याण को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक है। बेरी और वर्थिंगटन (2001) ने भी मानसिक स्वास्थ्य तथा क्षमाशीलता के मध्य संबंधों को पुख्ता किया है।

क्षमाशीलता सकारात्मक मनोविज्ञान का उभरता हुआ संप्रत्यय है जिस पर आधुनिक मनोवैज्ञानिक शोध कार्य कर रहे हैं। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व से संबंधित हो सकती है। इसकी उपयोगिता सामान्य जीवन के साथ-साथ औद्योगिक क्षेत्रों में भी है। क्षमाशीलता को बढ़ाकर व्यक्ति के अंदर नकारात्मक घटनाओं व तनाव से उत्पन्न नकारात्मकता को नष्ट किया जा सकता है। यदि कार्यस्थल पर व्यक्ति में संगठनात्मक नागरिकता व्यवहार की अधिकता हो, तो यह क्षमाशीलता और व्यक्तिपरक एवं मनोवैज्ञानिक कल्याण के संबंधों में तीव्रता ला सकती है और परिणामस्वरूप व्यक्ति के नकारात्मक भावनाओं में व्यापक कमी आ सकती है। नकारात्मकता से उबरे व्यक्ति में आपसी सहयोग तथा सहकर्मियों के साथ रिश्तों में सुधार होगा, उनका

आपसी सहयोग बढ़ेगा और वह एक इकाई के रूप में कार्य कर सकेंगे। फलतः व्यक्ति के तथा संस्था के उत्पादकता में वृद्धि होगी जो किसी भी उद्योग या संस्था में कार्य कर रहे व्यक्ति का मूल उद्देश्य होता है। इन चरों का व्यापक अध्ययन अभी बाकी है तथा भारतीय परिवेश में इससे संबंधित शोध कार्य अत्यंत सीमित हैं। इस संदर्भ में शोधकार्य कर इन चरों के बीच के संबंधों की पड़ताल कर परिणामों को संस्थाओं पर लागू करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

Al-Mabuk, R., Enright, R. D., & Cardis, P (1995). Forgiveness education with parentally love-deprived late adolescents. *Journal of Moral Education, 24,* 427-444.

Aquino, K., Grover, S. L., Goldman, B., & Folger, R. (2003). When push doesn't come to shove: Interpersonal forgiveness in workplace relationships. *Journal of Management Inquiry, 12(3), 209-216. https://doi.org/10.1177/1056492603256337*

Ashton, M. C. (1998). Personality and job performance: the importance of narrow traits. *Jounrnal of Organizational Behavior, 19*(3), 289-303.

Barrick, M. R., Parks, L., & Mount, M. K. (2005). Self-Monitoring as a moderator of the relationship between personality traits and performance. *Personnel Psychology, 58,* 745-767.

Berry, J. W., & Worthington, E. L. (2001). Forgivingness, relationship quality, stress while imagining relationship

events, and physical and mental health. *Journal of Counseling Psychology, 48,* 447–455.

Berry, J. W., Worthington, E. L., Parrott, L., O'Connor, L. E., & Wade, N. G. (2001). Dispositional forgivingness: Development and construct validity of the Transgression Narrative Test of Forgivingness (TNTF). *Journal of Personality and Social Psychology Bulletin, 27,* 1277–1290.

Bradburn, N. M. (1969). *The structure of psychological well-being.* Chicago: Aldine Publishing Company. Retrieve from https://www.norc.org/PDFs/publications/BradburnN_Struc_Psych_Well_Being.pdf

Brown, R. P. (2003). Measuring individual differences in the tendency to forgive: Construct validity and links with depression. *Personality and Social Psychology Bulletin 29*(6), 759-771.

Brown, R. P., & Phillips, A. (2005). Letting bygones be bygones: Further evidence for the validity of the tendency to forgive scale. *Journal of Personality and Individual Differences, 38,* 627–638.

Cameron, K. S., Dutton, J., & Quinn, R. (2003). *Positive Organizational Scholarship.* San Francisco: Berrett-Koehler Publishers.

Costa, P. T., & McCrae, R. R. (1989). NEO-PI *Professional*

Manual. Odessa, FL:Psychological Assessment Resources.

Costa, P. T., & McCrae, R. R. (1992). *NEO PI-R Professional Manual*. Odessa, FL: Psychological Assessment Resources.

Coyle, C. T., & Enright, R. D. (1997). Forgiveness intervention with postabortion men. *Journal of Consulting and Clinical Psychology, 65,* 1042–1046.

Davis, D. E., Hook, J. N., & Worthington, E. L., Jr. (2008). Relational spirituality and forgiveness: The roles of attachment to God, religious coping, and viewing the transgression as a desecration. *Journal of Psychology and Christianity, 27,* 293-301.

Enright, R. D., & the Human Development Study Group. (1991). The moral development of forgiveness. In W. Kurtines & J. Gewirtz (Eds.), *Moral behavior and development* (Vol. 1, pp. 123–152). Hillsdale, NJ: Erlbaum.

Exline, J. J., Yali, A. M., & Lobel, M. (1999). When God disappoints: Difficulty forgiving God and its role in negative emotion. *Journal of Health Psychology, 4,* 365–379.

Fordyce, M. W. (1988). A review of research on the happiness measures: A sixty second index of happiness and mental health. *Social Indicators Research, 20,* 355-381. doi:10.1007/BF00302333.

Foundation for Inner Peace. (1975). A course in miracles. CA: Glen Ellen.

Freedman, S. R., & Enright, R. D. (1996). Forgiveness as an intervention goal with incest survivors. *Journal of Consulting and Clinical Psychology, 64,* 983–992.

Friedman, P. H. (1989). *Creating well-being: The healing path to love, peace, self-esteem and happiness.* Saratoga, CA: R and E Publishers.

Friedman, P. H. (2000). *Integrative healing manual*. Plymouth Meeting, PA: Foundation for Well-Being. Retrieve from http://philipfriedman.com/60.html

Funder, D. C. (2001). Personality. *Annual Review of Psychology, 52,* 197-221.

Hebl, J. H., & Enright, R. D. (1993). Forgiveness as a psychotherapeutic goal with elderly females. *Psychotherapy, 30,* 658–667.

Hope, D. (1987). The healing paradox of forgiveness. *Psychotherapy: Theory, Research, Practice, Training, 24*(2), 240–244.

Jampolsky, G. G. (1999). *Forgiveness: The greatest healer.* Atria Books: Beyond Words.

Kaplan, B. H. (1992). Social health and the forgiving heart: The type B story. *Journal of Behavioral Medicine, 15,* 3–14.

Karremans, J. C., Van Lange, P. A. M., Ouwerkerk, J. W., & Kluwer, E. S. (2003). When forgiving enhances psychological well-being: The role of interpersonal commitment. *Journal of Personality and Social Psychology 84*(5), 1011-1026.

Kelley, H. H., & Thibaut, J. W. (1978). *Interpersonal relations: A theory of interdependence*. New York: Wiley.

Lawler-Row, K. A., & Piferi, R. L. (2006). The forgiving personality: Describing a life well lived. *Personality and Individual Differences, 41*(6), 1009–1020.

MacKenzie, B. S., Podsakoff P. M., & Fetter, R. (1991). Organizational citizenship behaviour and objective productivity as determents of managerial evaluation of salespersons' performance. *Organizational Behavior and Human Decision Processes, 50,* 123-150.

McCullough, M. E. (2000). Forgiveness as human strength: Theory, measurement, and links to well-being. *Journal of Social and Clinical Psychology,19*(1), 43-55.

McCullough, M. E. (2001). Forgiveness: Who does it and how do they do it? *Current Directions in Psychological Sciences, 10*(6), 194-197.

McCullough, M. E., Bellah, C. G., Kilpatrick, S. D., & Johnson, J. L. (2001). Vengefulness: Relationships with forgiveness, rumination, well-being, and the Big Five. *Personality and Social Psychology Bulletin, 27*(5), 601–610.

McCullough, M. E., Pargament, K. I., & Thoresen, C. E. (Eds.), (2000). *Forgiveness: Theory, research and practice.* New York: Guilford.

Moorman, R. H. (1991). Relationship between organizational justice and organizational citizenship behaviors: Do fairness perceptions influence employee citizenship? *Journal of Applied Psychology, 76*(6), 845–855.

Orcutt, H. K. (2006). The prospective relationship of interpersonal forgiveness and psychological distress symptoms among college women. *Journal of Counseling Psychology, 53*(3), 350-361.

Organ, D. W. (1988). *Organizational citizenship behavior: The good soldier syndrome.* Lexington, MA: Lexington Books.

Organ, D. W. (1990). The motivational bases of organizational citizenship behaviour. In L. L. Cummings & B. M. Staw (Eds.) *Research in organizational behavior* (Vol. 12, pp. 43-72). Greenwich, CT: JAI Press.

Organ, D. W. (1994). Personality and organizational citizenship behavior. *Journal of Management*, *20,* 465-478.

Organ, D. W. (1997). Organizational citizenship behavior: It's construct clean-up time. *Human Performance, 10,* 85-97.

Organ, D. W., & Ryan, K. (1995). A meta-analytic review of attitudinal and dispositional predictors of organizational

citizenship behavior. *Personnel Psychology, 48*(4), 775-802. https://doi.org/10.1111/j.1744-6570.1995.tb01781.x

Podsakoff, P. M., & MacKenzie, S. B., (1997). Impact of organizational citizenship behaviour on performance: A review and suggestions for further research. *Human Performance 10*, 133-151.

Robertson, I., & Callinan, M. (1998). Personality and work behaviour. *European Journal of Work and Organizational Psychology, 7*(3), 321-340.https://doi.org/10.1080/135943298398736

Ross, S. R., Kendall, A. C., Matters, K. G., Wrobel, T. A., & Rye, M. S. (2004). A personological examination of selfand other-forgiveness in the five-factor model. *Journal of Personality Assessment, 82,* 207–214.

Rusbult, C. E., & Van Lange, P. A. M. (1996). Interdependence processes. In E. T. Higgins & A. W. Kruglanski (Eds.), *Social psychology: Handbook of basic principles* (p. 564-596). The Guilford Press.

Rye, M. S., & Pargament, K. I. (2002). Forgiveness and romantic relationships in college: Can it heal the wounded heart? *Journal of Clinical Psychology 58,* 419-441.

Schnake, M. (1991). Organizational citizenship: A review, proposed model, and research agenda. *Human Relations, 44,* 735-759.

Seligman, M. E. P., & Csikszentmihalyi, M. (2000). Positive psychology: An introduction. *American Psychologist, 55*(1)*,* 5-14.

Srimad Bhagwat Geeta (2016). Retrieve from https://www.hindisahityadarpan.in/2016/11/ bhagwat-geeta-in-hindi.html

Thompson, L. Y., Snyder, C. R., Hoffman, L., Michael, S. T., Rasmussen, H. N., Billings, L. S., et al. (2005). Dispositional forgiveness of self, others, and situations. *Journal of Personality, 73,* 313–359.

Toussaint, L. L., Williams, D. R., Musick, M. A., & Everson, S. A. (2001). Forgiveness and health: Age differences in a U.S. probability sample. *Journal of Adult Development, 8,* 249-257.

Toussaint, L., & Webb, J. R. (2005). Theoretical and empirical connections between forgiveness, mental health, and well-being. In E. L. Worthington (Ed.), *Handbook of Forgiveness*. New York Brunner-Routledge.

Tse, W. S., & Yip, T. H. J. (2009). Relationship among dispositional forgiveness of others, interpersonal adjustment and psychological well-being: Implication for interpersonal theory of depression. *Personality and Individual Differences, 46,* 365-368.

Walker, D. F., & Gorsuch, R. L. (2002). Forgiveness within the big five personality model. *Personality and Individual*

Differences, 32, 1127–1138.

Waltz, S. M., & Niehoff, B. P. (2017). Effect on organizational effectiveness in limited-menu restaurants. *Academy of Management Proceedings,* Retrieved from https://journals.aom.org/doi/pdf/10.5465/ambpp.1996.4980770

Williams, L. J., & Anderson, S. E. (1991). Job satisfaction and organizational commitment as predictors of organizational citizenship and in-role behaviors. *Journal of Management, 17,* 601-617.

Worthington, E. L. (1998). The pyramid model of forgiveness: Some interdisciplinary speculations about unforgiveness and the promotion of forgiveness. In E. L. Worthington (Ed.), *Dimensions of forgiveness: Psychological research and theological perspectives* (pp. 107–137). Philadelphia, PA: Templeton Press.

Worthington, E. L., Jr. (1998). An empathy-humility-commitment model of forgiveness applied within family dyads. *Journal of Family Therapy, 20,* 59-76.

थारू जनजाति में आर्थिक विकास स्तर का निर्धारण: जनपद बलरामपुर के परिप्रेक्ष्य में

श्याम दीप मिश्रा एवं
डॉ. ऋचा चतुर्वेदी

सारांश

भारत एवं नेपाल की सीमा से लगे शिवालिक पर्वत श्रेणी के समानान्तर मुख्यतः उत्तर प्रदेश व उत्तराखंड राज्य में एक जनजाति का निवास क्षेत्र है जिसे थारू जनजाति कहते है तथा इनके जीवन, कार्यक्षेत्र एवं निवास क्षेत्र पर प्राकृतिक वातावरण का व्यापक प्रभाव देखा जाता है। उत्तर प्रदेश में यह जनजाति मुख्य रूप से बहराइच, बस्ती, गोरखपुर, बलरामपुर आदि जनपदों में निवासित हैं। जनपद बलरामपुर में इस जनजाति की सर्वाधिक संख्या गैसड़ी (22.51 प्रतिशत) एवं पचपेड़वा (70.68 प्रतिशत) विकासखण्ड में पाई जाती है। गैसड़ी एवं पचपेड़वा विकासखण्डों के अतिरिक्त थारू जनजाति का निवास क्षेत्र आरक्षित वन भी हैं, जहाँ 6.06 प्रतिशत थारू जनसंख्या पाई जाती है। विकास स्तर निर्धारण द्वारा स्पष्ट होता है कि क्षेत्र विशेष में विकास किस सीमा तक हुआ है एवं कहाँ तक विकास आवश्यक है। थारू जनजाति के आर्थिक विकास स्तर का निर्धारण करने के लिए आर्थिक पक्ष से संबंधित सूचकांकों का चयन किया गया। हरखड़ी न्यायपंचायत आर्थिक रूप से सभी थारू बाहुल्य न्यायपंचायतों में सम्पन्न है जबकि सबसे अधिक पिछड़ा क्षेत्र वन ग्राम है। वन ग्रामों का अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी सीमा पर स्थित होना, जंगलों से घिरा होना, पहाडी एवं दलदली मार्ग की उपस्थिति एवं नेपाल राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का अवरोध होना इनके आर्थिक रूप से पिछड़े होने का अभिशापित कारण है।

मुख्य शब्द: थारू जनजाति, विकास स्तर, आर्थिक सूचकांक

परिचय

अपनी प्राचीन सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण सभ्य समाज से पृथक सामाजिक एवं संगठनात्मक ढांचे वाले जन समूहों को जनजाति कहा जाता है । कोई जनजाति परिवारों तथा पारिवारिक वर्गों का एक ऐसा समूह है जिसका एक सामान्य नाम है, जिसके सदस्य एक निश्चित भू-भाग पर निवास करते हैं, एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं तथा विवाह, व्यवसाय के विषय में निषेधों का पालन करते हैं (मजूमदार,1937) । जनजाति एक ही सांस्कृतिक श्रृंखला का मानव समूह है जो

साधारणतया एक ही भूखंड पर रहता है, एक ही भाषा भाषी है तथा एक ही प्रकार की परंपराओं एवं संस्थाओं का पालन करता है और एक ही सरकार के प्रति उत्तरदायी होता है (रेमंड फर्थ,1938)। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366 में यह परिभाषित किया गया है कि उन समुदायों को अनुसूचित जाति या जनजाति समुदाय कहा जायेगा जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 342 के अन्तर्गत जाति या अनुसूचित जनजाति घोषित किया गया है। वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश में मुख्य रूप से बुक्सा और थारू जनजाति ही पायी जाती है।

किसी समुदाय को व्यवस्थित एवं संगठित स्वरूप प्रदान करने के लिए उस समुदाय की आर्थिक संरचना का अध्ययन आवश्यक होता है जो उसके विकास का महत्वपूर्ण आधार होता है। भारतीय जनजातियों की आर्थिक संरचना विश्व के अन्य देशों की जनजातियों की आर्थिक संरचना से सर्वदा भिन्न है। थारू जनजाति की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से जीवन निर्वाहक है। उनकी अर्थव्यवस्था, आधारभूत जीविका निर्वाह की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की दृष्टि से चलायी जाती है इसलिए वह उत्पादन-उपभोग अर्थशास्त्र की विस्तृत श्रेणी में आती है (हसनैन,1992)। इस जनजाति के आर्थिक क्रियाकलाप के अंतर्गत मुख्य रूप से शिकार, मछली पकड़ना, जंगल के फल-फूल, कंद मूल एकत्रित करने, पशुपालन और पारम्परिक ढंग से कृषि कार्य को सम्मिलित करते हैं। इनकी अर्थव्यवस्था की दूसरी धुरी पशुपालन है जिसके अंतर्गत यह जनजाति जंगली जानवर जैसे लोमडी़, हिरण, गीदड़, आदि का शिकार एवं उनका व्यापार करके अपना जीवकोपार्जन करती हैं। वास्तव में थारू जनजाति में अधिकांश लोग आज भी परंपरागत आर्थिक जीवन को अपनाए हुये हैं (क्रुक,1975)। उपलब्ध संसाधनों एवं साधनों पर आश्रित इस जनजाति की अत्यंत सीमित आवश्यकतायें एवं प्रकृति पर निर्भरता इस जनजाति के पिछड़े होने का मुख्य कारण है।

स्थिति एवं विस्तार

शिवालिक श्रेणी की पृष्ठभूमि में उत्तर प्रदेश का एक पिछड़ा एवं अविकसित जनपद बलरामपुर नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से संलग्न है, जो 28^{0}03'20" से 29^{0}54' उत्तरी अक्षांश तथा 82^{0}02'30" से 82^{0}49" पूर्वी देशान्तर के बीच अवस्थित है। इसका विस्तार उत्तर-दक्षिण में 81 किमी0 तथा पूरब-पश्चिम में 72 किमी0 है। यह

जनपद पूरब में सिद्धार्थनगर, पश्चिम में श्रावस्ती एवं दक्षिण में गोण्डा जनपद की सीमा से घिरा है, उत्तर में इसका विस्तार नेपाल देश की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक है। इसका कुल क्षेत्रफल 3,419.50 वर्ग किमी0 है। इस जनपद में तीन तहसीलें, बलरामपुर सदर, तुलसीपुर एवं उतरौला तथा नौ विकासखण्ड हरैया सतघरवा, बलरामपुर, तुलसीपुर, गैंसड़ी, पचपेड़वा, श्रीदत्तगंज, उतरौला, गैंड़ासबुजुर्ग व रेहरा बाजार हैं (चित्र संख्या 1) । गैसड़ी में 22.51 प्रतिशत एवं पचपेड़वा में 70.68 प्रतिशत थारू जनजाति की जनसंख्या निवास करती है । इन दोनों विकासखण्डों से संलग्न आरक्षित वन क्षेत्र में नीरेहवा, अकल हरवा, कंचनपुर, छोटा भुकुरूवा एवं बड़ा भुकुरूवा वनग्रामों में थारू जनजाति की 6.06 प्रतिशत जनसंख्या रहती है । थारू निवासित यह वन ग्राम सेमरा आरक्षित वन क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि जनपद की 99.25 प्रतिशत थारू जनसंख्या गैसड़ी एवं पचपेड़वा विकासखण्ड के छः न्याय पंचायत विशुनपुर कला, धबौलिया, जरवा बनगाई, पोखर भिटवा, हरखड़ी, विशुनपुर विश्राम) एवं उपरोक्त वन ग्रामों में निवास करती है । थारू जनजाति की बहुतायत जनसंख्या तुलसीपुर तहसील के गैसड़ी एवं पचपेड़वा विकासखण्ड में निवास करती है । गैसड़ी विकासखण्ड में जनपद की थारू जनजाति का 22.51 प्रतिशत एवं पचपेड़वा विकासखण्ड में 70.68 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। थारू जनजाति के पाँच नीरेहवा, अकल हरवा, कंचनपुर, छोटा भुकुरूवा एवं बड़ा भुकुरूवा जनजाति बहुल हैं। इन पाँच वनग्रामों में जनपद की थारू जनजाति की जनसंख्या का 6.06 प्रतिशत है। यह पाँच गाँव वीरपुर सेमरा आरक्षित वन क्षेत्र में हैं। इस प्रकार पूरे जनपद की थारू जनसंख्या का 99.25 प्रतिशत भाग उपरोक्त दोनों विकासखण्डों के छः न्याय पंचायत (जरवा बनगाई, विशुनपुर कला, धबौलिया, पोखर भिटवा, हरखड़ी, विशुनपुर विश्राम) एवं संलग्न आरक्षित वन क्षेत्र के वन ग्रामों में निवास करती है। अध्ययन क्षेत्र में कुल थारू परिवारों की संख्या 3285 है जिनमें से 403 थारू परिवारों की संख्या का चयन अध्ययन के लिए किया गया है (सारणी 1)।

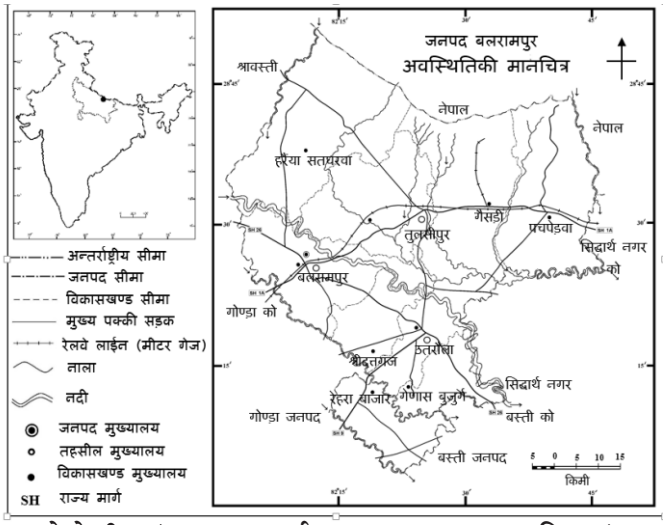

स्रोत- टोपोशीट संख्या 63 आई (1:250,000) चित्र संख्या 1

उद्देश्य

शोध पत्र का उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र में पाई जाने वाली थारू जनजाति की आर्थिक संरचना एवं उनके विकास स्तर का निर्धारण करना है।

आँकड़ा स्रोत एवं विधि तन्त्र

प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों एवं सूचनाओं पर आधारित है। आधार-मानचित्र के निर्माण के लिए टोपोशीट संख्या 63 आई (1:250,000) का प्रयोग किया गया एवं जनसंख्या (2001) संबंधी आंकड़े जनगणना विभाग से प्राप्त किये गये हैं। थारू जनजाति के आर्थिक स्तर को निर्धारित के लिए प्रश्नावली के माध्यम से क्षेत्र सर्वेक्षण की सहायता ली गयी है।

सर्वेक्षण की रूप रेखा

थारू जनजाति का संकेन्द्रण मुख्य रूप से पचपेड़वा एवं गैसड़ी विकासखण्डों में है और इनके गाँवों की संख्या 54 है। प्रस्तुत अध्ययन में 54 गांवों में से जिन गांवों की जनसंख्या और परिवारों की संख्या अधिक थी वहाँ पर उसका 10 प्रतिशत नमूना सर्वेक्षण किया गया परन्तु जिन गांवों में परिवारों की संख्या कम थी और 10 प्रतिशत नमूना सर्वेक्षण केवल एक या दो प्रश्नावली अनुसूची से पूरा हो जाता था वहाँ पर संख्या में पाँच प्रश्नावली अनुसूची का प्रयोग प्राथमिक आंकड़ों के एकत्रीकरण के लिए किया

गया। इन परिवारों का चयन निम्न तथ्यों के आधार पर किया गया, आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं विपन्न परिवार, संख्या की दृष्टि से छोटे एवं बड़े परिवार, एवं गाँव का मध्य एवं सीमान्त घर अर्थात् किसी गाँव के प्रारम्भ का घर, मध्य का एवं सीमान्त घरों के परिवारों के आधार पर। उपर्युक्त तथ्यों की जानकारी गाँव के मुखिया एवं वृद्ध व्यक्ति से पूछताछ के आधार पर प्राप्त की गयी।

सारणी 1 - बलरामपुर जनपद में न्यायपंचायतवार कुल थारू परिवार एवं प्रतिचयनित परिवारों की संख्या

क्रम संख्या	न्यायपंचायत	कुल परिवार की संख्या	प्रतिचयनित परिवारों की संख्या
1.	जरवा बनगाई	244	53
2.	विशुनपुर कला	429	50
3.	धबौलिया	83	18
4.	पोखर भिटवा	374	45
5.	हरखड़ी	16	05
6.	विशुनपुर विश्राम	2007	207
7.	वन ग्राम	132	25
8.	योग	3285	403

स्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर

अतः इन तथ्यों के आधार पर चयनित गांवों के थारू परिवारों का प्रश्नावली के माध्यम से साक्षात्कार लिया गया है तथा आंकड़ों को प्राप्त करके उनको तालिकाबद्ध किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण के लिए एस० पी० एस० एस० प्रोग्राम का प्रयोग

किया गया तदुपरान्त विश्लेषित आंकड़ों को सारणीबद्ध कर उनका मानचित्रण एवं आरेखण किया गया है। आर्थिक पक्ष से संबंधित सूचकांको का चयन क्षेत्र में आर्थिक विकास स्तर का निर्धारण करने के लिए किया गया एवं इनको आधार मान कर रैंकिंग विधि से वरीयता के माध्यम से संयुक्त सूचकांक ज्ञात किया गया जो यह स्पष्ट करता है कि आर्थिक दृष्टि से विभिन्न न्यायपंचायतों मे से कौन सा न्यायपंचायत प्रथम तथा अन्तिम स्थान पर है।

आर्थिक विकास स्तर का निर्धारण

किसी क्षेत्र के विकास स्तर का निर्धारण आवश्यक होता है क्योंकि उस विकास स्तर से हम उस सम्पूर्ण क्षेत्र के विकास का पदानुक्रम निर्धारित कर सकते हैं। प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले क्षेत्र की विशेषता को आत्मसात करते हुए उस क्षेत्र के संसाधनों का विश्लेषण कर सकते है तथा विकास स्तर को आगे पहुँचाने वाले कारकों को चिन्हित कर उनका उपयोग अन्य पिछड़े भागों पर क्रियान्वित करते हुए पिछड़े स्तर के क्षेत्रों को भी उच्च स्तर तक लाने का प्रयास कर सकते हैं। अविकसित भू-भाग का नियोजन किया जा सकता है, सुविधाओं के कमी वाले क्षेत्र को चिन्हित किया जा सकता है तथा इन क्षेत्रों में सुविधाओं को विकसित एवं क्रियान्वित किया जा सकता है जिससे उस भू-भाग में रहने वाले लोगों का सम्पूर्ण विकास किया जा सके। किसी भी क्षेत्र में आर्थिक प्रतिरूप का अध्ययन उसके विभिन्न आर्थिक, जनांकिकीय और सांस्कृतिक विशेषताओं के स्पष्टीकरण में सहायक होता है जिससे सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु नियोजन में मूलभूत सहायता मिलती है (हीरालाल,1997)। आर्थिक रूप से अपेक्षाकृत विकसित न्यायपंचायतों का निर्धारण करने के लिए आर्थिक संसूचकों का उपयोग किया गया है जो निम्नवत है-

1) कृषि भूमिधारी का प्रतिशत।
2) 3 एकड़ से अधिक कृषि भूमि युक्त परिवार का कुल परिवारों में प्रतिशत।
3) विक्रय हेतु कृषि फसल का प्रतिशत।
4) ट्रक्टर-ट्राली का कृषि में उपयोग करने वाले परिवारों में उत्तरदाताओं का प्रतिशत।
5) सिंचित भूमि का प्रतिशत।
6) सिंचाई के साधन में नलकूप का प्रयोग करने वाले परिवारों का प्रतिशत।
7) वर्ष में दो से अधिक फसल उगाने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत।

8) फसल उपज कम न पाने वाले परिवारों का प्रतिशत।
9) पशु संसाधन की उपलब्धता वाले परिवारों का प्रतिशत।
10) दूध-माँस विक्रय करने वाले परिवारों का प्रतिशत।
11) अच्छी आमदनी हेतु कृषि छोड़कर अन्य कार्यों में जाने वाले परिवारों का प्रतिशत।
12) बैंक से ऋण लेने वाले परिवारों का प्रतिशत।
13) आय स्रोत के लिए परिवार की क्रियाशील महिलाओं का प्रतिशत।
14) 1200 रू0 से अधिक प्रतिमाह प्रति व्यक्ति आय वाले परिवारों का प्रतिशत।

रैंकिंग विधि द्वारा यह स्पष्ट है कि सभी थारू बाहुल्य न्यायपंचायतो में हरखड़ी न्यापंचायत आर्थिक रूप से सम्पन्न है जिसका संयुक्त सूचकांक सबसे कम होने के कारण उसे प्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। जिसका मुख्य कारण इस न्यायपंचायत में थारू ग्राम का नगरीय क्षेत्र के समीप होना, परिवार का बड़ा आकार जिसमें आर्थिक सम्पदा का कम बटवाँरा तथा परिवार में अधिक जनशक्ति को आय का बड़ा श्रोत मानना जो सामाजिक रूप से उसे मजबूती प्रदान करता है। इस न्यायपंचायत के थारू अन्य न्यायपंचायतों की अपेक्षा व्यावसायिक फसलों का उत्पादन करते हैं एवं खेती के लिए सिंचाई के साधन के रूप में नलकूप का सर्वाधिक (20.00 प्रतिशत) प्रयोग करते है। वर्ष में इस न्यायपंचायत के थारू परिवार रबी, खरीफ एवं जायद की फसलों का उत्पादन करने में सर्वोच्च स्थान रखते है। इतना ही नहीं पशु संसाधन की उपलब्धता में, महिलाओं के कार्यप्रणाली में सहभागिता जिससे पारिवार को अधिक आय प्राप्त हो सके मद में भी उच्च स्थान रखते है। इस न्यायपंचायत में कृषि अथवा अपने निजी कार्य हेतु ऋण प्राप्ति के लिए सर्वाधिक थारू परिवार बैंक पर आधारित रहते है परन्तु आर्थिक रूप से सम्पन्न होने के बावजूद यदि प्रति व्यक्ति आय की बात करें तो संयुक्त श्रेणी सूचकांक स्तर पर सबसे निम्न स्तर पर आय वन ग्राम के बराबर है क्योंकि पारिवारिक आय उच्च होने के बावजूद परिवार का बड़ा आकार इस न्यायपंचायत के थारू परिवारों में प्रति व्यक्ति निम्न आय प्राप्त कराता है (सारणी 2)।

सारणी 2 - आर्थिक सूचकांक

क्रम संख्या	न्याय पंचायत	आर्थिक सूचकांक						
		(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1.	जरवा बनगाई	4	2	3	1	3	6	3
2.	विशुनपुर कला	3	5	4	2	2	5	5
3.	धबौलिया	1.5	1	2	6	1	1	2
4.	पोखर भिटवा	5	6	6	3	6	7	6
5.	हरखड़ी	1.5	3	1	7	6	2	1
6.	विशुनपुर विश्राम	6	4	5	5	4	4	7
7.	वन ग्राम	7	7	7	4	6	3	4

क्रम संख्या	आर्थिक सूचकांक	योग	श्रेणी						
	(8)	(9)	(10)	(11)	(12)	(13)	(14)		
1.	3	6	5	2	4	6	1	49.00	द्वितीय
2.	6	3	4	5	2	2	3	51.00	तृतीय
3.	4	5	6	7	6	7	6	55.50	चतुर्थ
4.	2	7	2	3	3	5	2	63.00	षष्ठम्
5.	1	1	7	4	1	1	6	42.50	प्रथम
6.	5	4	3	1	5	4	4	61.00	पंचम
7.	7	2	1	6	7	3	6	70.00	सप्तम

स्रोत- व्यक्तिगत सर्वेक्षण

जरवा बनगाई न्यायपंचायत को विकास स्तर के श्रेणी में द्वितीय वरीयता प्राप्त है जिसका मुख्य कारण पशु संसाधन की उपलब्धता, सिंचित भूमि का निम्न प्रतिशत, आर्थिक कार्यों में महिलाओं की सहभागिता का निम्न स्तर होने के बाद भी यह न्यायपंचायत आर्थिक दृष्टि से द्वितीय स्थान पर है जिसका मुख्य कारण इस न्यायपंचायत के थारू ग्रामों का नेपाल-भारत सीमा से होकर तुलसीपुर नगर होते हुए आगे तक जाने वाले मुख्य मार्गों के समीप होना है जिसमें थारू परिवारों को रोजगार के विभिन्न अवसर प्राप्त होते हैं। इस न्यायपंचायत में प्रतिव्यक्ति आय सर्वाधिक पायी जाती है क्योंकि रोजगार के लिए प्रवास चाहे जनपद में (4.90 प्रतिशत), जनपद से बाहर (5.10 प्रतिशत) हो या राज्य से बाहर (1.20 प्रतिशत) हो, इस न्यायपंचायत का प्रतिशत सबसे अधिक पायी गया है वहीं सरकारी नौकरी (4.50 प्रतिशत) गैर सरकारी नौकरी (0.80 प्रतिशत) व्यापार (1.00 प्रतिशत) एवं औद्योगिक मजदूर (6.20 प्रतिशत) द्वारा व्यक्ति अधिक आय प्राप्त करते हैं जिससे इस न्यायपंचायत में प्रति व्यक्ति आय सर्वोच्च है। अतः स्पष्ट है कि औसत रूप से सभी आर्थिक पक्षों को मिलाने पर इस न्यायपंचायत को द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है।

विशुनपुर कला न्यायपंचायत आर्थिक विकास की दृष्टि से तृतीय स्थान पर है जिसका प्रमुख कारण आधुनिक कृषि यन्त्रों (ट्रक्टर-ट्राली) की उपलब्धता, जनजातीयों द्वारा बैंक से ऋण लेने की प्रतिशतता तथा महिलाओं द्वारा आर्थिक कार्यों में सहभागिता के प्रतिशत का द्वितीय स्थान पर होना है। धबौलिया न्यायपंचायत का आर्थिक विकास के सोपान में चतुर्थ स्थान प्राप्त है । खेतों का बड़ा आकार (3 एकड़ से अधिक), आधुनिक कृषि यंत्रों एवं सिंचित भूमि के प्रतिशत में प्रथम स्थान पर होना है तथा लगभग सभी परिवार का कृषि प्रधान होना ही इस न्याय पंचायत को आर्थिक विकास की श्रेणी में चतुर्थ दिलाता है।

विशुनपुर विश्राम न्यायपंचायत को पंचम एवं पोखरभिटवा न्यायपंचायत को आर्थिक विकास की दृष्टि से षष्ठम् स्थान प्राप्त हुआ है है। विशुनपुर विश्राम में थारू विकास परियोजना का कार्यरत होना एवं पोखरभिटवा में थारू परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ प्रमुख गैर सरकारी संस्थाओं का सक्रिय होना उनके कार्य करने की प्रवृत्ति एवं प्रकृति पर ऋणात्मक प्रभाव डालता है इसके अतिरिक्त इन न्यायपंचायतों में परिवहन व्यवस्था एवं सड़क यातायात का कमजोर होना, जंगल की

समीपता के कारण जंगली पशुओं द्वारा कृषि उपज का नुकसान होना एवं रोजगार के अवसरों की सीमितता संयुक्त रूप से यहाँ के पिछड़ेपन का प्रमुख कारण है (सारणी 2)।

सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार आर्थिक विकास की दृष्टि से वन ग्राम सबसे अधिक पिछड़ा क्षेत्र है जिसका संयुक्त सूचकांक सर्वाधिक एवं विकास सूचकांक सबसे निम्न है। कृषि भूमि की निम्न उपलब्धता, छोटे आकार के खेतों की जोत का अधिक प्रतिशत, वाणिज्यिक फसलों का निम्न प्रतिशत, वर्ष में एक ही फसल बोने वाले परिवार का अधिक प्रतिशत, परम्परागत कृषि यंत्रों का उपयोग करने में उच्च प्रतिशत, कृषि सहायता एवं अनुदान प्राप्त करने एवं उनकी जानकारी रखने में निम्न तथा कृषि को छोड़ कर अन्य कार्यों में जाने का प्रतिशत कम, जंगल पर आश्रित होने का उच्च प्रतिशत, वन ग्रामों तक आवागमन एवं संचार की व्यवस्था का न होना एवं वन ग्रामों में किसी भी प्रकार की सुविधाओं का न पहुंच पाना आदि अनेक ऐसे कारण है जिसने वन ग्राम को आर्थिक विकास की दृष्टि से सबसे निम्न स्थान पर रखा है। इसके अतिरिक्त वन ग्रामों का उत्तरी सीमा पर स्थित होना , घने जंगल का समीप होना तथा पहाड़ एवं नेपाल राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का अवरोध होना वन ग्राम के आर्थिक रूप से पिछड़े होने का प्रमुख कारण है।

उपसंहार

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि थारू जनजाति आर्थिक दृष्टि से अति पिछड़ी अवस्था में है विशेष रूप से वन ग्राम में रहने वाली थारू जनजाति। इस जनजाति के परंपरागत यंत्र ,तंत्र एवं जीवन शैली ने इनके सामाजिक एवं आर्थिक विकास को बाधित किया है। यह जनजाति आज भी पूर्ण रूप से परंपरागत कृषि व्यवस्था पर निर्भर है तथा कृषि का मुख्य उद्देश्य जीविकोपार्जन है किन्तु वर्तमान समय में कुछ थारू परिवार जीविकोपार्जन के साथ विक्रय हेतु भी कृषि करने लगे है। कृषि कार्य में आधुनिक यंत्रों का उपयोग थारू धन की कमी एवं खेतों के छोटे आकार के कारण नही कर पाते हैं। कृषि कार्यों में पुरूषों के साथ-साथ महिलाएँ भी सहभागी होती हैं मुख्य रूप से उनका कार्य बीज बुआई, निराई, सिंचाई, गुड़ाई आदि होता हैं। वास्तव में थारू जनजाति के समस्त आर्थिक क्रियाकलाप वनों एवं कृषि भूमि पर ही आधारित है। आधुनिकता के प्रभाव के परिणाम स्वरूप इस जनजाति की आर्थिक क्रियाकलापों में कुछ परिवर्तन परलक्षित होने लगे हैं परन्तु कृषि योग्य भूमि की कमी एवं वनों की निरन्तर कटाई इनके प्रमुख आर्थिक समस्या के रूप में प्रकट हो रही है।

संदर्भ

क्रुक, डब्लू. (1975). द *ट्राइब्स एण्ड कास्टस आफ द नार्थ-वेस्टर्न*. कासमो पब्लिकेशन दिल्ली.

हसनैन. (1992). *जनजातीय भारत*. जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स. नई दिल्ली.

हीरालाल. (1997). *जनसंख्या भूगोल*. वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर.

मजूमदार, डी0 एन0. (1937).*फॉचून्स आफ प्रिमिटिव ट्राइब्स*, द यूनिवर्सल पब्लिकेशन, लखनऊ.

फर्थ, रेमंड. (1938). *ह्यूमन टाइप्स*. थॉमस नेशनल एंड संस लिमिटेड, लंदन.

भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के जनजातीय-प्रस्तर-शिल्पकारों की आर्थिक एवं स्वास्थ्य समस्याएँ

डॉ. कुमकुम कस्तूरी

सारांश:- भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के प्रस्तर शिल्पकारों में श्वास के माध्यम से शरीर में पहुँच रहे मार्बल कणों से श्वास रोग दमा, क्षय रोग तथा फेफड़ों की कार्य क्षमता प्रभावित होने के कारण शिल्पकार अनेक रोगों से ग्रसित हो रहे हैं जिससे प्रस्तर शिल्प ही उनकी असमय मृत्यु का कारण बन रहा है एवं उन पर आश्रित परिवार विभिन्न कठिनाइयों का सामना करने को मजबूर हैं। अतः प्रस्तर शिल्प की इस कला को दीर्घकाल तक बचाए रखने हेतु प्रस्तर शिल्पकारों की स्वास्थ्य के प्रति सजगता बनी रहे इस हेतु सुनियोजित प्रयास सभी स्तरों पर आवश्यक है अन्यथा शिल्पकारों की असमय थमती सांसे भेड़ाघाट की प्रस्तर कला के विलुप्ति का कारण सिद्ध होंगीं और विश्व भेड़ाघाट की इस मनमोहक प्रस्तर शिल्प कला को खो देगा।

मुख्य शब्द:- भेड़ाघाट पर्यटन स्थल, प्रस्तर शिल्पकारों की स्वास्थ्य समस्याएं

परिचय

"पहला सुख निरोगी काया" देश में प्रचलित यह सर्वमान्य सिद्धांत है।" व्यक्ति अपने जीवन-यापन तथा परिवार के भरण-पोषण हेतु कोई न कोई आर्थिक क्रियाकलाप में अवश्य संलग्न रहता है। जिस स्थान विशेष में जैसी परिस्थितियाँ होती हैं स्थानीय जन उनमें ढलने का गुण प्रकृति से वरदान स्वरुप प्राप्त करते हैं। अध्ययन क्षेत्र भेड़ाघाट पर्यटन स्थल में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले संगमरमर ने स्थानीय लोगों को अपने जीविकोपार्जन का साधन बनने का सुअवसर प्रदान किया तथा इससे स्थानीयजनों द्वारा लगभग 100 वर्ष पूर्व से मूर्तियों तथा अन्य मार्बल निर्मित सजावटी सामानों का निर्माण एवं विक्रय करके जीविकोपार्जन किया जा रहा है, किन्तु यही गोरा पत्थर (सॉफ्ट मार्बल) जो उनकी आजीविका का साधन है, सामग्री निर्माण के दौरान इसके कण प्रस्तर शिल्पियों की श्वास के जरिये उनके शरीर में पहुँच कर श्वास रोग तथा

अन्य संबंधित रोगों को जन्म दे रहा है जिसके परिणाम शिल्पियों की असमय मृत्यु हो रही है एवं उन पर आश्रित परिवार अनेकानेक समस्याओं से जूझ रहे हैं | प्रस्तुत प्रपत्र में इसी समस्या का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत प्रपत्र का मुख्य उद्देश्य भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के प्रस्तर शिल्पकारों की स्वास्थ्य समस्याओं को जानना और उनका समाधान प्रस्तुत करना है, जिससे इस पर्यटन स्थल में संगमरमर की शिल्पकला की निरंतरता बनी रहे और कला का अबाध विकास होता रहे तथा पीढ़ियों से चली आ रही मूर्तिनिर्माण संस्कृति बाधित न हो और मनमोहक सुन्दरता के निर्माण का लाभ विश्व को प्राप्त होता रहे।

मुख्य उद्देश्य

1) संगमरमर शिल्प निर्माणकर्ता जनजातीय प्रस्तर शिल्पकारों के स्वास्थ्य पर प्रभाव
2) शिल्पकारों हेतु उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाएँ
3) जनजाति प्रस्तर शिल्पकारों की आर्थिक स्थिति
4) जनजाति प्रस्तर शिल्पकारों के स्वास्थ्य सुधार हेतु सुझाव

अध्ययन विधि

प्रस्तुत अध्ययन "भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के प्रस्तर शिल्पकारों की स्वास्थ्य समस्याएं" प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। प्राथमिक आंकड़ों का संकलन शिल्पकारों से सीधे संपर्क स्थापित करके सुविचारित एवं सुस्पष्ट साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से न्यायदर्शों से प्रश्न पूछकर किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के 20 चयनित शिल्पकार परिवारों के लगभग 100 सदस्यों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है जो विभिन्न जाति एवं वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा शिल्पकला के विभिन्न रूपों में अग्रणी हैं। प्रस्तर शिल्पकार परिवारों का चयन यादृच्छिक नमूना प्रतिचयन विधि (Random Sampling Method) की सांख्यिकी नमूनाकरण विधि (Statistical Sampling method) द्वारा किया गया है। जबकि द्वितीयक आंकड़े सरकारी विभाग, नगर पंचायत, केंद्रीय सरकार द्वारा जारी आंकड़े एवं सांख्यिकी पत्रिका आदि से प्राप्त किए गए हैं।

अध्ययन क्षेत्र

विश्व प्रसिद्ध प्राकृतिक पर्यटन स्थल भेड़ाघाट देश के मध्य में स्थित 'हृदय राज्य' के नाम से विख्यात मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले का एक नगर है, जिसकी भौगोलिक स्थिति 23०8' उत्तर और 79०48' पूर्वी देशांतर के मध्य राज्य की जीवन रेखा कही जाने वाली नदी नर्मदा के तट पर स्थित है, जो पूर्णमासी की रात को संगमरमरी चट्टानों के बीच से कलकल करती नर्मदा को निहारता एक अलौकिक अनुभव देता है। सैकड़ों फिट ऊँचे संगमरमर के खड्डों के बीच प्रवाहित नर्मदा का भेड़ाघाट देखने लायक स्थान है जहाँ विश्व प्रसिद्ध प्राकृतिक पर्यटन स्थल धुआंधार जलप्रपात, संगमरमर शैलों की बनी कई किलोमीटर लम्बी अद्भुत गार्ज और धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण चौसठ योगिनी का मंदिर दर्शनीय है। संगमरमर तथा लाल पत्थरों पर मूर्तियों तथा अन्य साज-सामानों का निर्माण करते शिल्पकारों के परिवार तथा विभिन्न शिल्पों के परिसज्जन (finishing) कार्य में लगे बच्चे, बूढ़े तथा महिलाएं सुंदर निर्माण में पूर्ण तन्मयता से कार्यरत देखे जा सकते हैं। वास्तव में भेड़ाघाट पर्यटन क्षेत्र का वास्तविक विकास उस समय प्रारंभ हुआ जब 1978 में विशेष क्षेत्र प्राधिकरण भेड़ाघाट का गठन हुआ तथा इस पर्यटन क्षेत्र को विश्व मानचित्र में प्रतिष्ठापित करने का प्रयास आरम्भ हुआ। वर्तमान में यह क्षेत्र विश्व के पर्यटन स्थलों में अपना नाम दर्ज करवा चुका है। यहाँ के शिल्पकार देश के विभिन्न भागों जैसे दिल्ली की प्रगति मैदान प्रदर्शनी, हरियाणा का सूरजकुंड मेला, बम्बई प्रदर्शनी तथा दिल्ली की मीना बाजार प्रदर्शनी जो देश में लगने वाली सबसे बड़ी प्रदर्शनियों में से है, इनमें अपनी शिल्पकला का लोहा मनवाकर कई पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं। पर्यटन क्षेत्र भेड़ाघाट में जबलपुर नगर से अच्छी सड़क द्वारा पहुँच मार्ग उपलब्ध है तथा जबलपुर के डुमना एयरपोर्ट तथा जबलपुर रेलवे स्टेशन से आवागमन हेतु सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं।

प्रस्तर शिल्पकारों की स्वास्थ्य समस्याएं

"विभिन्न शिलाओं को तराशकर उनसे सुन्दर मूर्तियों, खिलौनों तथा अन्य साज-सामग्री का निर्माण करना प्रस्तर शिल्पियों का एक विशेष गुण है।" शिल्प निर्माण के समय भेड़ाघाट पर्यटन स्थल में शिल्प निर्माण हेतु उपयोग में लाए जा रहे गोरा पत्थर 'सॉफ्ट मार्बल' से निकलने वाले कण प्रस्तर शिल्पियों के शरीर में श्वास के माध्यम से प्रवेश कर रहे हैं जिसके कारण श्वास रोग तथा उससे संबंधित अन्य रोग जैसे

फेफड़े के रोग दमा, क्षय रोग आदि से शिल्पि परिवार प्रभावित हो रहे हैं। श्वास रोग जो गोरा पत्थर के कणों के शरीर में पहुँचकर जमने के कारण होता है उसकी प्रकृति शीत होती है तथा इसके कारण फेफड़ो की कार्य क्षमता प्रभावित होती है | परिणामस्वरुप शरीर में ऑक्सीजन कम मात्रा में पहुंच पाती है, जिसके कारण प्रस्तर शिल्पकार अनेकानेक रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। जैसा कि अध्ययन क्षेत्र के प्रस्तर शिल्पकारों से चर्चा के दौरान पता लगा कि मार्बल के कण सफेद होने के कारण एक्सरे में भी नजर नहीं आते लेकिन वे शरीर में जमें होते हैं और रोगी श्वास रोग को शीत रोग मानकर इलाज करवाते रहते हैं। डॉक्टर भी एक्सरे में इन कणों के न आने के कारण रोग को ठीक से नहीं समझ पाते एवं ठीक उपचार न मिलने के कारण पहले दमा फिर टी.बी. होने के बाद व्यक्ति मानसिक तनाव में आ जाता है तथा कुछ ही दिनों में शरीर कमजोर हो जाता है एवं अनेक रोग उसे घेर लेते है | दूसरी ओर अब वह शिल्प निर्माण से दूर हो जाता है जिसके कारण परिवार को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है | ऐसी कई समस्याओं में पड़कर वह और कमजोर होता रहता है क्योकि काम बंद करने के कारण उसकी आवक नहीं होती और इलाज के लिये पर्याप्त पैसे नहीं होने के कारण रोग विकराल रूप धारण कर लेता है तथा प्रस्तर शिल्पकार असमय ही काल के गाल में समा जाता है। रोग के बढ़ने का दूसरा कारण यहाँ के निवासी अनेक मत-मान्यताओं को मानते हैं तथा कुछेक अन्धविश्वासी भी हैं। इनके पूर्वज जड़ी-बूटियों तथा मंत्र चिकित्सा से रोगों पर विजय प्राप्त कर लेते थे लेकिन प्रकृति में बढ़ते प्रदूषण ने जड़ी-बूटियों के प्रभावों को भी कम किया है तथा मंत्र चिकित्सा जो तरंगो पर आधारित होती है आज इतने अधिक यंत्रों का विकास हो गया है कि उनसे निकलने वाली तरंगो के मध्य मंत्रो की तरंगों का प्रभाव जैसे खो ही जाता है और यह चिकित्सा भी लगभग अप्रभावी सिद्ध हो रही है | लेकिन लोग इसी चिकित्सा का प्रयोग करते रहते हैं एवं रोग ठीक न होने के कारण बढ़ता जाता है तथा विकराल रूप धारण कर लेता है और शिल्पकार असमय मृत्यु का शिकार हो जाता है। स्वास्थ्य की परिभाषा विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 1948 में इस प्रकार दी है - "Health is a state of a complete physical, mental and social well-being and not merely an absence of disease or infirmity." अतः स्वस्थ होना केवल शारीरिक रूप से स्वस्थ होना न होकर मानसिक एवं सामाजिक रूप से भी पूर्णतः स्वस्थ होना है।

आंकड़ों का विश्लेषण और तार्किक परीक्षण

परम्परागत चिकित्सा विधि एवं अंधविश्वासों के कारण अनेकानेक रोगों की चिकित्सा नहीं हो पाती, समाज में कई पीढ़ियों से चली आ रही जड़ी-बूटियों से चिकित्सा आज बढ़ते प्रदूषण के कारण उनकी कम होती शक्तियों के परिणामस्वरुप निष्प्रभावी सिद्ध हो रही है | वहीं रोगों का इलाज झाड़-फूंक से हो जायेगा यह अंधविश्वास प्राचीनकाल से ही समाज में व्याप्त है, लेकिन रोग उससे ठीक तो नहीं होते बल्कि ठीक समय पर चिकित्सा नहीं मिलने के कारण रोग बढ़ते जाते हैं। तब भी उपयुक्त चिकित्सा न की जाए तो रोग विकराल रूप धारण कर लेता है और शरीर कमजोर होकर स्वयं ही अनेक रोगों का घर बन बैठता है। दूसरी बात रोग की सही समझ या जानकारी नहीं होने से भी रोग अनियंत्रित हो जाता है तथा व्यक्ति अधिक बीमार हो जाता है और असमय मृत्यु का शिकार हो जाता है | प्रस्तुत प्रपत्र के अध्ययन क्षेत्र में प्रमुखतः यही दो समस्याएं अध्ययन के दौरान प्रकाश में आई हैं | इन समस्याओं तथा अन्य बातों को विभिन्न सारणियों तथा चित्रों के माध्यम से समझाने का प्रयत्न किया गया है।

सारणी क्रमांक 01: प्रस्तर शिल्पकारों का प्रकार

क्रमांक	प्रकार	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1	वंशानुगत	07	35
2	कला प्रेमी	04	20
3	पेशेवर व्यवसायी	00	00
4	अन्य कार्य न मिलने के कारण शिल्पकार्य में संलग्न	09	45
	योग	20	100

सारणी क्रमांक 01 का विश्लेषण

सारणी क्रमांक 01 में भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के प्रस्तर शिल्पकारों के प्रकार का विश्लेषण किया गया है | इस पर्यटन क्षेत्र के प्रस्तर शिल्पकारों का अध्ययन करने हेतु साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 45 प्रतिशत प्रस्तर शिल्पकार परिवार शिल्पकर्म में इसलिए संलग्न हैं क्योंकि उनके पास इस रोजगार के अलावा और कोई रोजगार नहीं है। वहीं 35 प्रतिशत परिवार वंशानुगत इस कार्य में लगे हैं । इन वंशानुगत कार्य में लगे शिल्पियों ने शिल्पकला की कोई विधिवत शिक्षा प्राप्त नहीं की है बल्कि अपने परिवार के बड़े-बुजुर्गों द्वारा किये जा रहे कार्यों को देखकर तथा उनसे ही सीखकर इस कार्य को कर रहे हैं। 20 प्रतिशत शिल्पकार कला प्रेमी होने के कारण शिल्पकार के रूप में कार्यरत हैं जिससे इनका शौक भी पूरा हो जाता है तथा आजीविका भी चल जाती है। लेकिन साक्षात्कार के दौरान यह बात उभरकर आई है कि यदि इन्हें शिल्पकार्य के अलावा कोई और रोजगार प्राप्त हो तो वह उस रोजगार को तत्परता से अपना लेंगे जिसका प्रमुख कारण प्रस्तर शिल्पियों को होने वाली स्वास्थ्य समस्याएं, कम आय तथा गोरा पत्थर की समय-समय पर उचित मूल्य पर अनुपलब्धता है।

साक्षात्कार के दौरान 65 वर्ष की उम्र के चन्नूलाल अपनी पत्नी के साथ मूर्तियों को परिसज्जित (finished) करने में लगे थे, उनका कहना था कि अन्य रोजगार नहीं होने के कारण हम इस कार्य में लगे हैं। इस कार्य को करने से शरीर बहुत अधिक थक जाता है | थकान से होने वाले दर्द के कारण कई बार रात में नींद भी नहीं आती और मूर्तियों को परिसज्जित करने के कार्य से बहुत कम आय प्राप्त होती है जिससे परिवार का भरण-पोषण करने में भी बहुत कठिनाई आती है । एक मध्यम आकार की मूर्ति जिसकी फिनिशिंग करने में 2-3 दिन लग जाते हैं उससे 200-300 की आय प्राप्त होती है। यदि हम यह कार्य न करें तो कोई और रोजगार भी नहीं है जिससे अपना तथा परिवार का पेट पाल सकें। अतः प्रस्तर शिल्पियों का एक बड़ा भाग केवल इस कारण से इस कार्य में लगा है कि उन्हें इसके अलावा और कोई कार्य स्थानीय स्तर पर उपलब्ध नहीं है।

सारणी क्रमांक 02: प्रस्तर शिल्पकारों का जातिगत विवरण

क्रमांक	जाति	वर्ग	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1	भूमिया आदिवासी	अनुसूचित जनजाति	10	50
2	मुस्लिम	अन्य पिछड़ा वर्ग	04	20
3	ब्राह्मण	सामान्य	02	10
4	ढ़ीमर	अन्य पिछड़ा वर्ग	04	20
	योग	20	100	

सारणी क्रमांक 02 का विश्लेषण

सारणी क्रमांक 02 में दिये गये आंकड़ों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि प्रस्तर शिल्पकार्य में विभिन्न जाति, वर्गों एवं धर्मों के लोग कार्यरत हैं। सर्वाधिक 50 प्रतिशत परिवार भेड़ाघाट में आदिकाल से निवासरत भूमिया आदिवासी अनुसूचित जनजाति वर्ग के हैं | ये अपने को हिन्दू धर्म का अनुयायी मानते हैं तथा पूजा पद्धति में मूर्तिपूजा का अनुसरण करते हैं। इनके द्वारा हिन्दू धर्म की आस्था के प्रतीक देवी-देवताओं की मूर्तियाँ बनाई जाती हैं | साथ ही अन्य सामग्री, साजो-सामान जो गोरा पत्थर तथा लाल पत्थर से निर्मित किए जाते हैं, का भी निर्माण इस वर्ग के लोग करते हैं। वहीं मुस्लिम धर्म के 20 प्रतिशत परिवार भी शिल्पकला के कार्य में संलग्न हैं और ये कलाकार धार्मिक मान्यताओं से परे हटकर हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियों का भी निर्माण करते हैं। वहीं मछली पकड़ने वाली जाति ढ़ीमर (बर्मन) जो इस धार्मिक स्थल में निवासरत है, अपनी धार्मिक भावनाओं के कारण मछली मारने का कार्य न करके प्रस्तर शिल्पकला से अपना जीवन यापन कर रहे हैं। भेड़ाघाट में ब्राह्मण परिवारों में भी शिल्पकार्य होता है। साक्षात्कार के दौरान एक प्रस्तर शिल्पकार प्यारेलाल आदिवासी उम्र 70 वर्ष ने बताया की हम यह कार्य पीढ़ी दर पीढ़ी पूर्वजों के समय से करते आ रहे हैं

। वहीं मुस्लिम परिवार के शिल्पियों ने भी अपने पूर्वजों के प्रस्तर शिल्पकार होने की परम्परा को आगे बढ़ाया है।

सारणी क्रमांक 03: प्रस्तर शिल्पकार परिवारों की वार्षिक आय

क्रमांक	आय का स्तर (रूपयों में)	परिवारों की संख्या	परिवारों का प्रतिशत
1	60 हजार से कम	00	00
2	60 हजार से 1.50 लाख	08	40
3	1.50 लाख से 2.50 लाख	06	30
4	2.50 लाख से अधिक	06	30
	योग	20	100

सारणी क्रमांक 03 का विश्लेषण

सारणी क्रमांक 03 में भेड़ाघाट पर्यटन स्थल के प्रस्तर शिल्पकारों की वार्षिक आय का विवरण दिया गया है जिसका विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि कोई भी परिवार 60 हजार रुपये से कम की वार्षिक आय प्राप्त नहीं करता। 40 प्रतिशत परिवारों की वार्षिक आय का स्तर 60 हजार रुपये से 1.50 लाख रुपये के मध्य है। 30 प्रतिशत परिवार 1.50 लाख रुपये से 2.50 लाख रुपये के मध्य वार्षिक आय का अर्जन करते हैं तथा 30 प्रतिशत परिवार 2.50 लाख रुपये से अधिक की वार्षिक आय अर्जित करते हैं । लेकिन ये परिवार इतनी आय के बाद भी बचत नाममात्र ही कर पाते हैं क्योकिं कच्चे माल की खरीदी, बीमारियों में होने वाला खर्च तथा परिवार के पालन-पोषण में अपनी कमाई का अत्यधिक भाग खर्च कर देते हैं । परिवार का कमाने वाला मुखिया यदि रोगग्रस्त हो जाये तो परिवार आर्थिक तंगी का सामना करता है और स्थानीय स्तर पर

अच्छी गुणवत्ता की स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध न होने के कारण शहर में इलाज करवाने जाते हैं। प्रतिदिन कार्य करके अपने परिवार का भरण पोषण करने वाला मुखिया जब चिकित्सा हेतु शहर जाता है तब सर्वप्रथम उसे अपना कार्य बंद करना पड़ता है जिससे परिवार की दैनिक आय तुरंत बंद हो जाती है वहीं चिकित्सा में लगने वाला खर्च की गई बचत से होने लगता है तथा कुछ ही समय में उनके द्वारा की गई छोटी सी बचत भी खर्च हो जाती है। यदि चिकित्सा लम्बे समय तक चले तो वह शिल्प कार्य करके धन अर्जित नहीं कर पाता है और उसे की गई बचत के समाप्त होने पर कड़ी आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। साक्षात्कार के दौरान 80 वर्षीय बुजुर्ग 22 सदस्यों के परिवार के मुखिया नन्दलाल वर्मा का कहना था कि जब श्वास रोग पहली बार हुआ तभी काम बंद कर देना चाहिए था लेकिन काम करते रहने के कारण दमा हुआ और बाद में क्षय रोग हो गया जिसके इलाज में पूरी जमा पूंजी खर्च हो गई| जब काम न करने के कारण परिवार आर्थिक समस्याओं से जूझ रहा था तभी इलाज हेतु रुपयों की भी जरुरत थी और रुपये न होने के कारण ठीक से इलाज भी नहीं हो पाया और इसके अलावा यहाँ कोई अन्य कार्य भी नहीं है जिसको करके परिवार का भरण पोषण किया जा सके। अतः मजबूरी में यह कार्य करना पड़ा और आज बीमारियों से ग्रसित होकर जीवन की सांसे गिन रहे हैं।

सारणी क्रमांक 04: प्रस्तर शिल्पकारों की वैधानिक स्थिति

क्रमांक	वैधानिक स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1	संगठित शिल्पकार	00	00
2	असंगठित शिल्पकार	20	100
3	अपंजीकृत शिल्पकार	00	00

4	पंजीकृत शिल्पकार	20	100
5	योग (क्रम संख्या 2 और 4 परस्पर व्याप्त हैं)	-	-

सारणी क्रमांक 04 का विश्लेषण

सारणी क्रमांक 04 का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि पर्यटन क्षेत्र भेड़ाघाट के सभी प्रस्तर शिल्पकार भेड़ाघाट नगर पंचायत में शिल्पी के रूप में पंजीकृत हैं। लेकिन 100 प्रतिशत प्रस्तर शिल्पकार असंगठित हैं तथा कार्य में लगे हैं। इनकी मेहनत का मूल्य निर्धारित करने वाला कोई भी संगठन कार्यरत नहीं है इसी कारण इन्हें अपनी मेहनत का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता। इन्हें अपने शिल्प का व्यापारियों द्वारा जो भी मूल्य दे दिया जाता है उसी को लेकर संतोष करना पड़ता है जिसके कारण इनकी आर्थिक स्थिति दयनीय है | यदि शिल्पकार व्यापारियों को तैयार शिल्प न बेंचें तो दिन-प्रतिदिन का खर्च चलाना मुश्किल हो जाता है और तैयार शिल्प सीधे खरीदने वाले पर्यटक कब खरीदेंगे यह निश्चित नहीं होता। अतः इनकी कमजोर आर्थिक स्थिति इन्हे अपने प्रस्तर शिल्प को उचित मूल्य प्राप्त करने में बाधक है। इस पर्यटन क्षेत्र में एक संगठन धुआंधार शिल्पकार संघ 1984-85 से कार्यरत है, जिसके लगभग 200 सदस्य हैं किन्तु इसमें सक्रियता तथा वास्तविक कार्यपद्धति का अभाव है जिसके कारण यह संगठन शिल्पकारों के लिए जैसा कार्य होना चाहिए वैसा कार्य नहीं कर पा रहा है | दूसरा कारण इस संगठन के पदाधिकारियों में गुटबाजी, संगठन में व्यापारियों का प्रभावी होना आदि कारणों से यह अपनी मूल भावना से हट गया है। प्रस्तर शिल्पकार, मध्यप्रदेश हस्तशिल्प विकास निगम तथा खादी ग्रामोघोग आदि में भी पंजीकृत हैं लेकिन यहां से नियमित सहयोग प्राप्त न होकर केवल खानापूर्ति होती रहती है। यहाँ शिल्पकारों में अशिक्षा तथा संगठन की भावना का अभाव है जिसके कारण उन्हें उचित मूल्य प्राप्त नहीं होता तथा प्रशिक्षण का अभाव भी इनके आर्थिक पिछड़ेपन का कारण है।

निष्कर्ष

"शरीर खलु सार मिधम" 'जीवन का प्रथम धन स्वस्थ काया स्वस्थ मन' इस पंक्ति को जीवन में प्रत्येक व्यक्ति को महत्व देना चाहिये क्योंकि शरीर के रोगी होने से कोई भी कार्य उच्च गुणवत्ता से नहीं हो पाता और कहा जाता है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। अध्ययन क्षेत्र में होने वाले शीत रोग, क्षय रोग, आदि के लिए उचित स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध कराकर असमय मृत्यु से प्रस्तर शिल्पकारों को बचाया जा सकता है तथा नियमित स्वास्थ्य परीक्षण हेतु जनजागरण अभियान चलाकर उन्हें सावधानियाँ बरतने हेतु प्रशिक्षित किया जा सकता है। प्रशिक्षण संस्थान खोलकर तथा उन्नत औजारों को उचित मूल्य पर उपलब्ध करवाकर उन्हें तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाये तथा शरीर में मार्बल के कण श्वास के माध्यम से न जाएँ इस हेतु उच्च गुणवत्ता के मास्क उपलब्ध करवाए जा सकते हैं तथा इनका प्रयोग अनिवार्य किया जाना चाहिए। साप्ताहिक, मासिक स्वास्थ्य जाँच शिविर लगाये जाएँ तथा अस्वस्थ होने से बचने का प्रशिक्षण उपलब्ध करवाना चाहिए, साथ ही सरकार द्वारा स्थानीय स्तर पर बार-बार तथा अधिकांश प्रस्तर शिल्पियों को होने वाले रोग-श्वास रोग, दमा, क्षय रोग की स्थानीय परिस्थिति के अनुसार शोध करवाकर उचित चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

संदर्भ

अयाधी, राकेश. (1991). "विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण भेड़ाघाट का गठन". रेवांचल पत्रिका, विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण भेड़ाघाट, जबलपुर।

अहूजा, राम. (2003). "सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान". रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

गौतम, भूपेन्द्र. (1991). "श्रद्धा और सौंदर्य का संगम भेड़ाघाट". शिवम आफसेट, जबलपुर।

जिला सांख्यिकी पुस्तक जबलपुर, 2015।

बेंगड़, अमृतलाल. (1991). "सौंदर्य सरिता नर्मदा" रेवांचल पत्रिका, विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण भेड़ाघाट, जबलपुर।

"भारत *2017*" प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई

दिल्ली।

''मध्यप्रदेश सन्दर्भ'' (2012), मध्यप्रदेश जनसंपर्क का प्रकाशन,जनसंपर्क संचालनालय, जनसंपर्क भवन, टेगौर मार्ग, बाणगंगा, भोपाल।

''मध्यप्रदेश सन्देश, जनसंपर्क संचालनालय, जनसंपर्क भवन, बाणगंगा, भोपाल।

शुक्ला, राजेश. (2009). ''पर्यटन भूगोल''. अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।

शर्मा, श्रीकमल. (2015). ''मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन''. मध्यप्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

शर्मा, आर. के. (1991). ''भेड़ाघाट नामकरण एवं किवदंतियाँ'', रेवांचल पत्रिका, विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण भेड़ाघाट, जबलपुर।

सहाय, शिवरूप. (1991). ''पर्यटन - सिद्धांत और प्रबंधन तथा भारत में पर्यटन''. मोतीलाल बनारसीदास, बंग्लो रोड, दिल्ली।

साहू, दिनेश. (1991). ''भेड़ाघाट एक परिचय'' रेवांचल पत्रिका, विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण भेड़ाघाट, जबलपुर।

न्यूज़ चैनलों का प्राइम टाइम और खबरों के विषयों का चयन

हेमंत वशिष्ट

सारांश

एक सशक्त लोकतंत्र में उतनी ही सशक्त मीडिया का होना समाज के समग्र विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। जनता तक खबरें पहुँचाना और जनता के मुद्दों को एक मंच प्रदान करना, प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के साथ-साथ सभी मीडिया प्लेटफॉर्म्स की सामूहिक जिम्मेदारी है। लोगों तक पहुँच, प्रभाव और प्रस्तुति में एक सशक्त माध्यम होने के नाते 24 घंटों का प्रसारण करने वाले न्यूज़ चैनलों की भूमिका भी उतनी ही महत्वपूर्ण हो जाती है। न्यूज़ चैनलों पर हमें दिन-भर तमाम तरह की खबरें दिखाई जाती हैं। कुछ खबरें राष्ट्रीय महत्व की होती हैं, कुछ राज्य और क्षेत्रीय स्तर की खबरें होती हैं, कुछ खेल जगत की गतिविधियों से हमें रूबरू कराती हैं जबकि कुछ सामाजिक सरोकार, रक्षा क्षेत्र, शिक्षा, स्वास्थ्य, विज्ञान औऱ प्रौद्योगिकी से जुड़ी खबरें होती हैं। हमारे जीवन से जुड़े हर पहलू की खबरें न्यूज़ चैनल हमें अलग-अलग समय पर दिखाते रहते हैं। न्यूज़ चैनलों के लिहाज से देखें तो पूरे दिन के किसी भी हिस्से से ज़्यादा प्राइम टाइम पर खबरें दिखाने के लिए विशेष रूप से तैयारियां की जाती हैं जिसमें मुख्य तौर पर रात 8 बजे से 10 बजे तक का प्रसारण समय शामिल किया जाता है। इसका मतलब ये कतई नहीं है कि सुबह और दोपहर के प्रसारण के बुलेटिन और कार्यक्रमों पर कम ध्यान दिया जाता है, लेकिन एक चैनल में न्यूज़ बुलेटिन और कार्यक्रमों की समय सारिणी या एफपीसी में प्राइम टाइम का एक विशेष महत्व होता है जो दर्शकों के बीच चैनल की पहुँच और लोकप्रियता में एक खास भूमिका निभाता है।

बदलते परिदृश्य में न्यूज़ चैनल लगातार 24 घंटे अपने निकटतम प्रतियोगी चैनल से न्यूज़ प्रोडक्शन और प्रस्तुति में आगे रहना चाहते हैं जिससे वे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शकों को अपने साथ जोड़ सकें। प्राइम टाइम न्यूज़ चैनलों के प्रसारण समय का वह हिस्सा है जहां वे सबसे ज्यादा टीआरपी (टेलीविजन रेटिंग प्वाइंट्स) हासिल करने की कोशिश करते हैं जिससे सभी चैनलों की सूची में उनकी बादशाहत कायम रहे और वे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शकों के साथ-साथ विज्ञापनदाताओं को भी अपने साथ जोड़ सकें।

इस शोध के जरिए यह समझने की कोशिश की गई है कि न्यूज़ चैनलों पर हमें दिखाए जा रहे कंटेंट विशेषकर प्राइम टाइम की विषयवस्तु का चुनाव किस तरह से किया जाता है। न्यूज़ चैनलों में काम कर रहे पत्रकार और न्यूज़ प्रोफेशनल्स किस आधार पर प्राइम टाइम में न्यूज और प्रोग्रामिंग कंटेंट का चुनाव करते हैं, यह शोध पत्र इन्हीं मापदंडों की पड़ताल करता है और अध्ययन के लिए चुने गए चार चैनलों (डीडी न्यूज़, राज्यसभा टीवी, आजतक और एनडीटीवी इंडिया) में काम कर रहे न्यूज़ प्रोफेशनल्स के नजरिए के मद्देनज़र चयन की प्रक्रिया का विश्लेषण करता है।

प्रस्तावना

इंटरनेट के विश्वव्यापी विस्तार के बावजूद टेलीविजन अभी भी मीडिया का वैश्विक और सबसे सशक्त माध्यम बना हुआ है। आंकड़ों के लिहाज़ से देखें तो दुनिया भर में 2.5 बिलियन लोग दिन में तीन घंटे से अधिक टेलीविजन देखते हैं। दुनिया के कई देशों के मुकाबले भारत में मल्टी-चैनल प्रसारण शुरु होने में थोड़ा समय लगा लेकिन यहां टेलीविजन चैनलों की संख्या और दर्शकों की संख्या में लगातार इज़ाफा हो रहा है। 800 से ज़्यादा टेलीविजन चैनल, 600 मिलियन से ज्यादा लोगों को शिक्षा, मनोरंजन और सूचना के लिए कंटेंट उपलब्ध करा रहे हैं। टेलीविजन चैनलों को हम संदर्भ के आधार पर कई श्रेणियों में बांट सकते हैं, जैसे कंटेंट का विषय, प्रसारण क्षेत्र, स्वामित्व इत्यादि। न्यूज़ चैनल, स्पोर्ट्स चैनल, राष्ट्रीय चैनल, क्षेत्रीय चैनल जैसी तमाम श्रेणियों में हम चैनलों का संदर्भित वर्गीकरण कर सकते हैं।

स्वामित्व के लिहाज़ से न्यूज चैनलों को मुख्य तौर पर दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है, निजी स्वामित्व वाले न्यूज चैनल और सार्वजनिक सेवा प्रसारक या लोक सेवा प्रसारक। निजी चैनलों की श्रेणी में आजतक, ज़ी न्यूज़, एनडीटीवी इंडिया, एबीपी न्यूज़, न्यूज़ नेशन, इंडिया टीवी जैसे चैनल हैं जबकि पब्लिक ब्रॉडकास्टिंग की श्रेणी में डीडी न्यूज़, लोकसभा टीवी और राज्यसभा टीवी शामिल हैं।

'नेचर ऑफ ओनरशिप' यानी न्यूज़ चैनलों के स्वामित्व की प्रकृति का उनके संचालन और कंटेंट पर काफी असर देखने को मिलता है। पब्लिक ब्रॉडकास्टिंग के दायरे के अंतर्गत आने वाले चैनल अपने आय-व्यय औऱ संचालन के खर्चों को लेकर

बाज़ार पर निर्भर नहीं होते हैं जिससे वे प्रसारण के कंटेंट का चुनाव चैनल की निर्धारित नीतियों के हिसाब से कर सकते हैं जबकि निजी चैनलों को इस तरह की आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती है। उनके सामने न सिर्फ अपना कंटेंट बेहतर से और बेहतर करने की चुनौती होती है बल्कि उसके साथ ही चैनल को जनता के बीच लोकप्रिय भी रखना होता है जिससे चैनल के दर्शकों की संख्या बढ़ने के साथ ही विज्ञापनदाताओं की संख्या में भी अपेक्षित बढ़ोत्तरी की जा सके। न्यूज़ मीडिया को कुछ लोग बेशक न्यूज़ बिजनेस करार दें लेकिन यहां उत्पाद यानि कंटेंट और बाज़ार का अलग ही स्वरूप देखने को मिलता है। मीडिया में उपभोक्ता यानी कि दर्शक इस्तेमाल किए जाने वाले उत्पाद यानी कंटेंट का पूरा खर्च वहन नहीं करते हैं। इसके लिए मीडिया कंपनियां रेवेन्यू जेनरेशन के लिए दो अलग-अलग परिधियों में संचालन करती हैं। पहले उन्हें अपने कंटेंट को दर्शकों के बीच लोकप्रिय बनाना होता है और दूसरे स्तर पर उन्हें चैनल के लिए ज़्यादा से ज़्यादा विज्ञापनदाता भी जोड़ने होते हैं। मीडिया की इसी विशेषता के चलते प्रसिद्ध मीडिया अर्थशास्त्री और लेखक रॉबर्ट पिकार्ड ने मीडिया के मार्केट को 'डुअल प्रोडक्ट मार्केट' के रूप में परिभाषित किया है। (Robert Picard, 1989)

हालांकि मीडिया को सिर्फ आय-व्यय, नफा-नुकसान और बाज़ार-उत्पाद के दायरे में सीमित रखना न्यायसंगत नहीं है। न्यूज़ को एक उत्पाद की श्रेणी में रखना, उसके महत्व को कम आंकना हुआ जबकि मीडिया उससे कहीं आगे जाकर दर्शकों को न सिर्फ सूचना प्रदान करती है बल्कि उनके ज्ञानवर्धन में ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है, साथ ही समाज में वैचारिक विमर्श और समाज के एकीकरण में अहम भूमिका भी निभाती है। इसलिए सिर्फ उत्पाद और खपत की अवधारणा में मीडिया की परिकल्पना करना उसके महत्व और भूमिका के साथ अन्याय करना होगा। (Hoynes and Corteau, 2006)

इन तमाम परिभाषाओं और संचालन की परिधियों के परे वास्तव में टेलीविजन हम सभी के जीवन का एक अहम हिस्सा बन चुका है, हमारी जिंदगी के कमोबेश हर हिस्से में टेलीविजन का दखल और प्रभाव साफ दिखाई पड़ता है। वर्तमान में टेलीविजन जो कंटेंट हमें प्रदान करता है उसमें न्यूज चैनलों का एक प्रभावशाली हिस्सा होता है जो जनमानस को न सिर्फ उनकी पसंद की खबरों से

अवगत कराता है बल्कि उन खबरों का विश्लेषण भी दर्शक अपनी पसंद के चैनलों पर देखते हैं। आमतौर पर न्यूज चैनल जब दिन-भर के कार्यक्रमों की अपनी आंतरिक प्रणाली के ज़रिए रूपरेखा तय करते हैं उस वक्त ऐसे कई सवाल होते हैं जिन्हें केन्द्रबिंदु मानकर समुचित आकलन के आधार पर खबरों का चयन किया जाता है।

उदाहरण के लिए:-

- दर्शक किस तरह की खबरें देखना चाहते हैं,
- दर्शक किन खबरों का विस्तृत विश्लेषण चाहते हैं,
- दर्शक किस रूप में खबर या विश्लेषण को देखना चाहते हैं,
- दर्शकों के लिए जरूरी क्या है, खबर, कार्यक्रम, चैनल या फिर एंकर,
- अगर सभी चैनलों पर एक जैसी खबरें चलाई जा रही हैं तो फिर दर्शक किसी एक चैनल को प्राथमिकता क्यों दें

न्यूज़ चैनलों में काम करने वाले प्रोफेशनल्स और न्यूज एक्सपर्ट्स का मानना है कि दर्शक एक पैटर्न पर खबरें देखना पसंद करते हैं और ये पैटर्न समय समय पर बदलता रहता है। न्यूज चैनल दर्शकों के खबर और विश्लेषण देखने के इसी पैटर्न के आधार पर अपना कंटेंट तैयार करते हैं। किसी विशेष टाइम बैंड में एक खास तरह की खबरों के दर्शक ज़्यादा होते हैं तो किसी अन्य टाइम बैंड में दर्शकों की प्राथमिकता कुछ और होती है। टीवी के दर्शकों के पास अब न तो न्यूज़ चैनलों की कमी है और न ही अपनी सहूलियत के हिसाब से खबरें न देख पाने की कोई मजबूरी, लिहाज़ा वर्तमान दर्शक जितने अपनी पसंद को लेकर स्वतंत्र हैं खबरों के चयन को लेकर उतने ही सजग और जागरुक भी हैं। विभिन्न न्यूज़ चैनल और एजेंसिया दर्शकों की इसी पसंद-नापसंद के बीच आंकड़े जुटाने में प्रयासरत रहती हैं जिससे वे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शकों को अपने चैनल से जोड़ सकें। हालांकि कोई भी चैनल दिन की मुख्य खबरों की अनदेखी नहीं कर सकता है, कुछ खबरें इतनी जरूरी होती हैं कि चैनल अपनी तमाम प्लानिंग के अलावा भी उन्हें किसी न किसी रूप में प्रसारण में जरूर शामिल करते हैं। इसके साथ ही प्रसारण समय और प्रारूप में ब्रेकिंग न्यूज़ की भी गुंजाइश रखी जाती है जिसका अंदाजा आप पहले से नहीं लगा सकते हैं।

इस पैटर्न को पहचानने के लिए न्यूज़ चैनल कई संसाधनों का इस्तेमाल करते हैं। इसके लिए चैनल में ही काम करने वाले लोगों की टीम बनाई जाती है जो अलग-अलग टाइम बैंड में विषयानुसार खबरों के प्रति दर्शकों के रिस्पॉन्स और संदर्भित टीआरपी का विश्लेषण करते हैं। इसके साथ ही कई चैनल अनेक बाहरी एजेंसियों की भी मदद लेते हैं जिससे वे डाटा संग्रहण की विभिन्न पद्धतियों का इस्तेमाल कर दर्शकों की रुचि और खबरों के प्रति उनके रुझान का आकलन करते हैं। हाल के दिनों में तकरीबन सभी चैनल विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स का इस्तेमाल कर रहे हैं जिससे चैनल के दर्शकों से सीधा संवाद किया जा सकता है और बिना किसी देरी और किसी तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप के बिना वे चैनल पर दिखाई जा रही खबरों और कार्यक्रमों को लेकर दर्शकों की राय जान सकते हैं। कई चैनल अपना ऐप लॉन्च कर चुके हैं, ऑनलाइन अपना कंटेंट दर्शकों को मुहैया करा रहे हैं, कई चैनल समानांतर यूट्यूब चैनल पर भी प्रसारण करते हैं। इन सब माध्यमों से जहां एक तरफ चैनलों की दर्शकों के बीच पहुँच बढ़ी है उसके साथ ही दर्शकों का फीडबैक चैनलों तक बिना किसी रुकावट या संशोधन के पहुँच रहा है।

आज के दौर में लोगों के पास न्यूज़ कंटेंट की उपलब्धता को लेकर बहुत सारे विकल्प मौजूद हैं। समाचार पत्र, ऑल इंडिया रेडियो, डीडी न्यूज़ से शुरु हुआ सफर अब बहुत सारे प्राइवेट चैनलों के एकाधिकार से गुज़रता हुआ मोबाइल फोन की स्क्रीन तक पहुँच चुका है। विभिन्न न्यूज़ वेबसाइट्स, न्यूज़ ऐप और अन्य ऑनलाइन माध्यमों ने किसी एक न्यूज स्त्रोत पर दर्शकों की निर्भरता को खत्म कर दिया है। दर्शक अब अपनी पसंद और सहूलियत के हिसाब से खबरें देख, पढ़ या सुन सकते हैं जिसके बारे में कुछ समय पहले तक कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। खबरों का माध्यम चुनने की इसी स्वतंत्रता के चलते तमाम न्यूज़ चैनल ऐसे कंटेंट का चयन करने की कोशिश करते हैं जो एक विशेष टाइम बैंड में उनके दर्शकों की संख्या में इज़ाफा करे साथ ही उनके चैनल को नियमित रुप से देखने वालों को भी चैनल के साथ जोड़े रखें। खबरों का चयन और दर्शकों का रिस्पॉन्स जब टीआरपी में परिलक्षित होता है, चैनल समयानुसार रणनीति बनाते हुए अपेक्षित और वास्तविक टीआरपी के बीच की दूरी को पाटने में जुटे रहते हैं।

ऐसे में सवाल उठना लाजिमी है कि क्या न्यूज़ चैनलों का कंटेंट टीआरपी को देखते हुए ही तय किया जाने लगा है या फिर खबरों की प्राथमिकता कंटेंट का निर्धारण करती है । टेलीविज़न रेटिंग प्रणाली में सुधार और टीआरपी के टीवी कंटेंट पर दुष्प्रभावों को रोकने के मद्देनज़र अमित मित्रा कमेटी की सिफारिशें इसे समझने में काफी सहायक सिद्ध होती हैं। "टेलीविजन कंटेंट पर टीआरपी के बढ़ते प्रभाव और संबंधित प्रणाली में सुधार की गुंजाइश के लिए सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने फिक्की अध्यक्ष अमित मित्रा की अध्यक्षता में सात सदस्यीय कमेटी का गठन किया। कमेटी ने जनवरी 2011 में अपनी रिपोर्ट सामने रखी जिसमें उन्होंने कई सिफारिशें की।

अमित मित्रा कमेटी की रिपोर्ट के मुताबिक; "टीआरपी टेलीविज़न के दर्शकों की पसंद-नापसंद को मापती है और विज्ञापन एजेंसियों एवं विज्ञापनदाताओं को उन तक पहुँचने के लिए सही मीडिया और सही समय के चुनने में सहायता करती है। अत: टीआरपी प्रसारकों, विज्ञापन एजेंसियों एवं विज्ञापनदाताओं के कारोबारी फैसलों को प्रभावित करती है। वहीं ट्राई (भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण) के मुताबिक टीवी उद्योग में वित्त के प्रवाह की महत्वपूर्ण भूमिका होती है... प्रसारक और मीडिया एजेंसियाँ लगातार एक दूसरे से टीआरपी के लिए प्रतिस्पर्धा करती हैं और अक्सर कंटेंट भी टीआरपी से निर्धारित होता है" (Dr. Mukesh Kumar, 2015) |

ऐसे में तमाम कोशिशों के बावजूद भी न्यूज़ कंटेंट के निर्धारण में टीआरपी की भूमिका लगातार बढ़ती जा रही है। प्रणाली में तमाम खामियों की बात समय-समय पर उठती रहती है और जिन चैनलों को इससे सीधा फायदा मिलता है वे भी सुधारों पर चुप्पी साधे रहते हैं और किसी प्रतिकूल नतीजे के आने पर ही टीआरपी को सवालों के घेरे में लाया जाता है। इसका सबसे ताज़ातरीन उदाहरण हाल ही में देखने को मिला जब एक अपेक्षाकृत नए चैनल की बढ़ती टीआरपी की वजह से कई चैनलों ने अपनी शिकायत दर्ज कराई, जिनकी टीआरपी में लगातार गिरावट दर्ज की जा रही थी । दरअसल 8 जुलाई, 2020 को न्यूज़ ब्रॉडकास्टर्स एसोसिएशन (NBA) के अध्यक्ष रजत शर्मा ने चैनलों की रेटिंग में गड़बड़ी की आशंका को जताते हुए ब्रॉडकास्टर ऑडिएंस रिसर्च काउंसिल (BARC) इंडिया को एक पत्र लिखा । पत्र के मुताबिक उन्होंने पिछले 8 हफ्तों के टीआरपी के असामान्य होने का दावा किया और टीवी 9 की

विस्तृत जांच का भी आग्रह किया। (https://www.samachar4media.com)

ऐसे में अब बड़ा सवाल यह है कि जब टीवी न्यूज़ चैनल स्वयं टीआरपी को संदेहास्पद बता दें ऐसे में न्यूज़ वैल्यू की बजाय उसी टीआरपी के आधार पर न्यूज़ चैनलों के कंटेंट का निर्धारण होना कितना न्यायसंगत होगा। इन परिस्थितियों में यह और भी जरूरी हो जाता है कि खबरों के चयन, प्रस्तुति और प्रसारण में विशेष सावधानी बरती जाए और टीआरपी के दायरे से परे खबरों का चुनाव पत्रकारिता के मापदंडों के आधार पर ही किया जाए।

शोध उद्देश्य

न्यूज़ चैनलों पर विभिन्न विषयों पर खबरें और चुनिंदा खबरों पर विमर्श लगातार चलता रहता है लेकिन उतना ही जरूरी इन विषयों के चयन को लेकर होने वाली प्रक्रिया और संपादकीय विमर्श को जानना भी है जिससे न्यूज चैनलों के प्राइम टाइम के अलावा भी दिन भर चलने वाली खबरों और कार्यक्रमों की चयन पद्धति को जानने में मदद मिले। इस शोध पत्र के माध्यम से यह जानने की कोशिश की गई है कि किस तरह की खबरों का चयन प्राइम टाइम के लिए किया जाता है, किस आधार पर किया जाता है और न्यूज चैनल की आंतरिक प्रणाली में वे कौन से मानक हैं जिनके आधार पर इन खबरों को चयनित कर विभिन्न प्रारूपों में तैयार कर दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया जाता है।

शोध प्रविधि

इस शोध पत्र में न्यूज़ चैनलों के प्राइम टाइम कंटेंट के विषयों के चयन के आधार का विश्लेषण किया गया है जिसके लिए प्राथमिक और द्वितीयक स्त्रोतों से आंकड़े एकत्रित किए गए हैं। न्यूज़ चैनलों में काम करने वाले पत्रकारों के इंटरव्यू के साथ-साथ इस विषय पर पहले से हुए शोधों की जानकारी के परिदृश्य में विश्लेषणात्मक प्रविधि के जरिए यह अध्ययन किया गया है। शोध में चार चैनलों में काम करने वाले न्यूज़ प्रोफेशनल्स को शामिल किया गया है जिनमें डीडी न्यूज़, राज्यसभा टीवी, आजतक और एनडीटीवी इंडिया शामिल हैं।

शोध की सीमाएं

शोध पत्र मुख्य रूप से न्यूज़ चैनलों के प्राइम टाइम के दौरान दिखाई जाने वाली खबरों के चयन के आधार और प्रक्रिया पर केन्द्रित है और संबंधित अध्ययन प्राथमिक स्त्रोत से प्राप्त जानकारी और आंकड़ों पर आधारित है।

न्यूज़ चैनलों का प्राइम टाइम और खबरों के विषयों का चयन

टीवी न्यूज़ चैनलों की संख्या, उपस्थिति और प्रभाव को देखते हुए यह कल्पना करना भी मुश्किल लगता है कि ये सब पिछले 20 सालों में मुमकिन हुआ है। टीवी पर पहले बुलेटिन से लेकर वर्तमान समय के 24 घंटे के न्यूज़ प्रसारण ने समाज के हर वर्ग में अपनी पैठ बनाई है और आम जनजीवन से जुड़े हर पहलू पर अपनी छाप छोड़ी है। एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में समाचारों या खबरों का मुक्त प्रवाह लोकतंत्र की अवधारणा के अस्तित्व, निर्वहन और सफलता के लिए बहुत जरूरी है।

लोकतंत्र में मीडिया की इसी महत्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख करते हुए भारत के उपराष्ट्रपति श्री एम वेंकैया नायडु ने एक कार्यक्रम में मीडिया को राष्ट्रीय संसाधन बताया। साथ ही उन्होंने कई बिंदुओं में मीडिया के महत्व और भूमिका को रेखांकित किया। उपराष्ट्रपति ने कहा कि "संसद और मीडिया एक दूसरे के सहयोगी हैं। दोनों ही संस्थान जनभावनाओं को अभिव्यक्ति देते हैं। साथ ही उन्होंने मीडिया की सकारात्मक भूमिका को सामाजिक बदलाव के लिए बेहद अहम बताया"(https://pib.gov.in)|

ऐसे में लगातार बढ़ते न्यूज़ चैनलों के बीच लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देना और पत्रकारिता के मूल सिद्धांतों का पालन करना भी उतना ही जरूरी हो जाता है। लोकतंत्र में जनमत के निर्माण और आकलन में भी समाचार माध्यमों की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान में न्यूज़ चैनलों के समाचार माध्यमों में सबसे सशक्त माध्यम होने की वजह से जनमत निर्माण और जनजागरण में उनकी भूमिका और जिम्मेदारी उतनी ही व्यापक हो जाती है। किम्बल यंग ने जनमत के महत्व और भूमिका को साफ शब्दों में दर्शाते हुए कहा है कि "जनमत स्वयं सचेत समुदाय का एक सामान्य महत्व के प्रश्न पर विवेकपूर्ण सार्वजनिक विवेचना के बाद का सामाजिक

निर्णय है" (Young, K., 1923. Public opinion) |

न्यूज़ चैनल जनमत निर्माण के लिए जरूरी सामाजिक विमर्श के संचालन में एक अहम भूमिका निभाते हैं। परस्पर संवाद और विचारों के आदान-प्रदान के साथ-साथ चैनल जहां दर्शकों को अहम जानकारी उपलब्ध कराते हैं वहीं नीति निर्धारण में भी अपना योगदान देते हैं। बदलते समय के साथ-साथ न्यूज़ चैनलों के संचालन और प्रसारण में भी कई बदलाव देखने को मिले हैं।

न्यूज चैनलों ने न सिर्फ न्यूज़ को लोगों के बीच लोकप्रिय बनाया बल्कि लोगों के न्यूज़ देखने के तरीके या पैटर्न को भी बदला। आदत के तौर न्यूज़ देखने वाले दर्शक को धीरे-धीरे अपनी पसंद की न्यूज़ देखने का विकल्प भी इन चैनलों के द्वारा मुहैया कराया गया। दूरदर्शन के दौर में गिने-चुने न्यूज़ बुलेटिन देखने वाली जनता को जब निजी चैनलों के माध्यम से अनेकानेक विकल्प मिले तो धीरे-धीरे न्यूज़ चैनलों के दर्शकों की संख्या बढ़ने लगी और इस क्षेत्र में बढ़ती संभावनाओं के मद्देनज़र न्यूज़ चैनलों की संख्या में भी इजाफा होने लगा। सभी चैनलों ने अपनी संपादकीय नीति के तहत खबरों को चुनना और दिखाना शुरु किया, न्यूज़ को अलग-अलग फॉर्मेट या प्रारुपों में बांटा गया और चैनलों के 24 घंटे के प्रसारण को भी कई टाइम बैंड्स में बांट दिया गया जिससे चैनलों को संदर्भानुसार कंटेंट का चयन और प्रसारण करने में सहूलियत रहे। चैनलों की संख्या बढ़ने के साथ ही न्यूज़ और प्रोग्रामिंग कंटेंट को और बेहतर करने की कोशिशें होने लगीं जिससे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शकों में पैठ बनाई जा सके और उसे बरकरार भी रखा जा सके। खबरों को अब प्राथमिकता के साथ-साथ लोकप्रियता के पैमाने पर भी आंका जाने लगा जिससे न्यूज़ चैनल ऐसी खबरों को प्राथमिकता देने लगे जिससे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शकों का सरोकार जुड़ा हो या फिर जिसे ज़्यादा से ज़्यादा दर्शक देखना पसंद करें। इस पैटर्न में देखा गया कि समय-समय पर कई विषयों पर आधारित खबरों को न्यूज़ चैनलों के प्रसारण में प्रमुखता दी जाने लगी। राजनीति, अपराध, खेल, मनोरंजन जैसे कई क्षेत्रों की गतिविधियां न्यूज़ चैनल अपनी संपादकीय और मार्केटिंग नीतियों के तहत प्रसारण में घटाते-बढ़ाते रहे। इसी दौर में इंफोटेंमेंट जैसे शब्द भी गढ़े गए जिसमें दर्शकों को जानकारी देने के साथ ही जानकारी देने की शैली को इस तरह से विकसित और प्रस्तुत किया गया जिससे खबरों को

दिलचस्प अंदाज़ में तैयार कर प्रसारित किया जा सके। न्यूज़ के साथ व्यूज़ देने की शैली को भी कई चैनलों ने अपनाया और जमकर भुनाया। न्यूज़ प्रोडक्शन और प्रस्तुति में नए-नए प्रयोग किए जाने लगे जो सतत रूप से अभी भी जारी हैं।

खबरों के चयन की प्रक्रिया

न्यूज़ चैनलों में प्राइम टाइम समेत दिनभर चलने वाली खबरों के चयन का आधार जानने के लिए जरूरी है चयन की प्रक्रिया को समझना। हर न्यूज़ चैनल अपनी संपादकीय नीति के तहत एक प्रणाली को विकसित करता है जिसके माध्यम से खबरों को उनकी प्राथमिकता, न्यूज़ वैल्यू, प्रभाव, लोकप्रियता, उपयोगिता और जनसरोकार के लिहाज़ से चुना जाता है। किसी भी संस्थान की ही तरह न्यूज़ चैनल को भी कार्य प्रवाह के हिसाब के अलग-अलग विभागों में बांटा जाता है जिसमें इनपुट, आउटपुट और टेक्निकल विभाग प्रमुख होते हैं। सरल तरीके से समझें तो इनपुट का काम खबरें जुटाना होता है, आउटपुट का काम उन खबरों को प्रसारण के लिए विभिन्न प्रारूपों में तैयार करना होता है जो अंतत: टेक्निकल विभाग की मदद के जरिए प्रसारित कर दी जाती हैं।

खबरों के चयन की यह प्रक्रिया किसी खबर के चैनल में इनपुट विभाग के पास आते ही शुरु हो जाती है। यह विभाग किसी भी न्यूज़ चैनल में खबरों के लिए एक रिसेप्शन डेस्क के समान होता है जहां विभिन्न स्त्रोतों से आने वाली खबरों को इकट्ठा किया जाता है जिनमें चैनल के अपने संवाददाता, न्यूज़ एजेंसिया, फ्रीलांस पत्रकार और चैनल से क्षेत्रवार जुड़े स्ट्रिंगर भी शामिल होते हैं। इसके अलावा सरकारी विज्ञप्तियां, आधिकारिक ट्विटर खाते और सोशल मीडिया के जरिए भी खबरों के प्रवाह पर नज़र रखी जाती है। सभी स्त्रोतों से आई खबरों को प्राथमिकता के आधार पर आउटपुट विभाग को भेज दिया जाता है जहां इन खबरों को चैनल की स्टाइल शीट और रणनीति के हिसाब से प्रसारण के लिए तैयार किया जाता है। सभी जरूरी खबरों को बुलेटिन में लिया जाता है और नीतिगत फैसलों के आधार पर कुछ खबरों पर विशेष कार्यक्रम भी तैयार किए जाते हैं। न्यूज़ चैनल में 24 घंटे के फॉर्मेट में लगातार काम चलता रहता है, इसलिए एक तरफ जहां इनपुट खबरों के चुनाव और कवरेज की अग्रिम प्लानिंग में व्यस्त होता है, उससे पहले भेजी गई खबरों पर आउटपुट विभाग

पहले से ही काम कर रहा होता है और तैयार हो चुकी खबरों पर उसी समय एंकर स्टूडियो के जरिए अपना बुलेटिन या कोई विशेष कार्यक्रम भी कर रहा होता है जो पीसीआर (प्रोडक्शन कंट्रोल रूम) और एमसीआर (मास्टर कंट्रोल रूम) की मदद से प्रसारित कर दिया जाता है। ये सभी कार्य एक न्यूज़ चैनल में एक साथ चलते रहते हैं, कई शिफ्टों में पत्रकार और न्यूज़ प्रोफेशनल्स काम करते हैं और एक के बाद लगातार शिफ्टों में न्यूज़ प्रोडक्शन और प्रसारण का काम समानांतर चलता रहता है जिससे चैनल पर प्रसारण लगातार बना रहता है।

खबरों के चयन के मापदंडों के अध्ययन के लिए चार चैनलों का चयन किया गया जिनमें डीडी न्यूज़, राज्यसभा टीवी, आजतक और एनडीटीवी इंडिया शामिल हैं। शोध के आंकड़े जुटाने के लिए इन चारों चैनलों के विभिन्न विभागों में अलग-अलग पदों पर काम करने वाले पत्रकारों और न्यूज़ प्रोफेशनल्स से एक विस्तृत प्रश्नावली के जरिए समूची प्रक्रिया की जानकारी ली गई जिसके माध्यम से इस अध्ययन के लिए जरूरी विश्लेषण किया गया।

प्राइम टाइम में खबरें और न्यूज़ चैनल प्रोफेशनल्स का रिस्पॉन्स

न्यूज़ चैनलों में काम करने वाले प्रोफेशनल्स से मिले प्रश्नावली के जवाबों से खबरों के चयन की प्रक्रिया और मापदंडों के बारे में कुछ अहम बिंदु सामने आए, जो इस प्रकार हैं:-

दिन की सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण खबर

अध्ययन के लिए चुने गए चारों चैनलों में काम करने वाले ज़्यादातर प्रोफेशनल्स के मुताबिक दिन की सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण खबर को प्राइम टाइम में प्रमुखता दी जाती है। हालांकि सभी चैनलों में प्राइम टाइम को लेकर सुबह से ही प्लानिंग और तदुपरांत बैठकों का दौर शुरु हो जाता है लेकिन उस प्लानिंग के बाद भी दिन की सबसे महत्वपूर्ण खबर को प्राइम टाइम में अनदेखा नहीं किया जा सकता। यह खबर किसी भी विषय से जुड़ी हो सकती है। दिन की सबसे महत्वपूर्ण खबर राजनीति, खेल, अर्थव्यवस्था, जनसरोकार, शिक्षा, स्वास्थ्य, अंतर्राष्ट्रीय मामले या फिर मनोरंजन जगत से भी हो सकती है जिसे चैनल अपने प्रसारण में समुचित न्यूज़ स्पेस

जरूर प्रदान करते हैं।

न्यूज़ वैल्यू

खबरों के चयन में महत्वपूर्ण खबरों के साथ ही उनकी न्यूज़ वैल्यू पर भी ध्यान दिया जाता है। किसी भी खबर के सभी और संदर्भित परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण होने के चलते न्यूज़ वैल्यू यह तय करती है कि उस खबर का आम जनता के लिए क्या महत्व है, यह उनके रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी कोई खबर हो सकती है और इसके साथ ही राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय या फिर आर्थिक नीतियों पर आधारित खबर भी हो सकती है। यहां पर ध्यान देने वाली एक जरूरी बात यह भी है कि खबरों की न्यूज़ वैल्यू चैनल अपनी संपादकीय नीति के हिसाब से भी तय करने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र होते हैं। चैनल के साथ ही यह व्यक्ति विशेष के विवेक पर भी निर्भर करता है कि वे किस खबर में कितनी न्यूज़ वैल्यू या फिर दर्शकों को प्रभावित करने या आकर्षित करने का कितना सामर्थ्य देखते हैं।

ब्रेकिंग न्यूज़

ब्रेकिंग न्यूज़ वर्तमान टीवी मीडिया का एक ऐसा पहलू है जिससे कोई भी चैनल अब अछूता नहीं रहा, बेशक हर चैनल यह दावा न करे कि अमुक खबर सबसे पहले उनके चैनल पर दिखाई जा रही है लेकिन फिर भी टीवी स्क्रीन पर बड़े-बड़े फॉन्ट साइज़ में चलती ब्रेकिंग न्यूज़ के मोह को त्याग पाना फिलहाल तो असंभव सा लगता है | अपितु चैनल ब्रेकिंग न्यूज़ फॉर्मेट के साथ भी नित नए प्रयोग करते रहते हैं जिससे टीवी स्क्रीन पर प्रसारण के समय कुछ नवीनता लाई जा सके। अक्सर ऐसा भी होता है कि चैनल दिन भर किसी अन्य खबर को प्राइम टाइम पर दिखाने की तमाम तैयारी करते रहें लेकिन ऐन मौके पर किसी महत्वपूर्ण ब्रेकिंग न्यूज़ की वजह से पूरी प्लानिंग और रणनीति उन्हें बदलनी पड़ी। हम अब उस दौर में पहुँच चुके हैं जहां पहले सिर्फ व्यापक महत्व वाली खबरें ही ब्रेकिंग न्यूज़ हुआ करती थीं अब कमोबेश हर वो खबर ब्रेकिंग न्यूज़ बना दी जाती है जिसे टीवी चैनल ब्रेकिंग न्यूज़ घोषित कर दे।

जनसरोकार से जुड़ी खबरें

इसके साथ ही जनसरोकार से जुड़े अहम मुद्दों को भी प्राइम टाइम में अक्सर

चुना जाता है हालांकि तमाम चैनलों के कंटेंट का विश्लेषण करने पर पाया गया है कि ऐसे मुद्दों को बाकि ज्वलंत, समसामयिक और सनसनीखेज़ खबरों की बजाय उतना न्यूज़ स्पेस नहीं मिलता है जितना उन्हें दिया जाना चाहिए। चैनलों के सामने एक तरफ जहां दूसरे प्रतियोगी चैनल से आगे निकलने का लक्ष्य होता है वहीं न्यूज़ प्रोफेशनल्स भी ऐसी खबरों को ज़्यादा तवज्जों देते हैं जिनसे वे चैनल के दर्शकों की संख्या में लगातार इजाफा कर सकें और अपने प्रोफाइल को और बेहतर बनाते हुए चैनल में अपनी उपयोगिता लगातार साबित कर सकें।

सरकारी नीतियों पर आधारित खबरें

इन सबके अलावा महत्वपूर्ण सरकारी नीतियों से जुड़ी खबरों को भी प्राइम टाइम में जगह दी जाती है। प्रधानमंत्री का संबोधन, उनकी घोषणाएं, नई योजनाओं का ऐलान, सरकार के मंत्रियों का कवरेज, आर्थिक नीति की समीक्षा, राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति का कवरेज और सरकारी विज्ञप्तियां जैसी तमाम खबरें सभी चैनल दिनभर के प्रसारण के अलावा प्राइम टाइम में भी शामिल करने की पूरी कोशिश करते हैं। डीडी न्यूज़ और राज्यसभा टीवी जैसे लोक सेवा प्रसारकों पर इन खबरों को विशेष रूप से महत्व दिया जाता है जिससे सरकार की नीतियां जनसाधारण तक पहुँचाई जा सकें। प्रोफेशनल्स से प्राप्त जानकारी के अनुसार निजी चैनलों के मुकाबले यहां सरकार और सरकार की नीतियों से जुड़ी खबरों को दूसरी सनसनीखेज़ या लोकप्रिय खबरों की तुलना में तवज्जों दी जाती है जिससे देश की जनता तक उनके लिए उपयोगी सभी सूचनाएं पहुँचाई जा सकें और दूरदराज़ के इलाकों को भी देश की मुख्यधारा से जोड़ा जा सके।

लोकप्रिय खबरें

खबरों की लोकप्रियता का स्कोप या फिर दूसरे शब्दों में किसी खबर के दर्शकों द्वारा किसी अन्य खबर के मुकाबले ज़्यादा पसंद किए जाने की संभावना भी खबरों के चयन के कारणों में गिनी जा सकती है। न्यूज़ प्रोफेशनल्स पर न सिर्फ लगातार डेडलाइन का दबाव होता है बल्कि उन्हें अलग-अलग टाइम बैंड्स में सभी जरूरी खबरों के साथ ऐसी खबरों का भी चुनाव करना होता है जो उनके चैनल को नियमित रूप से देखने वाले दर्शकों के मिजाज की खबर हो और उनकी संख्या में लगातार

इज़ाफा भी करे।

चैनलों की रणनीति के हिसाब से चयन

खबरों के सभी मापदंडों के अलावा हर चैनल की अपनी एक प्रसारण नीति या चैनल पॉलिसी होती है जिनके आधार पर वे अपने न्यूज़ और प्रोग्रामिंग कंटेंट का चयन करते हैं और उसे तैयार कर दर्शकों के लिए प्रसारित करते हैं। ऐसे में प्राइम टाइम को आधे घंटे या एक घंटे के टाइम स्लॉट में बांटकर अलग-अलग कार्यक्रमों के रूप में ब्रांडिंग कर दी जाती है और फिर उसी मिजाज की खबरों को अमुक प्रोग्राम या ब्रांडिंग के तहत दिखाया जाता है। खबरों के विषयों के अलावा किसी प्रोग्राम का एक तय फॉर्मेट भी होता है जिसके आधार पर खबरों को चुना जाता है या फिर चुनी गई खबरों को उस फॉर्मेट या प्रारूप में ढाला जाता है। चैनल अपनी इस नीति, प्रोग्रामिंग या ब्रांडिंग में समयानुसार बदलाव करते रहते हैं जिससे वे अपने कंटेंट को दर्शकों की पसंद के अनुरुप ढाल सकें और टीआरपी की रेस में प्रतियोगी चैनलों से आगे रहें।

निष्कर्ष

लोकतंत्र के समग्र विकास के लिए सूचना का निर्बाध प्रवाह जितना जरूरी है| उतना ही जरूरी इस प्रवाह को संतुलित बनाए रखना भी है। खबरों का चयन उनके महत्व और उपयोगिता के आधार पर ही किया जाना चाहिए न कि सिर्फ लोकप्रियता के पैमाने पर। इसके साथ ही किसी भी तरह के पूर्वाग्रह और पक्षपात की खबरों के चयन में कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। न्यूज़ चैनलों को चलाने के लिए बड़ी मात्रा में धनराशि और विज्ञापनों की जरूरत होती है लेकिन इसका तात्पर्य यह कतई नहीं है कि व्यावसायिक हितों के मद्देनज़र चैनल समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अनदेखा करें। चैनलों की संपादकीय नीति और मार्केटिंग प्लान में एक बेहतर समन्वय की आवश्यकता है जिससे खबरों के चयन, उनकी प्रस्तुति और प्रसारण में किसी भी तरह के असंतुलन से बचा जा सके।

खबरों के बीच का यह संतुलन जितना जरूरी निजी चैनलों के लिए है उतना ही सार्वजनिक या लोक सेवा प्रसारकों के लिए भी, जिससे देश की जनता तक न सिर्फ खबरें अपने सही स्वरूप में पहुँचे बल्कि उस जानकारी की मदद से न्यूज़ चैनलों के

आम दर्शक भी लोकतंत्र में एक सशक्त और सार्थक भूमिका निभाते हुए अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन कर सकें। सूचना क्रांति और इंटरनेट के विस्तार के इस दौर में सूचना पाना बहुत ही सहज हो गया है लेकिन जरूरत इस सूचना के आदान-प्रदान को लगातार सार्थक बनाए रखने की है। लोकतंत्र में ऐसे बहुत से मौके आते हैं जहां न्यूज़ चैनलों को जनजागरण में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है | इसके साथ ही अनेकों जरूरी विषयों पर वे चाहे-अनचाहे जनता में एक आम राय बनाने की जिम्मेदारी में भी खुद को पाते हैं, ऐसी परिस्थितियों में चैनलों को न सिर्फ जवाबदेह बनना होगा बल्कि यह भी सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे समय में फैसले लेने में संपादकीय विवेक का हर संभव इस्तेमाल किया जाए। साथ ही चैनल में काम करने वाले पत्रकारों और तमाम प्रोफेशनल्स को भी खबरों का चयन करते वक्त, उन्हें लिखते वक्त, प्रसारण के लिए तय प्रारूप में तैयार करते हुए और विभिन्न न्यूज़ एवं प्रोग्रामिंग फॉर्मेट में उन्हें प्रस्तुत करते वक्त यह विशेष रूप से ध्यान रखना होगा कि पत्रकारिता के मूल सिद्धांतों का हर स्तर पर पालन किया जाए।

चैनलों को भी अपने कर्मचारियों के लिए यह स्वतंत्रता हर एक बार सुनिश्चित करनी होगी जिससे खबरों का चयन उनकी मेरिट के आधार पर ही हो। खबरों का सही अर्थ, महत्व, संदर्भ, प्रासंगकिता और सारगर्भिता उनके प्रसारण में भी अक्षरश: परिलक्षित होनी चाहिए जिससे न सिर्फ न्यूज़ चैनलों के प्राइम टाइम बल्कि उनके 24 घंटे के प्रसारण में उद्देश्य की एकरूपता, कंटेंट की विविधता और प्रसारण की सार्थकता बरकरार रहे।

सन्दर्भ

Picard, R. G. (2005). Unique characteristics and business dynamics of media products. Journal of media business studies, 2(2), 61-69.

https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/29334/4/04_chapter%202.pdf

Croteau, D., Hoynes, W., & Hoynes, W. D. (2006). The business of media: Corporate media and the public interest. Pine forge

press.
https://www.ibfindia.com/amit-mitra-committee-report
Dr. Mukesh Kumar (2015). TRP, TV News aur Bazar. Vani Prakashan
https://www.samachar4media.com/tv-media-news/nba-have-written-to-barc-india-to-report-a-suspected-anomaly-in-ratings-of-certain-news-channels-53902.html
https://www.newslaundry.com/2020/07/16/tv-ratings-india-tv-vs-tv9-bharatvarsh-nba-barc
https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1581747
Young, K. (1923). Public opinion.

जनसहभागिता, विकास एवं तृणमूल अभिशासनः मध्य प्रदेश के गाँवों का एक अध्ययन

डॉ. माधव प्रसाद गुप्ता

सारांश

यूनान के नगर राज्यों से लेकर आज के प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र ने एक लम्बा सफर तय किया है। प्राचीन काल में यूनान के छोटे-छोटे नगर राज्यों का शासन जनता की आम सहमति के आधार पर संचालित होता था। समय के साथ धीरे-धीरे लोकतंत्र ने व्यापक रूप ग्रहण कर राष्ट्र-राज्य का रूप धारण किया। इसी प्रयास ने स्वतंत्रता पश्चात भारत में लोकतांत्रिक अवधारणाओं को मजबूत किया और वर्तमान में तृणमूल अभिशासन के माध्यम से लोकतंत्र को आमजन से जोड़ने का प्रयास कर रहा है। तृणमूल अभिशासन, लोकतांत्रिक शासन के बुनियादी घटकों में से एक है, क्योंकि यह एक ऐसे वातावरण का निर्माण करता है जहाँ विशेषकर ग्रामीणों की निर्णय-निर्माण प्रक्रिया, सेवा आपूर्ति और संसाधनों के वितरण में भागीदारी सुनिश्चित होती है। तृणमूल अभिशासन के स्तर पर सहभागी लोकतंत्र को सुनिश्चित किया जा सकता है। यह न केवल शासन एवं जनता में लोकतांत्रिक मूल्यों एवं संस्कृतियों का विकास करता है वरन् तृणमूल स्तर पर समस्याओं का प्रभावी समाधान भी कर सकता है, जिससे सामाजिक और आर्थिक भेदभाव का सामना करने वाले लोग भी तृणमूल स्तर पर विकास कार्यक्रमों की आयोजना, क्रियान्वयन और निगरानी में एक केंद्रीय भूमिका निभा सकते हैं। इसी प्रयास में यह शोध पत्र मध्य प्रदेश के ग्रामों में जनसहभागिता, विकास एवं तृणमल अभिशासन के अंतर्संबंधों को समझने का एक प्रयास है।

मुख्य शब्दः लोकतान्त्रिक शासन, तृणमूल अभिशासन, प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र, पंचायती राज व्यवस्था

प्रस्तावना

यूनान के नगर राज्यों से लेकर आज के प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र ने एक लम्बा सफर तय किया है। प्राचीन काल में यूनान के छोटे-छोटे नगर राज्यों का शासन जनता

की आम सहमति के आधार पर संचालित होता था। समय के साथ धीरे-धीरे लोकतंत्र ने व्यापक रूप ग्रहण कर राष्ट्र-राज्य का रूप धारण किया। हॉब्स के सीमित लोकतंत्र की परिकल्पना को लॉक के विचारों ने राज्य को और अधिक व्यापक रूप प्रदान किया। फ्रांस की औद्योगिक क्रांति के समय जन्में प्रबुद्ध विचारक रूसो ने लोकतंत्र को और अधिक व्यापक बनाया तथा जनसहमति के आधार पर सरकार चलाने का एक नया प्रतिरूप पेश किया। इस परम्परा को जे.एस. मिल ने आगे बढ़ाया जिन्होंने प्रत्यक्ष लोकतंत्र की परिकल्पना को अधिक सफलता न प्राप्त करते देख प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र की धारणा को एक नया आयाम प्रदान किया (मिश्रा एवं कुमार, 2010, पृ० 212)। इसी प्रकार, भारत में भी पंचायती राज व्यवस्था का अस्तित्व प्राचीन भारत में मौर्य काल से रहा है। यह व्यवस्था सदैव समय के अनुरूप अलग-अलग स्वरूप को धारण करती रही है। ऐतिहासिक रूप में, पंचायती राज संस्थाएँ, ग्रामीण भारतीय राज्य और समाज का अंगभूत भाग रही हैं। प्राचीन समय से ही पंचायतें, भारतीय गाँवों में सांगठनिक और सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। उस समय की सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था को ग्राम समाज के रूप में बनाए रखने के लिए ये संस्थाएँ उत्तरदायी होती थीं, क्योंकि भारतीय गाँव, राज्य शक्ति के केन्द्र से दूर तथा कटे होते थे। इसीलिए मुख्यतः इन संस्थाओं द्वारा विकास की कार्यसूची और समाज के प्रबन्धन के लिए कार्य किया जाना तय किया गया था (बेहर एवं कुमार, 2002, पृ०1)।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में प्रथम महत्त्वपूर्ण प्रयास अक्टूबर 02, 1952 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारम्भ था। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य "अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण" करना था। इस कार्यक्रम द्वारा ग्रामीणों को राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने के उद्देश्य से जनसहभागिता और जनसहयोग के माध्यम से प्रत्यक्ष भागीदारी द्वारा महत्त्वपूर्ण प्रयास किया गया, इसके बाद अक्टूबर, 1953 में सम्पूर्ण भारत में "राष्ट्रीय विस्तार सेवा" कार्यक्रम को प्रारम्भ किया गया। इन सभी प्रयासों में स्वायत्तशासी इकाइयों के रूप में पंचायतों को ग्रामीण विकास की आधारशिला माना गया। इन दोनों कार्यक्रमों के संचालन का पूरा उत्तरदायित्व नौकरशाही को सौंपा गया। यह कार्यक्रम जनसहभागिता के अभाव तथा नौकरशाही द्वारा संचालित होने के कारण विफल हो गया। नौकरशाही द्वारा संचालित होने के

कारण इसमें गाँवों के विकास के बजाय सामुदायिक विकास की मशीनरी के विस्तार पर ही ज्यादा जोर दिया गया। सरकारी तंत्र के जरिए गाँव के लोगों की मनोवृत्ति बदलने की आशा की गई, नतीजा यह हुआ कि गाँवों की उन्नति के खुद के प्रयत्न करने के बजाय ग्रामीण जनता सरकार का मुँह देखती रही (कोठारी, 1970, पृ०95) जिससे इस कार्यक्रम में ग्रामीणों की प्रत्यक्ष भागीदारी का लक्ष्य पूरा नहीं हो पाया।

तत्पश्चात् 1957 में बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज आयोग का गठन किया गया। फलस्वरूप, 1959 में राजस्थान के नागौर जिले से पंचायती राज व्यवस्था का शुभारम्भ हुआ। तथापि समय-समय पर पंचायती राज और सहभागिता के संदर्भ में अन्य समितियां यथा- अशोक मेहता समिति (1977), जी. वी. के. राव समिति (1985), एल. एम. सिंघवी समिति (1986), 64वाँ संविधान संशोधन विधेयक महत्त्वपूर्ण प्रयास थे, किन्तु अपने प्रयास में यह अनुकूल परिणाम नहीं दे पाए।

तृणमूल अभिशासन के संस्थागत ढाँचें के निर्माण के लिए 1993 में केन्द्रीय सरकार द्वारा 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से पंचायती राज को वास्तविक एवं संवैधानिक स्वरूप प्रदान किया (सिसोदिया, 2007, पृ०1)। यह संविधान संशोधन अनिधियम पंचायतों को न केवल एक संवैधानिक स्थिति प्रदान करता है, बल्कि इसके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए स्वशासन के इन पारंपरिक संस्थानों की एकरूपता और औपचारिक संरचना भी प्रस्तुत करता है। भारतीय राजनीतिक प्रणाली में यह बदलाव इस विश्वास को दर्शाता है कि सरकार लोगों की प्रत्यक्ष सहभागिता के बिना वृद्धि और विकास को प्राप्त नहीं कर सकती है, जिस कारण जनसहभागिता एवं तृणमूल अभिशासन ग्रामीण विकास के एक वैकल्पिक रणनीति के रूप में उभरा है।

मध्य प्रदेश प्रथम राज्य है जिसने 73वें संविधान संशोधन के अनुरूप मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993 का निर्माण किया तथा पंचायती राज संस्थाओं का गठन किया, जिसमें तृणमूल स्तर पर ग्रामसभा एवं ग्राम पंचायत नामक दो महत्त्वपूर्ण संस्थाएं हैं। पंचायती राज की सम्पूर्ण अवधारणा में ग्रामसभा की महत्ता

निर्विवाद रूप से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। ग्रामसभा को अधिक प्रभावी एवं आम जनता की भागीदारी को अधिकतम बढ़ाने के उद्देश्य से ग्रामसभा सम्बंधी अधिनियम के प्रावधानों में लगातार संशोधन किए जाते रहे हैं। पंचायत अधिनियम के क्रियान्वयन के दौरान, राज्य को कई अवसरों एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। इसके साथ ही, राज्य के अनुभव ने पंचायती राज को संस्थागत बनाने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण अंतर्दृष्टि भी प्रदान किया है। लेकिन, नौकरशाही प्रतिरोध, कार्यात्मक समस्याएं, राजनीतिक एवं संस्थागत चुनौतियां, वित्तीय असमानता और क्षमता एवं भूमिकाओं में असंतुलन इसका नकारात्मक पहलू है। दूसरी ओर, यह लोकतांत्रिक एवं सहभागी शासन प्रणाली में तृणमूल स्तर पर लोगों को सम्मिलित करती है (सिसोदिया, 2007, पृ० 21) ।

ग्रामसभा गाँव के सबसे निचले स्तर पर एक ऐसी प्रथम आधुनिक राजनीतिक संस्था है, जो निर्वाचित प्रतिनिधियों की मध्यस्थता के बिना लोगों के हाथों में प्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक सत्ता प्रदान करती है। गाँव की परिस्थितियों में ग्रामसभा की तुलना संसद और विधानसभा के साथ की जा सकती है। ग्रामसभा विकेन्द्रीकृत शासन का सबसे शक्तिशाली ढाँचा है लेकिन दुर्भाग्यवश यह स्थानीय नेतृत्व और नौकरशाही के कारण तृणमूल स्तर पर एक जीवंत और महत्त्वपूर्ण संस्था नहीं बन सका। अधिकांश ग्रामसभाओं में सरपंच और उनके सहयोगियों के एक छोटे समूह का वर्चस्व रहता है (सिसोदिया, 2007, पृ०21) साथ ही ग्रामसभा की बैठकों में भागीदारी भी कम होती है जिसका प्रमुख कारण जाति, वर्ग एवं लैंगिक असमानता को जिम्मेदार माना जा सकता है । ग्रामसभा की बैठकों में नीति-निर्माण प्रक्रिया में प्रायः सरपंच और अन्य प्रभावशाली लोगों की प्रमुख भूमिका होती है । पंचायत के नेतृत्व में प्रायः दो प्रभावशाली समूहों यथा प्रथम, पारंपरिक रूप से गाँव का मुखिया तथा द्वितीय नई पंचायती राज व्यवस्था से उत्पन्न नेतृत्व में विषमता बनी रहती है। पंचायत प्रतिनिधियों के कार्य निष्पादन और प्रभावकारिता को जाति और वर्ग भेद अत्यधिक रूप से प्रभावित करते हैं। ग्राम पंचायत, ग्रामसभा के प्रति समुचित रूप से उत्तरदायी नहीं होती है। ग्रामसभा को ग्राम पंचायत के कार्य प्रणाली के बारे में कोई भी जानकारी नहीं होती है। पंचायती राज के एक महत्त्वपूर्ण भाग के रूप में सहभागिता की अवधारणा को शायद ही कभी देखा गया है (सिसोदिया, 2007, पृ० 22)।

मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993 के अनुरूप पंचायतों को काफी सशक्त किया गया, जिसमें ग्रामसभा को सर्वाधिक शक्तिशाली स्थिति प्रदान की गयी। ग्रामसभा को शक्तिशाली स्थिति प्राप्त होने के बाद भी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की इस प्रक्रिया में ग्राम स्तर पर लिए जाने वाले सभी निर्णयों में सरपंच एवं उनके सहयोगियों की केन्द्रीय भूमिका लगातार बढ़ती जा रही थी, जिसमें ग्रामसभा की स्थिति महत्त्वपूर्ण नहीं हो पा रही थी। बहुत से शोध अध्ययनों में पाया गया कि ग्राम स्तर पर किसी भी निर्णय में ग्रामसभा की स्पष्ट भागीदारी का अभाव रहा है। तत्पश्चात्, तत्कालीन मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह ने कहा कि "मैं पंचायती राज को सरपंच राज के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता (मैनर, 2001, पृ० 3-9)।" इसी संदर्भ में ग्रामीण विकास में ग्रामसभा की सहभागिता को अधिक से अधिक बढ़ाने के क्रम में 2001 में एक संशोधन अधिनियम द्वारा ग्राम स्वराज व्यवस्था को स्थापित किया गया तथा मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993 का नाम बदलकर मध्य प्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम, 1993 रखा गया। इस अधिनियम के माध्यम से तृणमूल अभिशासन के स्तम्भ पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत और सशक्त बनाया गया तथा इन संस्थाओं की स्थानीय प्रशासन और विकास गतिविधियों में प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित की गई। इस तरह पंचायती राज संस्थाओं में लोगों की अधिक भागीदारी, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और प्रभावी स्थानीय स्वशासन तथा आर्थिक और सामाजिक न्याय के अभिप्रेरकों की सहायता से अधिक लोकतांत्रिक बनाना है। यह अधिनियम हाल के वर्षों में मध्य प्रदेश में पंचायतों के क्षेत्र में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन और विकास के लिए महत्त्वपूर्ण अभिकरण एवं प्रावधान प्रदान करता है (सिसोदिया, 2007, पृ० 28)। इस अधिनियम के अनुरूप पंचायतों को काफी सशक्त किया गया, जिसमें ग्रामसभा को सर्वाधिक शक्तिशाली स्थिति प्रदान की गयी।

ग्राम स्वराज की शुरूआत ने नागरिक समाज के संगठनों, गांधीवादी समूहों और विकेंद्रीकृत स्थानीय स्वशासन के मामलों पर अनुसंधान कर रहे बौद्धिक वर्ग के लोगों को एक आशा की किरण प्रदान की। सम्पूर्ण देश में पंचायती राज पर कार्य करने वाले लोग और समूह अभी भी मध्य प्रदेश के ग्राम स्वराज प्रणाली के बारे में रुचि और

उत्साह दिखाते हैं। दूसरी ओर, राज्य में इसके उत्साह में कमी आई, जिसका कारण, ग्राम स्वराज की बहुत ही सरल और सतर्क शुरुआत हुई | वास्तविकता में इसे एक अधिक व्यावहारिक मार्ग की ओर अग्रसर करना रहा। सफलता के कुछ उदाहरण वास्तविक सहभागिता और प्रभावी स्थानीय लोकतंत्र के लिए नई प्रणाली की क्षमता को दर्शाता है। यह शुरूआत से ही स्पष्ट था कि पंचायत संरचना में प्रगतिशील सुधारों को निचले स्तर पर लागू करने का काम राज्य नेतृत्व के प्रयास और समर्थन के बिना सफल नहीं हो सकता है। निराशाजनक रूप से इस संदर्भ में राज्य के असंगत समर्थन के कारण ग्राम स्वराज व्यवस्था का विकास और संस्थानीकरण अनियमित रूप से बढ़ता गया (बेहर, 2003, पृ० 17-23)।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र मध्य प्रदेश में तृणमूल अभिशासन, विकास एवं जनसहभागिता में उभरती नई प्रवृत्तियों को समझना तथा तृणमूल अभिशासन प्रक्रिया में मुख्यधारा की जनसंख्या के साथ सीमांत वर्गों के राजनीतिक समावेशन को जानने का एक प्रयास है। यह शोध पत्र तृणमूल स्तर पर मध्य प्रदेश के उज्जैन एवं बड़वानी जिले के 10 ग्राम पंचायतों पर आधारित है। इसमें उज्जैन जिले से दो अनुसूचित जाति जनसंख्या बहुल ग्राम पंचायत, दो सामान्य ग्राम पंचायत एवं एक सांसद आदर्श ग्राम पंचायत तथा बड़वानी जिले से दो अनुसूचित जनजाति बहुल ग्राम पंचायत, दो सामान्य ग्राम पंचायत एवं सांसद आदर्श ग्राम पंचायत का चयन किया गया। ग्राम पंचायत के पंचायत प्रतिनिधि एवं ग्रामसभा के सदस्य अवलोकन की इकाई हैं। एक ग्राम पंचायत से एक सरपंच, पाँच पंचायत प्रतिनिधि, ग्रामसभा के पाँच पुरुष एवं पाँच महिला सदस्यों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। अतः सर्वेक्षण में 10 ग्राम पंचायतें तथा प्रत्येक ग्राम पंचायत से छः पंचायत प्रतिनिधि एवं 10 ग्रामसभा सदस्यों का चयन अध्ययन हेतु किया गया। इस प्रकार मध्य प्रदेश के उज्जैन एवं बड़वानी जिलों से चयनित 10 ग्राम पंचायतों से 60 पंचायत प्रतिनिधि (30 पुरूष एवं 30 महिला) तथा 100 ग्रामसभा सदस्यों (50 पुरूष एवं 50 महिला) का चयन किया गया। अतः कुल प्रतिचयन का आकार 160 था। यह शोध-पत्र मध्य प्रदेश के ग्राम पंचायतों के ग्राम सभा सदस्यों एवं पंचायत सदस्यों से साक्षात्कार, समूह चर्चा, अवलोकन एवं वैयक्तिक अध्ययन पर आधारित है।

तृणमूल अभिशासन

तृणमूल अभिशासन कुछ महत्त्वपूर्ण निर्धारकों जैसे जनसहभागिता, जवाबदेही, पारदर्शिता और वित्तीय हस्तांतरण पर आधारित होता है। ग्रामीण विकास की पूरी प्रक्रिया में जनसहभागिता सुनिश्चित होने पर ही तृणमूल अभिशासन प्रभावी होता है। तृणमूल अभिशासन, लोकतांत्रिक शासन के बुनियादी घटकों में से एक है, क्योंकि यह एक ऐसे वातावरण का निर्माण करता है जहाँ विशेषकर ग्रामीणों की निर्णय निर्माण प्रक्रिया, सेवा आपूर्ति और संसाधनों के वितरण में भागीदारी सुनिश्चित करता है। इस प्रक्रिया में शासन की राजकोषीय, राजनीतिक एवं प्रशासनिक शक्तियों का हस्तांतरण उच्च स्तर से निम्न स्तर पर किया जाता है, जिसे विकेन्द्रीकरण कहते हैं। राजनीतिक विकेन्द्रीकरण का सीधा सम्बंध लोकतांत्रिक मूल्यों, जनभावनाओं तथा विभिन्न सामाजिक एवं राजनीतिक दबावों से है। राजनीतिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा शासन के प्रत्येक स्तर पर जनसाधारण की सहभागिता तथा शासन संचालन में जनता की भूमिका को सुनिश्चित करने का प्रयास करती है' (कटारिया, 2011, पृ० 228)। इसके माध्यम से ही तृणमूल अभिशासन के स्तर पर सहभागी लोकतंत्र को सुनिश्चित किया जा सकता है। यह न केवल शासन एवं जनता में लोकतांत्रिक मूल्यों एवं संस्कृतियों का विकास करता है वरन् तृणमूल स्तर पर समस्याओं का प्रभावी समाधान भी कर सकता है, जिससे सामाजिक और आर्थिक भेदभाव का सामना करने वाले लोग भी तृणमूल स्तर पर विकास कार्यक्रमों की आयोजना, क्रियान्वयन और निगरानी में एक केंद्रीय भूमिका निभा सकते हैं।

ग्रामीण भारत में पंचायती राज तृणमूल अभिशासन की दिशा में एक संस्थागत संरचना है, जो लोगों को अप्रत्यक्ष लोकतंत्र से प्रत्यक्ष लोकतंत्र में जोड़ती है और इन संस्थाओं को राज्य सरकारें अपनी शक्तियाँ तथा कार्य सौंपती है। भारत में स्वतंत्रता पश्चात् तृणमूल अभिशासन की इकाई के निर्माण का प्रयास किया गया, जिसके अंतर्गत तृणमूल अभिशासन की अवधारणा को भारतीय संविधान के भाग चार में नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 40 के अंतर्गत शामिल किया गया। स्थानीय स्वशासन को अमलीजामा पहनाने का प्रथम प्रयास 1948 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री

राजकुमारी अमृत कौर की अध्यक्षता में दिल्ली में भारत के सभी राज्यों के स्थानीय स्वशासन के मंत्रियों के सम्मेलन से प्रारम्भ हुआ, इस सम्मेलन का उद्घाटन जवाहरलाल नेहरू द्वारा किया गया। इसमें उन्होंने कहा कि ''वास्तविक लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला स्थानीय स्वशासन ही है" (बर्थवाल, 2003, पृ० 156)। 26 जनवरी 1950 के नवनिर्मित संविधान में स्थानीय स्वशासन को राज्यों की कार्यसूची में रखा गया तथा राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में बतलाया गया कि "राज्य का यह कर्त्तव्य होगा कि वह ग्राम पंचायतों का इस ढंग से संगठन करे कि वे स्थानीय स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें (अनुच्छेद 40)।"

ग्राम पंचायत की बैठक में प्रतिनिधियों की भूमिका

तालिका 1 एवं 2 में ग्राम पंचायत की बैठकों में प्रतिनिधियों की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। इससे स्पष्ट है कि ग्राम पंचायत की बैठक में विकास परिचर्चा में लगभग आधे प्रतिनिधि भाग लेते हैं और इनमें भी महिला प्रतिनिधियों की सहभागिता का स्तर निम्न है। वर्ग समूह में प्रतिनिधियों की सक्रिय भूमिका के सम्बंध में मुख्यधारा के प्रतिनिधियों की तुलना में मात्र अनुसूचित जाति के प्रतिनिधियों की भूमिका कम है| इसका मुख्य कारण समुदाय में सामन्जस्य की कमी एवं प्रभुत्व वर्ग की निष्क्रियता तथा श्रमिक वर्ग एवं सीमान्त कृषकों में पंचायती राज एवं अधिकारों के प्रति जागरूकता का अभाव है। अनुसूचित जनजाति समूह में पंचायत की बैठकों में सक्रिय भूमिका सामान्य वर्ग से अधिक है, इसका मुख्य कारण अनुसूचित जनजाति समाज का परम्परागत रूप से लोकतांत्रिक मूल्यों को मान्यता एवं महिला-पुरुष के मध्य सामाजिक समानता तथा समुदाय की बेहतरी के लिए अपना योगदान प्रदान करने की भावना है।

तालिका 1: ग्राम पंचायत की बैठक में प्रतिनिधियों की भूमिका

क्र. सं.	प्रतिनिधियों की भूमिका	सक्रिय भूमिका	उपस्थिति	योग
1	ग्राम की समस्याओं पर विचार-विमर्श करने में	42 (70.00)	18 (30.00)	60 (100.00)
2	ग्राम के निर्माणाधीन कार्यों पर चर्चा करने में	32 (53.30)	28 (46.70)	60 (100.00)
3	विभिन्न प्रस्तावों पर अपने विचार रखते हैं। सुझाव देते हैं।	22 (36.70)	38 (63.30)	60 (100.00)
4	अन्य लोगों की समस्याओं को ग्राम पंचायत की बैठक में रखना।	26 (43.30)	34 (56.70)	60 (100.00)
5	विभिन्न मुद्दों पर प्रस्ताव रखने में	26 (43.30)	34 (56.70)	60 (100)

टिप्पणी: कोष्ठक के अन्दर प्रतिशत के आंकड़े दिए गए हैं

तालिका 2: पंचायत की बैठक में जाति समूह* के आधार पर प्रतिनिधियों की सक्रिय भूमिका

क्र. सं.	प्रतिनिधियों की भूमिका	अ.जा.	अ.ज.जा.	अन्य	योग
1	ग्राम की समस्याओं पर विचार विमर्श करने में	07 (41.20)	22 (84.60)	13 (76.50)	42 (70.00)
2	ग्राम के निर्माणाधीन कार्यों पर चर्चा करने में	05 (29.40)	17 (65.40)	10 (58.40)	32 (53.30)
3	विभिन्न प्रस्तावों पर अपने विचार रखते हैं। सुझाव देते हैं।	04 (23.50)	12 (46.20)	06 (35.30)	22 (36.70)
4	अन्य लोगों की समस्याओं को ग्राम पंचायत की बैठक में रखना।	04 (23.50)	12 (46.20)	10 (58.40)	26 (43.30)
5	विभिन्न मुद्दों पर प्रस्ताव रखने में	04 (23.50)	14 (53.80)	08 (47.10)	26 (43.30)

टिप्पणी: कोष्ठक के अन्दर प्रतिशत के आंकड़े दिए गए हैं

*टिप्पणी: तथ्यों का विश्लेषण निदर्शन में सम्मिलित 17 अ.जा., 26 अ.ज.जा एवं 17 अन्य वर्ग समूह के प्रतिनिधियों के अनुसार है।

ग्राम सभा की बैठक में ग्राम सभा सदस्यों की भूमिका

तालिका 3: ग्राम सभा की बैठक में ग्राम सभा सदस्यों की सक्रिय भूमिका

क्र. सं.	भूमिका	सक्रिय भूमिका	उपस्थिति	योग
1	प्रस्ताव रखने में	40 (40.00)	60 (60.00)	100 (100.00)
2	विभिन्न प्रस्तावों पर अपने विचार रखने में	29 (29.00)	69 (69.00)	100 (100.00)
3	सुझाव देने में	25 (25.00)	75 (75.00)	100 (100.00)
4	ग्राम पंचायत विकास योजना के निर्माण में	24 (24.00)	76 (76.00)	100 (100.00)
5	ग्राम की समस्याओं पर विचार विमर्श करने में	26 (26.00)	74 (74.00)	100 (100.00)
6	ग्राम के निर्माणाधीन कार्यों पर चर्चा करने में	21 (21.00)	79 (79.00)	100 (100.00)
7	शासकीय योजनाओं पर चर्चा करने में	20 (20.00)	80 (80.00)	100 (100.00)
8	हितग्राही चयन में	27 (27.00)	73 (73.00)	100 (100.00)
9	विकास के कार्यों का अनुमोदन करने में	23 (23.00)	77 (77.00)	100 (100.00)
10	सामाजिक अंकेक्षण में	20 (20.00)	80 (80.00)	100 (100.00)

टिप्पणी: कोष्ठक के अन्दर प्रतिशत के आंकड़े दिए गए हैं

तालिका 3 में ग्राम सभा की बैठक में उत्तरदाताओं की भूमिका का वर्गीकरण किया गया है जिसमें विश्लेषित किया गया है कि गाँव के विकास से सम्बन्धित सभी विषयों पर ग्रामसभा की बैठक में चर्चा की जाती है। इसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य वर्ग समूह के सदस्य ग्रामसभा की बैठक में भाग ले रहे हैं तथा ग्रामीण विकास की चर्चा में सहभागी भी बन रहे हैं। पंचायती राज व्यवस्था ने वंचित एवं पिछड़े वर्गों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयत्न किया है जिसमें इसको सीमित मात्रा में ही सफलता प्राप्त हुई है। दूसरी तरफ, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिला सदस्य भी ग्रामसभा की बैठक में भाग तो ले रही हैं किन्तु इनकी सक्रिय सहभागिता का अभाव है। बहुत ही कम पंचायतों में महिलाओं ने ग्राम की समस्याओं तथा विकास पर चर्चा की है जबकि अन्य वर्गों की महिलाओं की ग्रामसभा में सहभागिता न के बराबर है। यद्यपि, ग्रामीण एवं अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायती राज में आरक्षण और मनरेगा के क्रियान्वयन ने महिलाओं की जो भागीदारी सुनिश्चित की है उसका सीमित मात्रा में प्रभाव जरूर पड़ा है। महिलाएँ अब ग्रामसभा की बैठक में भाग लेने लगी हैं और विकास प्रक्रिया से जुड़ भी रही हैं।

जनसहभागिता में उभरती नई प्रवृत्तियां

ग्राम स्वराज ने मध्य प्रदेश में ग्राम स्तर पर स्थानीय स्वशासन की एक नई व्यवस्था को जन्म दिया है जो लोगों को अप्रत्यक्ष लोकतंत्र से प्रत्यक्ष लोकतंत्र में जोड़ती है। तृणमूल अभिशासन की सम्पूर्ण अवधारणा में ग्रामसभा की महत्ता निर्विवाद रूप से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। ग्रामसभा, तृणमूल अभिशासन का प्रथम सोपान है तथा प्रत्यक्ष लोकतंत्र का वास्तविक स्वरूप है। यह ग्रामीणों के एक ऐसे संस्थागत मंच के रूप में है जहाँ लोग स्वयं आपस में मिलकर गाँव के विकास के लिए नीतियों का निर्माण करते हैं। ग्रामसभा को अधिक प्रभावी एवं आम जनता की भागीदारी को अधिकतम बढ़ाने के उद्देश्य से ग्रामसभा सम्बंधी अधिनियम के प्रावधानों में लगातार संशोधन किए जाते रहे हैं।

अध्ययन क्षेत्र में ग्रामसभा की सहभागिता के संदर्भ में चर्चा के दौरान यह तथ्य

उभरकर सामने आया है कि अधिकांश पंचायतों में ग्रामीण जनता को ग्रामसभा के प्रावधानों, शक्तियों एवं अधिकारों का कोई ज्ञान नहीं है तथा उन्हें ग्रामसभा की महत्ता का भी कोई आभास नहीं है । वे पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम पंचायत को ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्था मानते हैं तथा ग्रामसभा को एक अनौपचारिक संस्था के रूप में मानते हैं। अधिकांश पंचायतों में ग्रामसभा बैठक रजिस्टर के अवलोकन से स्पष्ट हुआ है कि अधिकांश पंचायतों में ग्रामसभा बैठक में कोरम का अभाव रहा है, लेकिन किसी भी पंचायत में गणपूर्ति के अभाव में ग्रामसभा के स्थगन का उदाहरण दिखाई नहीं दिया है।

ग्रामसभा की बैठक में सहभागिता की स्थिति में अन्य वर्ग की महिलाओं की सहभागिता अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की तुलना में अत्यधिक निम्न है । इसका मूल कारण वंचित वर्ग की महिलाओं का ग्रामसभा की बैठक में हितग्राहीमूलक योजनाओं में नामांकन एवं लाभ की आकांक्षा में उपस्थिति रहती है, जबकि अन्य वर्ग की महिलाएं पारिवारिक दबाव एवं पारम्परिक सामाजिक प्रथाओं के कारण ग्रामसभा में भाग नहीं ले पाती हैं। अधिकांश पंचायतों में केवल वे महिलाएं ही ग्रामसभा की बैठक में उपस्थित रही हैं जिनको शासन की किसी न किसी हितग्राहीमूलक योजना का लाभ प्राप्त हुआ है। ग्रामसभा की बैठक में गाँव के विकास से सम्बन्धित सभी विषयों पर चर्चा की जाती है जिसमें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य वर्ग समूह के सदस्य ग्रामसभा की बैठक में भाग लेते हैं तथा ग्रामीण विकास की चर्चा में सहभागी भी बन रहे हैं। पंचायती राज व्यवस्था ने वंचित एवं पिछड़े वर्गों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयत्न किया है, जिसमें इसको सीमित मात्रा में ही सफलता प्राप्त हुई है। दूसरी तरफ, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिला सदस्य ग्रामसभा की बैठक में भाग तो ले रही हैं, किन्तु इनकी सक्रिय सहभागिता का अभाव है। बहुत ही कम पंचायतों में महिलाएँ ग्राम की समस्याओं तथा विकास पर चर्चा करती हैं । यद्यपि ग्रामीण एवं अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायती राज में आरक्षण और मनरेगा के क्रियान्वयन ने महिलाओं की जो भागीदारी सुनिश्चित की है उसका सीमित मात्रा में प्रभाव जरूर पड़ा है। महिलाएँ अब ग्रामसभा की बैठक में भाग लेने लगी हैं और विकास प्रक्रिया से जुड़ भी रही हैं। सामान्यतया ग्राम सभा की बैठकों में निर्णय मात्र औपचारिक अनुमोदन से होता है। इन बैठकों में सरपंच द्वारा लिए गये

किसी भी निर्णय का कोई भी ग्रामवासी एवं प्रतिनिधि विरोध नहीं करता है। साथ ही लोगों में ऐसी धारणा भी है कि ग्राम के संदर्भ में निर्णय लेने का एकमात्र अधिकार सरपंच को ही प्राप्त है।

स्थानीय नेतृत्व में उभरती नई प्रवृत्तियाँ

नेतृत्व व्यक्तियों को प्रभावित करने की एक कला एवं प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु स्वेच्छा से उनको आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है। नेतृत्व क्षमता मानवीय समाज में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। मानवीय क्रियाओं में कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जहाँ नेतृत्व का प्रभाव नहीं पड़ता हो, चाहे वह क्षेत्र राजनीतिक हो या सामाजिक या कोई भी ऐसा क्षेत्र जो मानवीय क्रियाओं द्वारा संचालित होता है (भट्ट, 2002, पृ० 60)। ग्रामीण भारतीय संदर्भ में नेतृत्व को देखा जाए तो प्राचीन काल से भारतीय ग्रामों की सम्पूर्ण व्यवस्था परम्परा के आधार पर विकसित अनौपचारिक नेतृत्व के नियंत्रण में होती थी। यह नेतृत्व ऐसे लोगों के हाथ में रहता था जो सामाजिक एवं जातीय स्तरीकरण में उच्च स्थान के अधिकारी होने के साथ-साथ बड़े भू-स्वामी होते थे। ये लोग अलिखित कानूनों के निर्माता-व्याख्याता होते थे तथा ग्रामीण समस्याओं के बड़े जानकार होते थे।

"पंचायती राज के अस्तित्व में आने के बाद तृणमूल स्तर पर निर्वाचित नेतृत्व की अवधारणा का आगमन हुआ। यह सत्ता के विकेन्द्रीकरण और शासन में जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी का परिणाम था। इसे ग्रामीण स्तर पर परम्परागत नेतृत्व के समानान्तर नेतृत्व के रूप में देखा जा सकता है क्योंकि ग्रामीण स्तर पर अभी भी परम्परागत नेतृत्व विद्यमान है। पंचायती राज व्यवस्था से उत्पन्न हुआ नया औपचारिक नेतृत्व नव्य-प्रभुवर्ग की अवधारणा का जनक है, क्योंकि वह ऐसे ध्रुव के रूप में विकसित हुआ है जिसके मूल में सामाजिक सर्वोच्चता, धन सम्पदा की समृद्धि, जातिगत आधार की व्यापकता, शासन तंत्र में फलदायी घुसपैठ, भाषण कला, विकास योजनाएं बनाने तथा समस्याओं को हल करने की क्षमता प्रमाणित करने का कौशल आदि तत्व है। निश्चित रूप से इसने परम्परागत नेतृत्व को चुनौती दी है" (भट्ट, 2002, पृ० 60)।

अध्ययन क्षेत्र में नई पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से परम्परागत नेतृत्व

धीरे-धीरे युवा नेतृत्व की तरफ केन्द्रित हो रही है। जिस कारण परम्परागत स्थानीय राजनीति, शक्ति राजनीति एवं जाति आधारित राजनीति की तरफ उन्मुख हो रही है। पंचायती राज ने वंचित वर्गों जैसे- अनुसूचित जाति/जनजाति एवं महिलाओं को आरक्षण प्रदान करके स्थानीय नेतृत्व में भागीदार तो बना दिया है किन्तु अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश पंचायतों में राजनीतिक नेतृत्व वंचित वर्गों के हाथों में न रहकर प्रभावशाली एवं शिक्षित वर्ग के हाथों में पहुँच गया है। पंचायत द्वारा प्रदत्त शासन की योजनाओं का लाभ एवं पंचायत की गतिविधियाँ वंचित वर्ग के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा न होकर प्रभावशाली वर्ग द्वारा किया जाता है जिसका मूल कारण अशिक्षा, पंचायत के कार्यों के प्रति अरूचि एवं जागरूकता की कमी है। ग्राम पंचायत की गतिविधियों में वंचित वर्ग के युवाओं की सक्रिय सहभागिता बहुत ही निम्न है जिसका कारण पंचायत की कार्यप्रणाली लोकतांत्रिक ढंग से न होकर प्रभावशाली वर्ग के द्वारा अपनी सुविधानुसार किया जाता है तथा वंचित वर्ग को पंचायत की कार्यप्रणालियों से दूर रखा जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन 1: ग्राम पंचायत रूपाखेड़ी (उज्जैन)

यह पंचायत अनुसूचित जाति बाहुल्य क्षेत्र है लेकिन चक्रानुक्रम आरक्षण के कारण सरपंच का पद अनारक्षित है। इस पंचायत में परम्परागत जातीय संरचना का स्वरूप देखने को मिला है जहाँ जाति आधारित सामाजिक व्यवस्था का प्रभाव पंचायती राज संस्थाओं पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सांसद आदर्श ग्राम होने के बावजूद भी विकास की दृष्टि से अनुसूचित जाति की बस्तियाँ अत्यधिक पिछड़ी हुई हैं। ग्राम पंचायत में उच्च वर्ग एवं वंचित वर्ग (अनुसूचित जाति) की बस्तियों में मूलभूत अवसंरचना की दृष्टि से असमानता को देखा जा सकता है। ग्राम पंचायत में सामान्य वर्ग के प्रभावशाली व्यक्ति के सरपंच होने के कारण अनुसूचित जाति के निर्वाचित प्रतिनिधियों की निष्क्रियता एवं प्रभावहीनता देखने को मिलती है जिसमें इस वर्ग की ग्राम पंचायत की बैठकों में सहभागिता निष्क्रिय है जिसका मूल कारण इनकी मांगों को अनदेखा किया जाना एवं सरपंच का प्रभुत्व होना है। इस कारण वंचित वर्ग पंचायती राज संस्थाओं के प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाने में असफल हैं। साथ ही वंचित वर्ग मूलभूत सुविधाओं एवं अधिकारों से दूर है जिससे इनके सशक्तिकरण में बाधा उत्पन्न हो रही है।

वैयक्तिक अध्ययन 2: ग्राम पंचायत खजुरी (बड़वानी)

यह एक अनुसूचित क्षेत्र पंचायत होने के साथ एक सांसद आदर्श ग्राम भी है। इस पंचायत में जनजातीय नेतृत्व का एक नया आयाम देखने को मिलता है जो पंचायती राज संस्थाओं के प्रति अपने दायित्वों एवं कर्त्तव्यों का निर्वहन ईमानदारीपूर्वक कर रहा है। पंचायत की बैठकों में सभी पंचायत प्रतिनिधियों की सक्रिय सहभागिता है तथा निर्णय प्रक्रिया में सर्वसहमति रहती है। सांसद आदर्श ग्राम के अंतर्गत प्राप्त निधियों के उपयोग से पंचायत में आधारभूत अवसंरचना का निर्माण हुआ। इस पंचायत में सांसद और पंचायती राज संस्थाओं में बेहतर समन्वय के कारण यह पंचायत एक आदर्श पंचायत के रूप में अपना स्थान बना रहा है। इस पंचायत में पंचायत द्वारा सामुदायिक भवन, बच्चों के लिए खेल मैदान, जनजातीय छात्रों के लिए छात्रावास, आजीविका मिशन के अंतर्गत सेनेटरी नैपकीन निर्माण परियोजना, मनरेगा का संचालन, हितग्राहीमूलक योजनाओं का क्रियान्वयन पारदर्शी ढंग से किया जा रहा है। इस पंचायत में महिला सशक्तीकरण और जनजातीय समुदाय का विकास स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है।

वैयक्तिक अध्ययन 3: ग्राम पंचायत सनगांव (बड़वानी)

सनगांव ग्राम पंचायत की 31.13 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जनजाति एवं 63.36 प्रतिशत जनसंख्या सामान्य एवं अन्य पिछड़ा वर्ग की है। यह पंचायत एक अनुसूचित क्षेत्र पंचायत है। इस पंचायत में सरपंच पद पर जनजातीय महिला है तथा उपसरपंच पद पर पिछड़े वर्ग का प्रभावशाली व्यक्ति है। अध्ययन क्षेत्र में निरीक्षण के दौरान यह तथ्य उभरकर सामने आया कि सरपंच पद पर नियुक्त जनजातीय महिला एक प्राक्सी सरपंच है तथा उपसरपंच का पंचायती राज संस्थाओं की कार्यप्रणाली पर पूर्ण नियंत्रण है। पंचायत में जातीय एवं शक्ति राजनीति का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इसके कारण पंचायती राज संस्थाओं तथा शासन की हितग्राहीमूलक योजनाओं में अनियमितता स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। पंचायत क्षेत्र में आजीविका मिशन के अंतर्गत संचालित स्वयं सहायता समूहों में अन्य पिछड़े वर्ग की महिलाओं की सहभागिता सर्वाधिक है। वहीं दूसरी ओर इन समूहों में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सहभागिता बहुत ही निम्न है। इसके साथ ही जनजातीय बस्तियों तथा

गैर-अनुसूचित जनजाति वर्ग की बस्तियों की आधारभूत अवसंरचना एवं सुविधाओं में अंतर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इस पंचायत में शासन की नीतियाँ भी कहीं न कहीं अनुसूचित जनजाति के मोहल्ले की वास्तविक स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं। चर्चा के दौरान यह स्पष्ट हुआ है कि शासन द्वारा ग्राम पंचायत से जो विस्तृत परियोजना प्रतिवेदन (डीपीआर) मंगाई गई थी, उसमें जनजातीय बस्तियों के समस्त परियोजनाओं को निरस्त कर दिया गया जबकि गैर-अनुसूचित जनजाति वर्ग के बस्तियों की गौण परियोजनाओं को स्वीकृति प्रदान की गई। इसका मूल कारण जनजातीय बस्तियों के डीपीआर का वित्तीय बजट अधिक था, शासन द्वारा मात्र कम बजट की परियोजनाओं को ही स्वीकृति प्रदान की गई।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः स्थानीय नेतृत्व एवं जनसहभागिता में उभरती प्रवृत्तियों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि शासन द्वारा विकास की प्रमुख योजनाओं एवं अधिनियमों का सकारात्मक प्रभाव पंचायती राज संस्थाओं पर पड़ रहा है। इन योजनाओं ने पंचायती राज संस्थाओं के प्रति जागरूकता, पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व में वृद्धि की है। 73वें संविधान संशोधन के उपरांत पंचायत राज संस्थाओं में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिलाओं की सहभागिता का स्तर मध्यम है। ग्रामसभा की बैठकों में शिक्षित युवाओं एवं सिविल सोसाइटी की सक्रियता एवं सहभागिता पंचायती राज संस्थाओं के प्रति निम्न स्तर की है। विकास कार्यक्रमों एवं शासकीय योजनाओं में पात्र हितग्राहियों में जागरूकता एवं योजनाओं की जानकारी के अभाव के कारण पंचायत प्रतिनिधियों एवं कर्मचारियों के द्वारा हितग्राहियों का चयन मानक के आधार पर न होकर पंचायत में प्रभाव की स्थिति एवं राजनीतिक कारणों से मनमाने तरीके से किया जाता है। पंचायत द्वारा प्रदत्त शासन की योजनाओं का लाभ एवं पंचायत की गतिविधियाँ वंचित वर्ग के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा न होकर प्रभावशाली वर्ग द्वारा किया जाता है जिसका मूल कारण अशिक्षा, पंचायत के कार्यों के प्रति अरूचि एवं जागरूकता की कमी है। ग्राम पंचायत की गतिविधियों में वंचित वर्ग के युवाओं की सक्रिय सहभागिता बहुत ही निम्न है। इसका कारण पंचायत की कार्यप्रणाली का संचालन लोकतांत्रिक ढंग से न होकर प्रभावशाली वर्ग के द्वारा अपनी सुविधानुसार किया जाता है तथा वंचित वर्ग को पंचायत की कार्यप्रणालियों से दूर रखा जाता है।

वहीं दूसरी ओर कुछ पंचायतों में वंचित वर्ग के प्रतिनिधि अपने दायित्व एवं कर्तव्यों का निर्वहन कर ग्रामीण विकास को एक नया आयाम देने का भी प्रयास कर रहे हैं।

सन्दर्भ

बर्थवाल, सी.पी., (2003). 'अंडरस्टैंडिंग लोकल सेल्फ गवर्नमेण्ट', भारत बुक सेन्टर, लखनऊ।

बेहर, अमिताभ एवं योगेश कुमार (2002). 'डिसेन्ट्रलाइजेशन इन मध्यप्रदेश, इंडिया : फ्रॉम पंचायती राज टू ग्राम स्वराज (1995-2001)', ओवरसीज डेवलपमेंट इंस्टिट्यूट, लंदन। http://www.odi.org.uk/resources/docs/2702.pdf (Viewed on-01/07/2011)

बेहर, अमिताभ (2003). एक्सपेरिमेंट विथ डॉयरेक्ट डेमोक्रेसीः टाइम फॉर रिअप्रेजल, इकॉनामिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, वॉल्यूम, 38, नं. 20, मई 17-23।

भारत का संविधान, अनुच्छेद 40

भट्ट, आशीष (2002). 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और उभरता जनजातीय नेतृत्व', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

कटारिया, सुरेन्द्र (2011). 'लोक प्रशासनः सिद्धांत एवं व्यवहार,' नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर।

कोठारी, रजनी (1970).'पॉलिटिक्स इन इण्डिया', ओरिएण्ट लॉगमेन, नई दिल्ली।

मैनर, जेम्स (2001). मध्य प्रदेश एक्सपेरिमेंट विथ डॉयरेक्ट डेमोक्रेसी, इकॉनामिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, वॉल्यूम, 36, नं. 9, मार्च 3-9।

मिश्रा, श्वेता एवं प्रदीप कुमार, (2010): 'लोकतंत्रीकरण, विकेन्द्रीकरण और सामाजिक सुरक्षा, सं. मनोज सिन्हा, प्रशासन एवं लोकनीति, ओरिएंट ब्लैकस्वान प्रा. लि., नई दिल्ली।

सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह (2007): 'एक्सपेरिमेंट ऑफ डॉयरेक्ट डेमोक्रेसी,' रावत पब्लिकेशंस जयपुर।

बैगा महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तनः पूर्वी मध्य प्रदेश का अध्ययन

डॉ. भावना ज्योतिषी

सारांश

बैगा महिलाएँ सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और उनकी कार्य सहभागिता गैर-आदिवासी महिलाओं की तुलना में अधिक होती है, हालांकि तेजी से घटते वन संसाधनों और आगामी सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन से बैगा महिलाओं का जीवन दिन-प्रतिदिन चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है। विज्ञान और तकनीक के इस युग में जीवनशैली तेजी से बदल रही है, लेकिन बैगा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। सुदूर क्षेत्रों में निवास के कारण बैगा जनजातियों में निम्न साक्षरता स्तर, निम्न स्वास्थ्य स्तर एवं न्यून पोषण की स्थिति रहती है और वैश्वीकरण के बदलते युग में कहीं न कहीं बैगा महिलाओ को अपनी पारम्परिक जीवनशैली को छोड़ने के लिए भी मजबूर होना पड़ रहा है तथा इन्हें गैर-आदिवासी संकेन्द्रित क्षेत्रों के आसपास भी रहना पड़ता है। इसी प्रयास में यह शोध पत्र पूर्वी मध्य प्रदेश की बैगा महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तनों को समझने का एक प्रयास है।

परिचय

मध्य प्रदेश में 43 अनुसूचित जनजाति समूह निवास करते हैं जिनमें से तीन विशेष रुप से कमजोर जनजातीय समूह (पीवीटीजी) के रुप में बैगा, भारिया एवं सहरिया को घोषित किया गया है। इन तीनों में बैगा जनजाति सबसे आदिम जनजाति है। यह जनजाति आज अपनी निम्न साक्षरता और कम होती जनसंख्या के कारण संकट का सामना कर रही है। बैगा जनजाति मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग में सतपुड़ा एवं मैकल पहाड़ियों के मध्य निवास करती है। बैगा जनजाति आज भी आदिम कृषि तकनीकों पर निर्भर है साथ ही बाँस से विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का निर्माण करके यह जनजाति आस-पास के साप्ताहिक बाजारों में बेचती है। अधिकांश बैगा संकेन्द्रित क्षेत्रों में आज भी कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग नहीं किया जाता है। आदिम कृषि प्रथाओं पर निर्भरता, खाद्य आपूर्ति की अनिश्चितता, अवसंरचनात्मक

अभाव एवं स्वास्थ्य और पोषण सम्बन्धी समस्याओं आदि के कारण इस समुदाय में विविध प्रकार की समस्याएँ व्याप्त हैं। इनके द्वारा अपर्याप्त भोजन के सेवन अथवा गंभीर एवं बार-बार होने वाले संक्रमण अथवा दोनों के संयोजन से इनमें कई प्रकार की स्वास्थ्य और पोषण सम्बन्धी समस्याएँ विद्यमान रहती हैं। इस समुदाय में यह स्थिति पर्याप्त भोजन की अनुपलब्धता, माताओं और बच्चों की देखभाल में कमी, अपर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं और अस्वास्थ्यकर वातावरण यानी खुले मैदान में शौच और जल निकासी प्रणाली की अनुचित या गैर-उपलब्धता से भी जुड़ी हुई है जिसके परिणामस्वरुप इनमें सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक स्तर में अत्यधिक पिछड़ापन व्याप्त है (चकमा एवं अन्य, 2014, पृ० 1)।

इन क्षेत्रों में जनजातीय महिलाएँ विशेषकर बैगा महिलाएँ आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण स्थान पर हैं जो आमतौर पर उनकी उच्च स्थिति एवं महत्व को दर्शाता है। ये महिलाएँ कुछ मामलों में पुरुषों से अधिक कार्य करती हैं। उन्हें अपने कार्य क्षेत्र में अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं। वे अपने कार्य के प्रति जिम्मेदार भी होती हैं और परिवार के लिए कृषि उत्पादन और खपत के बीच उनमें हुए लाभों में भी हिस्सेदार होती हैं। उनकी इस स्वयं की धारणा को पुरूष भी स्वीकार करते हैं कि महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों में प्रमुख भूमिका होती है और इस कारण वह उनका सम्मान भी करते हैं। पितृसत्ता की अवधारणा, जो लगभग सभी समाजों में व्याप्त है, इस समुदाय में उन्हें ईर्ष्या के बजाय सम्मान दिया जाता है। इस महत्वपूर्ण तथ्य के बावजूद भी जनजातीय महिलाएँ विशेषकर, बैगा महिलाएँ बेटी, बहन, पत्नी या माँ के रूप में जीवन भर इस चक्र में चलती रहती हैं। इन सब परिस्थितियों और अधिक कार्य सहभागिता के बावजूद भी बैगा महिलाओं का जीवन अधिक संकटपूर्ण एवं सामाजिक-आर्थिक बदलावों तथा तेजी से घटते वन संसाधनों के कारण अधिक चुनौतीपूर्ण बनता जा रहा है। उप-शहरी गृहणियों की तुलना में अधिक शक्ति और स्वतंत्रता प्राप्त होने के बावजूद भी बैगा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति अन्य समुदायों की महिलाओं की अपेक्षा अधिक निम्न है (भसीन, 2007)। इसके बाद भी वे प्रकृति से निकटता से सामंजस्य स्थापित करते हुए अपना जीवन निर्वाह कर रही हैं।

बैगा महिलाओं को उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति एवं क्षमता के कारण संस्थागत विशेषाधिकार भी प्रदान किए गए हैं। सामान्यत: उन्हें घरेलू स्तर पर अनदेखा नहीं किया जाता लेकिन राजनीतिक और धार्मिक विषयों में उन्हें उचित श्रेय एवं महत्व नहीं दिया जाता है। समाज की संरचना को आकार देने और बनाए रखने के लिए वे अदृश्य हाथों की तरह कार्य करती हैं (भसीन, 2007)। बैगा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। गैर-जनजातीय महिलाओं की तुलना में बैगा महिलाओं की कार्य सहभागिता दर अधिक रहती है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य पूर्वी मध्य प्रदेश के बैगा संकेन्द्रित क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रकृति और उसका बैगा महिलाओं पर पड़े प्रभावों को समझना है। इस हेतु पूर्वी मध्यप्रदेश के शहडोल, मण्डला एवं डिण्डोरी जिले को अध्ययन हेतु चिन्हित किया गया है। इन जिलों के चयन का आधार बैगा जनसंख्या संकेन्द्रित होना है। इस प्रकार से इन जिलों में बैगा महिलाओं को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार प्रत्येक जिले से दो बैगा संकेन्द्रित गाँवों का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के आधार पर किया गया है। उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि द्वारा केवल उन्हीं गाँवों को सम्मिलित किया गया है जिसकी जनसंख्या 500 से अधिक तथा बैगा जनजाति जनसंख्या का प्रतिशत 60 से अधिक था। प्रत्येक सर्वेक्षित गाँव से 40 परिवारों को अध्ययन हेतु चयनित किया गया। इस प्रकार छः गाँवों से 240 उत्तरदाता परिवार अध्ययन में सम्मिलित किए गए। इस प्रकार प्रतिचयन का कुल आकार 240 था। यह शोध आलेख पूर्वी मध्य प्रदेश की बैगा महिलाओं से साक्षात्कार, समूह चर्चा एवं अवलोकन के आधार पर संकलित प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है।

शैक्षणिक स्थिति

साक्षरता मानव विकास का एक महत्त्वपूर्ण घटक है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अपनी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के शिखर को प्राप्त करता है। शिक्षा के प्रसार द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं के प्रति एक सकारात्मक व्यक्तिगत समझ का निर्माण होता है। राज्य में मानव विकास की दृष्टि से शिक्षा में सुधार के प्रयास

किये गये हैं। फलस्वरूप राज्य में साक्षरता, स्कूलों में दाखिला और सभी बच्चों को स्कूली शिक्षा देने में प्रगति हुई है, किन्तु इस समुदाय की साक्षरता, अन्य समुदाय की तुलना में अत्यधिक पिछड़ी हुई है। बैगा परिवार की शैक्षणिक स्थिति का तुलनात्मक वर्गीकरण तालिका क्रमांक 1 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 1: परिवार की सदस्य संख्या, साक्षरता एवं शैक्षणिक स्थिति (प्रतिशत में)

क्र. सं.	**परिवार की सदस्य संख्या एवं शैक्षणिक स्थिति**	**महिला**	**पुरुष**	**योग**	**अन्तराल**
1	कुल सदस्य (संख्या में)	542	505	1047	-
2	06 वर्ष से कम आयु (संख्या में)	63	60	123	-
3	साक्षरता दर	55.74	72.58	64.1	(-)16.84
	शैक्षणिक स्थिति				
1	मात्र साक्षर	04.49	03.71	04.10	(+) 0.78
2	प्राथमिक स्तर तक शिक्षित	43.44	42.41	42.90	(+)01.03

3	माध्यमिक स्तर तक शिक्षित	32.58	28.79	30.68	(+)03.79
4	उच्च माध्यमिक स्तर तक शिक्षित	13.48	18.57	16.02	(-)05.09
5	उच्चतर माध्यमिक स्तर तक शिक्षित	03.74	04.95	04.34	(-)01.21
6	स्नातक तक शिक्षित	01.49	00.92	01.20	(+)00.57
7	स्नातकोत्तर तक शिक्षित	00.74	00.61	00.67	(+)00.13

स्रोतः यह आंकड़े सर्वेक्षित 240 बैगा परिवारों से सम्बंधित हैं। प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)।

इस प्रकार साक्षरता विश्लेषण से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर तक बैगा जनजाति के पुरुषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता अधिक है, वहीं इस जनजाति की महिला एवं पुरुष साक्षरता दर में अत्यधिक असमानता है और पुरुषों की तुलना में महिलाओं की साक्षरता दर की स्थिति अत्यधिक निम्न है। इसका मुख्य कारण इस समुदाय की महिलाओं में शैक्षणिक अभिरूचि का अभाव है। यद्यपि इस समुदाय की प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के स्तर में लगभग समानता है, किन्तु उच्च एवं उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने की स्थिति में महिलाओं का प्रतिशत कम है। सर्वेक्षित क्षेत्र में समूह चर्चा के दौरान यह पाया गया कि वर्तमान में बैगा परिवार अपने बच्चों की शिक्षा पर विशेष महत्त्व देने लगे हैं। सरकारी योजनाओं से मिलने वाले लाभ के कारण ये अपने बच्चों को विद्यालयों में प्रवेश दिलाते हैं साथ ही इनके बच्चों को अन्य शैक्षणिक सुविधाएँ जैसे गणवेश, छात्रवृत्ति, पुस्तकें एवं साइकिल इत्यादि प्राप्त होती हैं।

मकान का प्रकार एवं स्थिति

जनजातीय समुदाय सदियों से ऐसे स्थानों में रहते आये हैं जो अन्य जातियों के निवास स्थानों से दूर और एकान्त में हैं (उप्रेती, 1970, पृ० 151)। इनके निवास स्थान की अपनी कई विशेषताएँ होती हैं। बैगा जनजाति के घर आमतौर पर एक पंक्ति का हिस्सा होते हैं और दो या तीन फीट चौड़े एक संकीर्ण मार्ग द्वारा अपने पड़ोसियों से अलग होते हैं (एल्विन, 2007, पृ० 29)। ये अपने मकानों का निर्माण प्राकृतिक संसाधनों द्वारा करते हैं। इनके मकान प्रायः कच्चे, घास-फूस एवं पत्थरों से निर्मित होते हैं। मकान के प्रकार का वर्गीकरण तालिका क्रमांक 2 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 2: मकान का प्रकार

क्र. सं.	मकान का प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कच्चा	173	72.1
2	पक्का	57	23.7
3	अर्द्धपक्का	10	04.2
	योग	240	100.0

योग स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

इस प्रकार स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश परिवारों के मकान कच्चे हैं। आमतौर पर ग्रामीण परिवेश के मकान कच्चे, घास-फूस एवं बाँस से निर्मित होते हैं। बैगा समुदाय के मकान सामान्य रूप से अन्य जनजातीय रहवास से अलग होते हैं। इन क्षेत्रों में कुछ परिवारों के मकान पक्के एवं अर्द्धपक्के हैं। इनमें से अधिकांश लोगों को प्रधानमंत्री आवास योजना के अन्तर्गत मकान प्राप्त हुए हैं।

मकान की स्थिति के वर्गीकरण को तालिका क्रमांक 3 में दर्शाया गया है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मकान की स्थिति के आधार पर क्षेत्र में अधिकांशतः बैगा परिवारों के पास पैतृक एवं स्वयं के निर्मित मकान हैं। वहीं सरकारी योजनाओं के लाभ

द्वारा इनके जीवन स्तर को उन्नत बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं जिससे यह समुदाय विकास की ओर अग्रसर हो सकें।

तालिका क्रमांक: मकान की स्थिति

क्र. सं.	मकान की स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पैतृक	96	40.0
2	स्वयं बनाया	79	32.9
3	प्रधानमंत्री आवास योजना	51	21.3
4	सरकारी पट्टा	14	05.8
	योग	240	100.0

स्रोत: प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)।

स्वच्छता प्रबन्धन

किसी भी परिवार के स्वास्थ्य के लिए स्वच्छता अनिवार्य आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों; विशेषकर जनजातीय क्षेत्रों में बेहतर स्वास्थ्य एवं रोगरहित वातावरण में रहने के लिए मकान में शौचालय एवं जल निकासी व्यवस्था अनिवार्य है। इस हेतु भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय समग्र स्वच्छता अभियान कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहा है। अध्ययन क्षेत्र में बैगा परिवारों की स्वच्छता के प्रति चेतना का वर्गीकरण तालिका क्रमांक 4 में दर्शाया गया है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि इन क्षेत्रों के घरों में शौचालय सुविधा की उपलब्धता तो है, किन्तु जल की पर्याप्त उपलब्धता नहीं है , जिसके कारण ये परिवार इस सुविधा का उपयोग नहीं कर पाते हैं।

तालिका क्रमांक 4: शौचालय व्यवस्था

क्र. सं.	शौचालय व्यवस्था	आवृत्ति	प्रतिशत
1	खुले में	100	41.7
2	घर में	133	55.4
3	सार्वजनिक	07	02.9
	योग	240	100.0

जल प्रदाय व्यवस्था

स्वच्छ जल, मानव जीवन के लिए आवश्यक है। स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ परिवार को जन्म देता है। स्वस्थ परिवारों से ही स्वस्थ समाज का निर्माण होता है इसलिए स्वच्छ जल की आवश्यकता अपरिहार्य है। जनजातीय क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल की समस्या हमेशा से विद्यमान रही है। इन क्षेत्रों में लोगों की बसाहट काफी दूर तक रहती है। आमतौर पर ये लोग पेयजल के सार्वजनिक स्रोतों यथा- तालाब, नदी एवं कुएँ का उपयोग करते हैं। शासन द्वारा इन क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल प्रदान करने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। मध्य प्रदेश में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत निर्मल नीर योजना क्रियान्वित की जा रही है, जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को रोजगार के साधन उपलब्ध कराने के साथ ही स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना है। जल प्रदाय व्यवस्था का वर्गीकरण तालिका क्रमांक 5 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 5: जल प्रदाय व्यवस्था

क्र. सं.	व्यवस्था	आवृत्ति	प्रतिशत
1	निजी स्रोत	29	12.1
2	सार्वजनिक स्रोत	211	87.9
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 87.9 प्रतिशत बैगा परिवार पेयजल के लिए सार्वजनिक स्रोतों जैसे हैण्डपम्प, कुआँ एवं झिरिया के जल का उपयोग कर रहे हैं। 12.1 प्रतिशत परिवार पेयजल के लिए निजी स्रोतों यथा- हैण्डपम्प एवं नल का उपयोग कर रहे हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पूर्व में जहाँ इन क्षेत्रों में पेयजल के पारम्परिक स्रोतों यथा- तालाब एवं नदियों का उपयोग अधिक होता था, वहीं वर्तमान में यह समुदाय पेयजल हेतु हैण्डपम्प, कुओं एवं नल का उपयोग करने लगे हैं। आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों ने पेयजल के लिए निजी साधनों की व्यवस्था भी की है।

ईंधन स्रोत

ग्रामीण समुदाय ईंधन के रूप में भोजन पकाने के लिए परम्परागत स्रोत अर्थात् वनों से प्राप्त जलाऊ लकड़ी का उपयोग करते रहे हैं। वन संसाधनों से प्राप्त ईंधन के स्रोत की यह उपलब्धता परम्परागत है। इन परिवारों के लिए यह ईंधन स्रोत की प्राप्ति सहज एवं सरल है। ईंधन स्रोत के वर्गीकरण को तालिका क्रमांक 6 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 6: ईंधन का स्रोत

क्र. सं.	स्रोत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	जलाऊ लकड़ी	197	82.1
2	एल.पी.जी.	43	17.9
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि ईंधन स्रोत के अन्तर्गत यह परिवार आज भी जलाऊ लकड़ी का उपयोग करते हैं। इन समुदायों में भोजन पकाने के लिए एल.पी.जी. के उपयोग न करने का कारण इनकी निम्न आर्थिक स्थिति है। वहीं दूसरी ओर क्षेत्र के

कुछ परिवारों में उज्जवला योजना के द्वारा प्राप्त एल.पी.जी. गैस का उपयोग किया जा रहा है।

संसाधन उपलब्धता

मानव विकास के लिए पूंजी एवं पूंजीगत संसाधनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। पूंजी वह अनिवार्य आवश्यकता है जो जरूरतमंद और गरीबों की खाद्य-असुरक्षा, सामाजिक पिछड़ेपन, आजीविका संघर्ष, आकस्मिक संकट एवं गरीबी दूर करने में सहायक होती है। पूंजी एवं संसाधनों की उपलब्धता परिवार की सामाजिक-आर्थिक स्थिति की सूचक होती है। अधिकांश परिवारों में संसाधनों की उपलब्धता का निर्धारण मवेशियों की संख्या के कारण है, क्योंकि इनमें पारम्परिक रुप से मवेशी पालन की प्रथा रही है। बैगा परिवार में संसाधनों की उपलब्धता के वर्गीकरण को तालिका क्रमांक 7 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 7: परिवार में संसाधनों की उपलब्धता

क्र.सं.	संसाधन उपलब्धता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	गाय	66	27.5
2	बैल	137	57.0
3	भैंस	06	02.5
4	बकरा/बकरी	37	15.4
5	कुआँ	01	00.4
6	साइकिल	48	20.0
7	मोटरसाइकिल	23	09.6
8	टेलीविजन	29	12.0
9	मोबाइल	77	32.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि क्षेत्र में अधिकांश बैगा परिवारों के पास संसाधनों का अभाव है | उनके पास उपलब्ध संसाधनों में मवेशी ही प्रमुख होते हैं। वहीं कुछ परिवार टेलीविजन एवं मोबाइल का उपयोग कर रहे हैं। अधिकांश बैगा परिवारों में जीवन निर्वाह के साधनों का अभाव होता है जिससे वे टेलीविजन, मोटरसाइकिल इत्यादि संसाधनों का उपयोग सीमित रूप से करते हैं, वहीं संपन्न बैगा परिवारों द्वारा इन सुविधाओं का उपयोग किया जाता है।

परिवार की आय

समाज में सामाजिक-आर्थिक स्थिति के निर्धारण में आय का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बैगा परिवारो में आय के संदर्भ में अधिकतर निम्न स्थिति पायी गयी है, इनमें सीमित संसाधनों का उपयोग एवं आधुनिक साधनों के अभाव में अपनी जीविका का निर्वहन करना मुख्य है। अध्ययन क्षेत्र के बैगा परिवारों की कुल वार्षिक आय का वर्गीकरण तालिका क्रमांक 8 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 8: परिवार की कुल वार्षिक आय (रुपये में)

क्र. सं.	मूल्य (रुपये में)	आवृत्ति	प्रतिशत
1	10000 रुपये से कम	09	03.8
2	10001 से 25000 रुपये	102	42.5
3	25001 से 50000 रुपये	103	47.1
4	50001 से 100000 रुपये	05	02.1
5	रुपये 100000 से अधिक	11	04.6
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि बैगा परिवार की कुल आय के आधार पर वर्गीकरण में 3.8 प्रतिशत परिवार के पास 10,000 रुपये से कम, 42.5 प्रतिशत के पास 10,001 से 25,000 रुपये तक, 47.1 प्रतिशत के पास 25,001 से 50,000 रुपये तक, 2.1 प्रतिशत के पास 50,001 से एक लाख रुपये तथा 4.6 प्रतिशत परिवारों के पास एक लाख रुपये से अधिक परिवार की आय है। परिवार की इस आय में विभिन्न स्रोतों का योगदान होता है जिन परिवारों में कार्यशील सदस्य होते हैं वे कृषि कार्य, कृषि मजदूरी, निर्माण कार्य, मनरेगा, वन उपज का संग्रहण और बिक्री तथा पलायन आदि से आय प्राप्त करते हैं। लेकिन जिन परिवारों में अकार्यशील सदस्य ज्यादा होते हैं वहाँ स्थिति इसके विपरीत होती है। अतः परिवार की आय के सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि बैगा परिवारों में आर्थिक स्थिति में बहुत असमानता व्याप्त है। अधिकांश परिवारों की वार्षिक आय मात्र मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने में भी सक्षम नहीं है।

बैगा महिलाओं का जमीन पर स्वामित्व

बैगा महिला के पति की संपत्ति पर अधिकार उसी घर में रहने तक होता है | महिला के पुनर्विवाह पश्चात् उसका पहले घर की संपत्ति पर से अधिकार समाप्त हो जाता है, किन्तु एक विधवा का अपने पति की संपत्ति पर अधिकार होता है (एल्विन, 2007, पृ० 78)। बैगा परिवारों में जमीन पुरुषों के नाम पर ही होती है, इसका कारण यह है कि बैगा महिलाओं को विवाह एवं विवाह-विच्छेद सम्बन्धी स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है जिसमें वे स्वेच्छापूर्वक अपने जीवनयापन का निर्णय कर सकती हैं। ऐसी परिस्थिति में किसी भी परिवार में जमीन का अधिकार महिला के नाम पर नहीं किया जाता है, क्योंकि वर्तमान में बैगा परिवार की आजीविका का प्रमुख स्रोत कृषि है, और वही किसी महिला के दूसरे विवाह के पश्चात् किसी अन्य परिवार का आर्थिक स्रोत बन जाए जिससे पहले परिवार की परिस्थितियाँ प्रतिकूल हो सकती हैं। बैगा महिलाओं के जमीन पर स्वामित्व को तालिका क्रमांक 9 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 9: बैगा महिलाओं का जमीन पर स्वामित्व

क्र. सं.	**जमीन पर स्वामित्व**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1	हाँ	21	08.8
2	नहीं	219	91.2
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 8.8 प्रतिशत बैगा परिवार में जमीन का स्वामित्व अधिकार महिलाओं के नाम पर है वहीं 91.2 प्रतिशत बैगा परिवारों में जमीन का स्वामित्व अधिकार परिवार के मुखिया पुरूष का है। सामान्यतः बैगा परिवारों में जमीन महिलाओं के नाम पर नहीं की जाती है। मात्र कुछ परिवारों में ही जमीन का स्वामित्व महिलाओं के पास है। इसका कारण महिला सदस्य का परिवार का मुखिया होना है।

पारिवारिक समस्या का समाधान

बैगा जनजाति में परिवारों में मुख्यतः एकल परिवार प्रणाली अपनाई जाती है जिसके कारण पारिवारिक मतभेद या अन्य किसी समस्या के उत्पन्न होने पर समाधान के लिए बैगा परिवार की महिलाएँ अपने माता-पिता, घर के बड़े सदस्यों में से या पंच-सरपंच के द्वारा अपनी समस्या का समाधान करने के लिए सहायता लेती है, अन्यथा किसी की सहायता नहीं लेती है वे स्वयं ही पारिवारिक समस्याओं का समाधान कर लेती है। पारिवारिक समस्या के समाधान को तालिका क्रमांक 10 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 10: पारिवारिक समस्या का समाधान

क्र. सं.	समस्या का समाधान	आवृत्ति	प्रतिशत
1	घर के बड़े सदस्य से	87	36.2
2	अपने माता-पिता से	04	01.7
3	पंच-सरपंच से	116	48.3
4	किसी से नहीं	33	13.8
	योग	240	100.0

स्रोत: प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 48.3 प्रतिशत बैगा परिवार की महिलाएँ अपनी पारिवारिक समस्या के समाधान के लिए पंच-सरपंच से निवारण कराती हैं साथ ही समस्याओं के समाधान में पारम्परिक पंचायत (मुखिया) की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है और वही उस पंचायत की अध्यक्षता करता है। पारम्परिक मुखिया द्वारा ही उनके विवाह एवं अन्य संस्कारों को सम्पन्न किया जाता है इसी कारण बैगा परिवारों में पारिवारिक समस्या के समाधान के लिए आधुनिक पंचायतों के साथ-साथ पारम्परिक पंचायतों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वहीं 36.2 प्रतिशत बैगा परिवार की महिलाएँ अपने घर के बड़े सदस्यों के निर्णय को मानती हैं, तथा 13.8 प्रतिशत बैगा परिवार की महिलाएँ किसी से भी सहायता नहीं लेती है। वे पारिवारिक समस्याओं को स्वयं आपस में सुलझा लेती है या फिर किसी से कुछ नहीं कहती हैं। 1.7 प्रतिशत बैगा परिवार की महिलाएँ अपने माता-पिता से पारिवारिक समस्याओं में सलाह लेती हैं।

आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित निर्णय में महिलाओं की सहमति

ग्रामीण समाज में परिवार की अर्थव्यवस्था पितृप्रधान या मुखिया के निर्णय द्वारा संचालित होती है लेकिन बैगा परिवारों में ऐसी व्यवस्था नहीं होती है | उनमें

आर्थिक क्रियाकलाप से सम्बन्धित निर्णयों में केवल पुरुष वर्ग या मुखिया ही भागीदार हों ऐसा नहीं होता। इनमें महिला एवं पुरुष दोनों वर्ग की बराबर भागीदारी होती है और बैगा परिवार की महिलाएँ एवं पुरुष दोनों मिलकर कृषि कार्य, मजदूरी, पलायन एवं वन संसाधनों का संग्रहण जैसे कार्यों का निर्णय परस्पर सहयोग से करते हैं। बैगा परिवार में महिलाओं की आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित निर्णय में सहमति को तालिका क्रमांक 11 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 11: आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित निर्णय में महिलाओं की सहमति

क्र. सं.	महिलाओं की सहमति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	202	84.2
2	नहीं	38	15.8
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 84.2 प्रतिशत बैगा परिवार में महिलाओं की आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित निर्णय में सहमति ली जाती है, आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित कार्यो में मजदूरी, पलायन से सम्बन्धित कार्य, समय एवं स्थान के निर्णय से है, जो परिवार में बैगा महिलाओं से परस्पर सहयोग एवं सम्मान की दृष्टि से लिये जाते हैं, वहीं 15.8 प्रतिशत बैगा परिवार की महिलाओं को पुरुष वर्ग द्वारा लिया गया निर्णय ही मानना पड़ता है।

चुनाव में मतदान जागरुकता

भारतीय लोकतंत्र प्रणाली में निष्पक्ष चुनाव का विशेष महत्व है और देश के समस्त जन समुदाय की इसमें भागीदारी होना अति आवश्यक है । अनुसूचित जनजातीय क्षेत्रों में विभिन्न संचार साधनों के माध्यम से चुनाव प्रक्रिया का व्यापक

प्रचार किया जाता है। यहाँ के क्षेत्रों में चुनाव में मतदान के प्रति जागरुकता देखने को मिली जिसमें यह पाया गया कि इतने सुदूर क्षेत्रों में निवास करने के बाद भी इन क्षेत्रों के बैगा आदिवासी समुदाय चुनाव में मतदान प्रक्रिया में भाग लेते हैं। चुनाव में मतदान प्रक्रिया में जागरुकता को तालिका क्रमांक 12 में दर्शाया गया है:

तालिका क्रमांक 12: चुनाव में मतदान जागरुकता

क्र. सं.	चुनाव में मतदान जागरुकता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	236	98.3
2	नहीं	04	01.7
	योग	240	100.0

स्रोत: प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 98.3 प्रतिशत बैगा परिवार में महिलाएँ एवं अन्य सदस्य चुनाव में मतदान करते हैं, जिससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि अध्ययन क्षेत्र में बैगा समुदाय द्वारा चुनाव में मतदान के प्रति जागरुकता है एवं वे अपने मताधिकार के प्रति सजग हैं | इसका कारण गाँवों में संचार माध्यमों यथा- मोबाइल, समाचार पत्र एवं टेलीविजन आदि के द्वारा चुनाव प्रक्रिया की महत्ता का आवश्यक प्रचार-प्रसार किया जाना है। वहीं चार बैगा परिवारों में मतदान में भाग नहीं लिया गया है, जिसका कारण एक परिवार को मतदान करने का समय नहीं मिला और तीन परिवारों का मतदाता सूची में नाम नहीं था।

ग्राम सभा

ग्राम सभा पंचायत राज व्यवस्था की सबसे छोटी परन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। ग्राम सभा की बैठक नियमित अंतराल से वर्ष में चार बार बुलाई जाती है। ग्राम पंचायत की मतदाता सूची में पंजीकृत सभी वयस्क मताधिकारी ग्राम सभा के सदस्य होते हैं। ग्राम सभा की बैठक की गणपूर्ति हेतू एक दशमांश सदस्यों की उपस्थिति

आवश्यक होती है। ऐसे एक दशमांश में एक तिहाई महिला सदस्यों का होना भी आवश्यक है (सिसोदिया, 2000, पृ० 136)। ग्राम सभा के बारे में जागरुकता को तालिका क्रमांक 13 में दर्शाया गया हैः

तालिका क्रमांक 13: ग्राम सभा के बारे में जागरुकता

क्र. सं.	जागरुकता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	237	98.8
2	नहीं	03	01.2
	योग	240	100.0

स्रोतः प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 98.8 प्रतिशत बैगा परिवार में महिलाएँ एवं अन्य सदस्य ग्राम सभा के बारे में जानते हैं | यह बैगा जनजातीय समुदाय के परिवारों में राजनीतिक जागरुकता का अच्छा संकेत है कि इस समुदाय में ग्राम सभा के कार्य एवं महत्व के बारे में जानकारी है | वहीं 1.2 प्रतिशत परिवार ग्राम सभा के बारे में नहीं जानते हैं।

ग्राम सभा की बैठकों में भागीदारी

मध्यप्रदेश शासन ने पंचायतों को स्थानीय स्व-शासन की स्वतंत्र इकाईयाँ बनाने के उद्देश्य से बहुविविध कार्यों, अधिकारों, कर्त्तव्यों एवं शक्तियों को पंचायतों को प्रदान किया है (सिसोदिया, 2000, पृ० 140)। त्रिस्तरीय पंचायत में ग्राम सभा के विकासात्मक कार्यों की समीक्षा एवं जानकारी नियमित बैठकों के द्वारा ही संचालित होती है। इसमें बैगा समुदाय की महिलाएँ अपनी भागीदारी निश्चित रुप से देती हैं एवं वे ग्राम सभा की बैठकों के बारे में जागरुक हैं वहीं कुछ महिलाएँ पारिवारिक उत्तरदायित्व के निर्वहन के कारण ग्रामसभा की बैठक में भागीदारी नहीं कर पाती हैं। ग्राम सभा की बैठकों में बैगा परिवार की महिलाओं की भागीदारी के वर्गीकरण को तालिका क्रमांक

14 में दर्शाया गया है:

तालिका क्रमांक 14: ग्राम सभा की बैठकों में भागीदारी

क्र. सं.	भागीदारी	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	186	77.5
2	नहीं	54	22.5
	योग	240	100.0

स्रोत: प्राथमिक समंकों के आधार पर (सर्वेक्षण 2018)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 77.6 प्रतिशत बैगा परिवार में महिलाएँ ग्राम सभा की बैठक में भाग लेती हैं, वहीं 22.4 प्रतिशत बैगा परिवार में महिलाएँ ग्राम सभा की बैठक में भाग नहीं लेती हैं। इस समुदाय की महिलाओं का ग्राम सभा की बैठकों में भाग नहीं लेने के कारणों में 20 प्रतिशत कृषि या मजदूरी कार्यो में व्यस्तता है जिसमें ये महिलाएँ अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए मेहनत मजदूरी करने गाँव या दूसरे शहरों में पलायन कर जाती हैं या घर के बड़े सदस्य बैठक में जाते हैं जिससे ये ग्राम सभा की बैठकों में भाग नहीं ले पाती हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः बैगा समुदाय में महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति के अन्तर्गत इन महिलाओं की साक्षरता स्थिति अत्यधिक दयनीय है। वर्तमान में इस समुदाय की आधारभूत संसाधनों तक पहुँच नाममात्र की है। परिवार की महिलाओं का जमीन पर स्वामित्व नहीं के बराबर है। आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित निर्णयों में अधिकांशतः बैगा परिवार की महिलाओं की सहभागिता होती है। राजनीतिक क्षेत्राधिकारों के संदर्भ में बैगा महिलाओं की चुनाव में मतदान जागरुकता शत-प्रतिशत पायी गयी किन्तु निर्वाचित प्रतिनिधि की भूमिका में सहभागिता का स्तर बहुत कम है। बैगा महिलाएँ निर्वाचित प्रतिनिधि का कार्यभार स्वयं संभालती हैं और कहीं-कहीं सहयोगी भूमिका उनके पति की भी होती है। निर्वाचित प्रतिनिधि चुने जाने

पर पुरुष वर्ग का व्यवहार सामान्य होता है। ग्राम सभा के महत्व के बारे में अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश महिलाओं में जागरुकता है, किन्तु कुछ महिलाएँ कृषि एवं मजदूरी के कार्यो में व्यस्तता के कारण ग्राम सभा की बैठकों में भागीदारी नहीं कर पाती हैं। इस समुदाय की महिलाओं में सामाजिक-आर्थिक स्थिति में नाममात्र के ही सुधार हुए हैं। 73वें संविधान संशोधन और पेसा अधिनियम द्वारा इन महिलाओं को प्रत्यक्ष लोकतंत्र से जोड़कर राजनीतिक प्रक्रिया का हिस्सा बना तो दिया गया है, लेकिन अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी एवं सुदूर क्षेत्रों में निवास करने के कारण आज भी पूरी तरह से बैगा महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक प्रक्रिया के जुड़ाव एवं अवसरों को प्राप्त करने में कमी पायी गयी है।

सन्दर्भ

भसीन, वीना (2007): 'स्टेट्स ऑफ ट्राइबल वूमेन इन इंडिया', Stud. Home Comm. Sci., Kamla Raj, 1(1), 1-16.

चकमा, टी., पी. मेश्राम, ए. कवीश्वर, पी. वी. राव एवं राकेश बाबू (2014): 'न्यूट्रिशनल स्टेट्स ऑफ बैगा ट्राइब ऑफ बैहर, डिस्ट्रिक्ट बालाघाट, मध्यप्रदेश', जर्नल ऑफ न्यूट्रिशन एण्ड फूड साइंस, रीजनल मेडिकल रिसर्च सेंटर फॉर ट्राइबल (ICMR) जबलपुर, मध्यप्रदेश, वॉ. 4, अंक 3।

एल्विन, वेरियर (2007): 'द बैगा', ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।

उप्रेती, हरिश्चन्द्र (1970): 'भारतीय जनजातियाँ' सं. 1, सामाजिक विज्ञान हिन्दी रचना केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

सिसोदिया, यतीन्द्रसिंह (2000): 'पंचायत राज एवं अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व', रावत पब्लिकेशन, जयपुर।

मेकल मीमांसा

(ISSN-0974-0118)

मेकल मीमांसा: एक परिचय

सन 2009 में आरंभ मेकल मीमांसा इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकण्टक, मध्य प्रदेश द्वारा प्रकाशित डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यूड शोध पत्रिका है | राष्ट्रभाषा हिंदी में प्रकाशित अर्धवार्षिक शोधपत्रिका हेतु ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों से मौलिक शोध प्रकाशन हेतु आमंत्रित किया जाता हैं | शोध पत्रिका का उद्देश्य शोधार्थियों, नीति नियामकों, एवं वाणिज्यिक क्षेत्रों के ज्ञानवर्धन तथा संवर्धन हेतु उपयोगी नवोन्मेषी, मौलिक और नूतन शोध को सामने लाना है | प्रकाशन में उच्च मानकों को बनाए रखने हेतु पत्रिका के लिए एक निर्धारित, वस्तुनिष्ठ ब्लाइंड पीअर रीव्यू पद्धति से शोध पत्रों का चयन किया जाता है |

पत्रिका का उद्देश्य एवं क्षेत्र-

मेकल मीमांसा शोध पत्रिका का मूल उद्देश्य राष्ट्रभाषा हिंदी में गुणवत्तायुक्त मौलिक शोध को सामने लाना है | पत्रिका सैद्धांतिक, अनुप्रयुक्त एवं नीति निर्धारण आदि सभी क्षेत्रों में होने वाले अनुसन्धान को प्रकाशित करने का कार्य करती है | पत्रिका का विशेष आग्रह आदिवासी विकास, संस्कृति एवं जीवन पद्धति आदि से जुड़े स्तरीय, वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक शोध के प्रकाशन के प्रति है |

पत्रिका की सदस्यता हेतु सहयोग राशि

क्रम संख्या	श्रेणी	अवधि	सहयोग राशि रुपयों में
1	संस्थागत सदस्यता हेतु	अर्धवार्षिक	300.00
		वार्षिक	550.00
		आजीवन	5000.00
2	व्यक्तिगत सदस्यता हेतु	अर्धवार्षिक	250.00
		वार्षिक	475.00
		आजीवन	4500.00
3	आन्तरिक व्यक्तिगत सदस्यता एवं शोधार्थियों हेतु	अर्धवार्षिक	200.00
		वार्षिक	350.00
		आजीवन	3250.00

सहयोग राशि का भुगतान ऑनलाइन/बैंक ट्रान्सफर के माध्यम से स्वीकार किया जाता है | बैंक डिटेल हेतु सम्पादकीय टीम से संपर्क किया जा सकता है |

मेकल मीमांसा के जुलाई-दिसम्बर 2020 अंक हेतु शोध पत्र आमंत्रित किए जाते हैं | शोध पत्र मौलिक, वस्तुनिष्ठ एवं ज्ञान के क्षेत्र और समाज तथा संस्कृति के संवर्धन में योगदान करने में सक्षम हों | मौलिकता प्रमाणपत्र एवं अन्यत्र प्रकाशन हेतु नहीं भेजे जाने सम्बंधी घोषणा के साथ दिनांक 30/11/2020 तक शोध पत्र mekalmimansa@igntu.ac.in पर ई-मेल किए जा सकते हैं | विस्तृत निर्देश हेतु हमारी वेबसाइट देखें |

http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीअर रिव्यूड अर्धवार्षिक शोध पत्रिका
वर्ष-12, अंक-01 जनवरी-जून-2020
http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx